कुशीनगर जनपद की कला और पुरातत्व

ART AND ARCHEOLOGY OF KUSHINAGAR DISTRICT

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी0फिल0 उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध
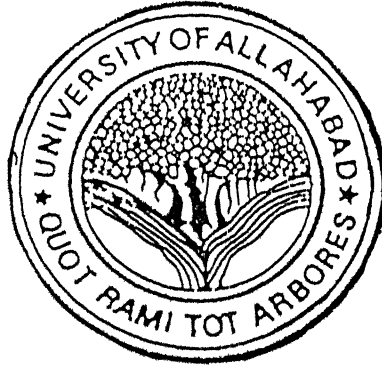
शोधकर्ता
लक्ष्मण प्रसाद

पर्यवेक्षक
प्रो0 जे0एन0 पाल

प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग
इलहाबाद विश्वविद्यालय
इलहाबाद

2002

प्राक्कथन

मानव, अतीत के उन अज्ञात शिल्पियो जिनकी अप्रतिम रचना शक्ति और सहज कलात्मक अभिव्यक्ति के विचित्र आकर्षण के साधन, जो आज पुरावशेष के रूप मे विद्यमान है, उनका क्रमवद्ध इतिहास निरूपण पुरातात्विक साक्ष्यो के माध्यम से किया जा सकता है। यद्यपि वैज्ञानिक विधियो के सहारे पुरातात्विक अनुसधानो मे अभूतपूर्व प्रगति हुई है, तथापि मात्र पुरातात्विक साक्ष्यो के माध्यम से पुरातत्व का अध्ययन बहुत दुष्कर कार्य है।

प्राचीन भारतीय इतिहास के निर्माण मे पुरातात्विक उपलब्धियो की उपादेयता सर्वमान्य तथ्य है। फलत वे स्थान जहॉ से पुरातात्विक सामग्रियॉ प्राप्त होती है, इतिहास एव सस्कृति के अध्येयताओ तथा अनुसधानकर्ताओ के लिए सहज आकर्षण के केन्द्र हो जाते है। प्राचीन इतिहास का विद्यार्थी होने के नाते मेरे मन मे भी ऐसे स्थलो एव पुरासामग्रियो के प्रति आर्कषण होना स्वाभाविक है। इसी जिज्ञासावश मैने जनपद् कुशीनगर का गहन सर्वक्षेण कर उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को जानने का प्रयास किया है। यूॅ तो इतिहास का क्षेत्रीय विभाजन उचित नही है और सभव भी नही है, परन्तु क्षेत्रीय अध्ययन लाभकारी होता है क्योकि इससे अस्पष्ट सामान्यीकरण से हटकर इतिहास का ज्ञान और इसकी समझ गहरी होती है। क्षेत्रीय इतिहास से ही एक बडे भौगोलिक इतिहास का पुनर्निर्माण किया जा सकता है और उससे ही बढकर पूरे देश का इतिहास बनता है।

प्रतिनूतन काल के अन्त होते–होते जलवायुगत परिवर्तन और सभवत जनसख्या मे वृद्धि के कारण विन्ध्य क्षेत्र का पाषाण युगीन मानव गगा के मैदान को पहली बार आबाद किया और उसके बाद से इस क्षेत्र मे सस्कृतियो का एक अविच्छिन्न क्रम चलता दिखायी देता है। आखेटक एव सग्रहक प्रधान मध्य पाषाण सस्कृति मध्य गगा के मैदान के पश्चिमी भाग मे और नव पाषाणिक सस्कृति इसके मध्य और पूर्वी भाग मे फली–फूली दिखायी पडती है जबकि ताम्रपाषाणिक और

प्रारम्भिक ऐतिहासिक सस्कृतियॉ इस क्षेत्र के सम्पूर्ण भू—भाग मे विकसति हुई दिखायी देती है।

मेरे शोध क्षेत्र (कुशीनगर जनपद) का इतिहास एव पुरातत्व बहुत अधिक प्राचीन नही दिखायी पडता । मध्य गगा घाटी के अन्य क्षेत्रो की भॉति यहॉ पाषाण युगीन सस्कृतियॉ विकसित हुई नही दिखायी पडती है, जो बरबस हमे यह सोचने के लिए मजबूर कर देती है कि इस जनपद मे इन सस्कृतियो का प्रादुर्भाव ही नही हुआ था फिर यह क्षेत्र और अधिक गहन सर्वेक्षण की अपेक्षा रखता है। यद्यपि इस क्षेत्र मे पुरातात्विक सर्वेक्षण का कार्य 18वी—19वी शताब्दी मे ही प्रारम्भ हो गया था और तब से लेकर आज तक व्यक्तिगत और सस्थागत दोनो तरह के पुरातात्विक कार्य होते रहे है, जिसमे मैने एक नयी कडी जोडने का प्रयास किया है।

यद्यपि भगवान बुद्व और महावीर के परिनिर्वाण स्थल से सम्बधित होने के कारण कुशीनगर जनपद का इतिहास किसी से छिपा नही है। जहॉ तक पुरातात्विक इतिहास की बात है, तो इस दृष्टि से भी यह जनपद अछूता नही है। फिर भी जनपद मे अनेक ऐसे पुरास्थल उपेक्षित पडे है जिनका उत्खनन तो क्या गहन सर्वेक्षण भी नही हुआ है। ऐसी स्थिति मे उपेक्षित एव अप्रकाशित पुरास्थलो की खोज, अभिलेखो, प्रतिमाओ तथा अन्य पुरा—सामाग्रियो का विवरण, प्रकाशन एव उनके सापेक्षिक महत्व का प्रतिपादन अपरिहार्य हो गया है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध 'कुशीनगर जनपद की कला और पुरातत्व इन्ही उद्‌देश्यो की अशत पूर्ति करता है।

मैने न केवल नये पुरास्थलो को ही चिन्हित करने का प्रयास किया है, अपितु पूर्ववर्ती शोधकर्ताओ द्वारा चिन्हित स्थलो को अपने नजरिये से भी देखने का प्रयास किया है कुशीनगर जनपद पर बहुत से शोध—पत्र एव पत्रिकाएँ प्रकाशित हो चुकी है, लेकिन उनका समग्र सकलन एक साथ कही नही मिलता । जन—सामान्य एव विद्वानो मे यह बात अरसे से खटकती रही है, जिसका कुछ हद तक समाधान मैने अपने शोध प्रबन्ध के रूप मे करने का प्रयास किया है।

जनपद मे विकसित सस्कृतियो के विकास के स्वरूप का निर्धारण करना प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य है। छोटी नदियो, नालो, झीलो, तालाबो तथा बडी नदियो की उपत्यकाओ मे फली–फूली सस्कृतियो के पारस्परिक सम्बन्ध का निर्धारण और इस क्षेत्र की सस्कृतियो के सामाजिक और आर्थिक विकास को निर्धारित करने के उद्देश्य से भी इस शोध विषय का चयन किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध 5 अध्यायो मे विभक्त है। प्रथम अध्याय मे कुशीनगर जनपद की भौगोलिक स्थिति, प्रशासनिक व्यवस्था, जनसख्या, जल–निकास तत्र, पशु जगत वनस्पति जगत, सडक एव रेलमार्ग और अवशिष्ट आदिम जातियो का विवरण प्रस्तुत किया गया है जो पुरातात्विक अध्ययन क्षेत्र की पृष्टभूमि प्रस्तुत करता है। द्वितीय अध्याय मे विभिन्न साहित्यिक, ऐतिहासिक पौराणिक और पुरातात्विक साक्ष्यो के आधार पर इस क्षेत्र का क्रमिक इतिहास प्रस्तुत किया गया है। तृतीय अध्याय मे जनपद मे हुए पूर्ववर्ती पुरातात्विक उत्खननो एव सर्वेक्षणो से प्राप्त पुरासामग्रियो का विशद वर्णन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। चतुर्थ अध्याय मे शोधार्थी द्वारा जनपद मे किये गये पुरातात्विक सर्वेक्षण से ज्ञात स्थलो एव उनसे प्राप्त पुरासामग्रियो तथा कलाकृतियो आदि का यथेष्ट विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यद्यपि कुछ स्थल ऐसे है जिनके विषय मे पहले से कुछ सूचना थी, किन्तु शोधार्थी ने पुन उनका सर्वेक्षण कर उनके विषय मे उपलब्ध सम्पूर्ण विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। पॉचवे अध्याय मे शोध प्रबन्ध का सार एव निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है। अन्त मे सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची सलग्न है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध प्रख्यात पुरातत्वविद् एव कला–मनीषी परम आदरणीय गुरूवर प्रो0 जे0 एन0 पाल के निर्देशन मे सम्पन्न हुआ। उनके विचार–विमर्श एव मार्गदर्शन से लाभान्वित होने के कारण मै स्वय को भाग्यशाली मानता हूँ। विभिन्न शैक्षणिक कार्यो मे अपनी व्यस्तता के बावजूद उन्होने जिस आत्मीय भाव से प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को अतिम रूप प्रदान किया है, उसके लिए मै उनका हृदय से आभारी हूँ। उनका मुझे सदैव स्नेह, प्रेरणा, प्रोत्साहन एव

मार्ग–दर्शन मिलता रहा है। मै ईश्वर से यही कामना करता हूॅ कि उनका अभिभावकत्व एव स्नेह आजीवन मिलता रहे। मै उनके प्रति सादर नतमस्तक हूॅ।

मै उन समस्त गुरूजनो, मित्रो एव शुभ–चिन्तको के प्रति आभारी हूॅ जिनके सहयोग, स्नेह, प्रेरणा और प्रोत्साहन से प्रस्तुत शोध कार्य सम्पन्न हो सका। मै उन सभी पुरातत्वविदो एव विद्वानो का विशेष आभारी हूॅ जिनके उद्धरण प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की रचना मे सहायक एव उपयोगी सिद्व हुए है।

विभागाध्यक्ष आदरणीय गुरूवर प्रो0 ओम प्रकाश का स्नेहिल आशीर्वाद, प्रेरणा, प्रोत्साहन एव सहयोग निरन्तर प्राप्त होता रहा है, इसके लिए मै सादर नतमस्तक हूॅ तथा कामना करता हूॅ कि वह निरन्तर मिलता रहे।

विभाग के अवकाश प्राप्त गुरूजनो मे प्रो0 बी0 एन0 एस0 यादव, प्रे0 एस0 सी0 भटटाचार्य, प्रो0 वी0 डी0 मिश्र और प्रो0 डी0 मण्डल से प्रेरणा एव प्रोत्साहन निरन्तर मिलता रहा है, इसके लिए मै इन सभी गुरूजनो का हृदय से आभारी हूॅ।

विभाग के गुरूजनो मे प्रो0 आर0 पी0 त्रिपाठी, प्रो0 जे0 एन0 पाण्डेय, प्रे0 जी0 के0 राय, प्रे0 ओमप्रकाश श्रीवास्तव, डा0 यू0 सी0 चटोपाध्याय , डा0 ए0 पी0 ओझा, डा0 सी0 डी0 पाण्डेय, डा0 एच0 एन0 दूबे, डा0 दीप शुक्ला, डा0 पुष्पा तिवारी, डा0 अनामिका राय, डा0 हर्ष कुमार, डा0 पी0 सिन्हा और डा0 शशिकान्त राय से प्राप्त प्रोत्साहन के लिए मै सभी का अतीव आभारी हूॅ।

इस शोध के प्रेरणा स्रोत डा0 मानिक चन्द्र गुप्त का मै आजीवन ऋणी रहूॅगा क्योकि इनके अभूतपूर्व सहयोग एव स्नेहिल आशीष मेरे प्रेरणा स्रोत रहे। इन्होने मुझे इस कार्य के लिए सदैव प्रोत्साहित एव प्रेरित ही नही किया, अपितु अपना बहुमूल्य समय निकालकर उचित मार्ग दर्शन भी किया है। मै उनके प्रति सादर नतमस्तक हूॅ।

मै अपने वरिष्ठ सहयोगी एव मित्र डा0 रामनरेश पाल का विशेष रूप से हृदय से आभारी हूॅ। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को अन्तिम रूप देने मे उनका अतुलनीय योगदान रहा है।

शुभ चिन्तको मे प्रो0 मैनेजर पाण्डेय (जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली), प्रो0 अनिरूद्ध प्रसाद सिह (विभागाध्यक्ष, विधि सकाय, गोरखपुर विश्वविद्यालय), डा0 अवनीश चन्द्र मिश्र, डा0 केशव पाठक (किसान डिग्री कालेज,सेवरही), राजवन्त राव (गोरखपुर विश्वविद्यालय), चन्द्रमौलि शुक्ल (महावीर डिग्री कालेज, पावानगर, फाजिलनगर) अशोक कुमार सिह (निदेशक, राजकीय बौद्ध सग्रहालय, कुशीनगर), कुष्णानन्द त्रिपाठी, (गोरखपुर विश्वविद्यालय), श्री इन्द्रदेव मिश्र, त्रिपिटकाचार्य भिक्षु बुद्धमित्र, भिक्षु सन्तज्ञानेश्वर और श्री शिव कुमार त्रिपाठी ने मुझे सदैव इस कार्य के लिए प्रेरित एव प्रोत्साहित ही नही किया है अपितु अपने–अपने ढग से सहायता भी की है। मै सभी का ह्रदय से आभारी हूँ।

शोध प्रबन्ध हेतु बहुमूल्य विचारो एव सुझावो के लिए प्रो0 राधाकान्त वर्मा (पूर्व विभागाध्यक्ष प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व, एव कुलपति अ0प्र0 सिह विश्विद्यालय रीवा), प्रो0 देशबन्धु पाण्डेय (बनारस हिन्दू विश्विद्यालय, वाराणसी), प्रो0 शैलनाथ चतुर्वेदी एव प्रो0 डी0 एन0 त्रिपाठी (पूर्व विभागाध्यक्ष, प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग, गोरखपुर विश्विद्यालय गोरखपुर) और डा0 जितेन्द्र कुमार (निदेशक, उ0प्र0 राज्य सग्रहालय, लखनऊ) का हार्दिक आभारी हूँ।

विभाग के कर्मचारियो मे डा0 सुशील त्रिवेदी, अनोखे लाल एव सतीश राय से प्राप्त सहयोग के लिए मै आभार व्यक्त करता हूँ। सर्वश्री राजेन्द्र प्रसाद यादव, वी0के0 खत्री और कमलेश कुमार से प्राप्त तकनीकी सहयोग के लिए मै उनका आभारी हूँ। छायाचित्रो के लिए सर्वश्री राजेश कुमार यादव एव सतोष कुमार गुप्त ने जिस लगन और उत्साह से आत्मीय सहयोग प्रदान किया है, मै उनके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

यहॉ उन सभी मित्रो के नामो का उल्लेख कर पाना सभव नही है, जिन्होने सदैव मुझे इस कार्य के लिए प्रोत्साहित ही नही किया, अपितु प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग भी प्रदान किया है, उनके प्रति आभार व्यक्त करना अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ। अभिन्न मित्रो मे हरेन्द्र प्रताप सिह, विनोद कुमार

जायसवाल, अशोक कुमार सिह, बी0डी0जोशी, मनुसिह, दुर्गेश कुमार, मुकेश कुमार वर्मा, निर्मल द्विवेदी, सतीश चन्द्र मिश्र, गौरी शकर मौर्य, अनिल कुमार यादव आदि सभी के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। राधेश, दिनेश, शिव शकर, बृजेन्द्र, आशानन्द के प्रति भी आभार व्यक्त करना अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ। आदरणीया गुरू पत्नी जा मॉ सदृश्य है, से प्राप्त स्नेह एव आशीर्वाद के लिए मै उनके प्रति सादर श्रद्धानत हूँ।
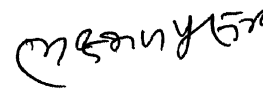
सर्वेक्षण के दौरान पुरास्थलो के समीपस्थ गॉवो के उन अज्ञात व्यक्तियो का मै विशेष आभारी हूँ जिन्होने मुझे सहयोग दिया है।

अन्तत मै अपने परिवारजनो के प्रति आभारी हूँ जिन्होने असीम धैर्य के साथ मेरे मनोबल मे वृद्धि करते हुए मुझे निरन्तर प्रेरणा और सहयोग प्रदान किया है। विशेष कर मै अपने अग्रज परमादरणीय श्री मैनेजर गुप्त के प्रति आभारी हूँ जिन्होने जीवन के अनेक झझावतो को सहन करते हुए न केवल मेरी खुशी मे ही अपने सुखो का अनुभव किया अपितु उच्च अध्ययन के लिए सदैव सत्प्रेरणा प्रदान किया, के चरणो मे सादर नतमस्तक हूँ। सगीता, सारिका, रजीता, विकी, सरोज, रिकी के प्रति भी मै आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होने येन केन प्रकारेण इस कार्य मे मेरी मदद की है।

अपनी जीवन सगिनी श्रीमती सीमा गुप्ता के प्रति भी आभार प्रकट करना चाहूँगा जिन्होने घर गृहस्थी के अर्न्तजाल से मुझे सर्वथा निश्चिन्त रखा।

इस शोध प्रबन्ध के शुद्ध एव व्यवस्थित टकण के लिए मै अपने युवा एव कर्मठ मित्र श्री ओम प्रकाश गुप्त के प्रति आभार एव, कृतज्ञता ज्ञापित करना अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ जिन्होने हार्दिक रूचि लेकर अत्यन्त कम समय मे यह कार्य पूर्ण किया।

दिनाक 15—12—2002 लक्ष्मण प्रसाद

रेखा चित्रों एवं तालिकाओं की सूची

रेखा चित्र 1	कुशीनगर जनपद का रेखाचित्र
रेखा चित्र 2	कुशीनगर साइट प्लान
रेखा चित्र 3	बुद्ध की महापरिनिर्वाण प्रतिमा
रेखा चित्र 4	जनपद कुशीनगर के पुरास्थल
रेखा चित्र 5	जैन तीर्थकर की प्रस्तर प्रतिमा, देवरहा (छावनी, पडरौना)
तालिका 1	जनपद मे सिचाई का तुलनात्मक विवरण
तालिका 2	जनपद के पुरातात्विक स्थल (तहसीलवार) एव उनकी स्थिति

छायाचित्रो की सूची

छायाचित्र सख्या – 1 मुख्य स्तूप, कुशीनगर।
छायाचित्र सख्या – 2 बुद्ध का महापरिनिर्वाण मदिर, कुशीनगर।
छायाचित्र सख्या – 3 कुशीनगर के खण्डहर का विहगम दृश्य।
छायाचित्र सख्या – 4 बुद्ध की भूमि,स्पर्श मुद्रा मे प्रतिमा, कुशीनगर।
छायाचित्र सख्या – 5 रामाभार स्तूप, कुशीनगर।
छायाचित्र सख्या – 6 तीन स्तूप युक्त मिट्टी की मुहर (राजकीय बौद्ध सग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।
छायाचित्र सख्या – 7 डिजाइनदार ठप्पा (राजकीय बौद्ध सग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।
छायाचित्र सख्या – 8 ध्यानावस्थित बुद्ध की मुहर (राजकीय बौद्ध सग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।
छायाचित्र सख्या – 9 तीन ईटो से निर्मित ध्यानी उपासक (राजकीय बौद्ध सग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।
छायाचित्र सख्या – 10 काले पत्थर की सिररहित भूमि स्पर्श मुद्रा मे बुद्ध की प्रतिमा (राजकीय बौद्ध सग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।
छायाचित्र सख्या – 11 हस्ति एव अश्व की मृण्मूर्ति (राजकीय बौद्ध सग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।
छायाचित्र सख्या – 12 हारीति की मृण्मूर्ति (राजकीय बौद्ध सग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।
छायाचित्र सख्या – 13 महापरिनिर्वाण विहार अभिलिखित मुहर (सौजन्य से, बुद्धमित्र)।
छायाचित्र सख्या – 14 मुकुटबन्धन विहार अभिलिखित मिट्टी की मुहर जिसमे शीर्ष पर बुद्ध की जलती हुई चिता तथा प्रार्थनारत महाकश्यप को दिखाया गया है। (सौजन्य से, बुद्धमित्र)।
छायाचित्र सख्या – 15 देवी की सेवा करते हुए दासियो की मृण्मूर्ति (सौजन्य से, बुद्धमित्र)।
छायाचित्र सख्या – 16 मिट्टी के फलक पर बुद्ध के जन्म का दृश्य (उत्तर प्रदेश राज्य सग्रहालय, लखनऊ के सौजन्य से)।
छायाचित्र सख्या – 17 सठियॉव से प्राप्त नारी की मृण्मूर्ति (प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व, विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय के सौजन्य से)।
छायाचित्र सख्या – 18 फाजिल नगर से प्राप्त अलकरित मृण्मूर्तिया मूर्ति (प्राचीन इतिहास,सस्कृति एव पुरातत्व, विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय के सौजन्य से)।

छायाचित्र सख्या– 19 ब्राह्मी मे श्रेष्ठिग्रामाग्रहारस्य अकित मिट्टी की मुहर, गुप्तकालीन (प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व, विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय के सौजन्य से)।

छायाचित्र सख्या–20 गुप्तकालीन अलकृत ईंटे उस्मानपुर (प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व, विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय के सौजन्य से)।

छायाचित्र सख्या–21 शक, कुषाण तथा पह्लव कालीन मृण्मूर्तिया (प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व, विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय के सौजन्य से)।

छायाचित्र सख्या– 22 गगुआ टीले का विहगम दृश्य।

छायाचित्र सख्या–23 काले प्रस्तर की उमा–माहेश्वर की आलिगन मुद्राआ मे प्रतिमा।

छायाचित्र सख्या– 24 नवग्रह की खण्डित प्रस्तर प्रतिमा, शिव सरेया।

छायाचित्र सख्या– 25 काले प्रस्तर की वामन मूर्ति शिव सरेया।

छायाचित्र सख्या– 26 चतुर्भुजी विष्णु की वैकुण्ठ प्रतिमा, सरेयॉ।

छायाचित्र सख्या– 27 मातृ–शिशु की प्रतिमा– सरेयॉ।

छायाचित्र सख्या– 28 काले पत्थर की सूर्य प्रतिमा, सियरहा।

छायाचित्र सख्या– 29 एकमुखी शिवलिग, प्रतिमा, सियरहॉ।

छायाचित्र सख्या– 30 नृत्यरत चतुर्भुजी गणेश, सियरहॉ।

छायाचित्र सख्या–, 31 माहेश्वर की आलिगन मुद्रा मे प्रतिमा, पुरैना कटेया।

छायाचित्र सख्या– 32 शिशु को दूध पिलाती स्त्री की प्रतिमा, पुरैना कटेया।

छायाचित्र सख्या– 33 देवरिया वृत के स्तूपाकार, ईंट निर्मित टीले का विहगम दृश्य।

छायाचित्र सख्या– 34 धारमढियॉ टीले का विहगम दृश्य।

छायाचित्र सख्या– 35 बालुए पत्थर से निर्मित षोडसभुजी गणेश प्रतिमा, उजारनाथ।

छायाचित्र सख्या– 36 मंदिर मे स्थापित चतुर्भुजी पार्वती की प्रतिमा, उजारनाथ।

छायाचित्र सख्या– 37 अष्टभुजी विष्णु की प्रतिमा, सपही खास।

छायाचित्र सख्या– 38 बलुआ पत्थर से निर्मित गुप्तयुगीन सूर्य की प्रतिमा, तुर्कपट्टी ।

छायाचित्र सख्या– 39 काले पत्थर से निर्मित पाल युगीन सूर्य की प्रतिमा, तुर्कपट्टी।

छायाचित्र सख्या– 40 सपही टडवॉ से प्राप्त अरबी लेखयुक्त ताम्रसिक्के।

छायाचित्र सख्या– 41 फाजिलनगर के टीले का विहगम दृश्य।

छायाचित्र सख्या– 42 सठियॉव टीले का विहगम दृश्य।

छायाचित्र सख्या– 43 खॉचेदार मिट्टी का लोढा, नदवॉ।

छायाचित्र सख्या– 44 अलकृत, लटकन, नदवॉ।

छायाचित्र सख्या– 45 अलकृत, दो कलश नदवॉ।

छायाचित्र सख्या– 46–51 नारी एव पुरुष की विविध खण्डित मृण्मूर्तियॉ, नदवॉ।

छायाचित्र सख्या– 52 मृण्मूर्तिया के खण्डित पैर, नदवॉ।

छायाचित्र सख्या– 53 बलुये पत्थर से निर्मित चामुण्डा देवी की प्रतिमा, बेईली।

छायाचित्र सख्या – 54 अष्टपदीय वृत्ताकार स्तूप, धनहॉ।

छायाचित्र सख्या – 55 काले पत्थर की ब्रह्म की मूर्ति, बकुलहर ।

छायाचित्र सख्या – 56 उस्मानपुर (वीरभारी) के टीले का विहगम दृश्य ।

छायाचित्र सख्या – 57 ईंट निर्मित वर्गाकार स्तूप, सुमही बुजुर्ग।

छायाचित्र सख्या – 58 सूर्य प्रतिमा, छहूँ ।

छायाचित्र सख्या – 59 छ शिशुओ के साथ मॉ वारा की प्रतिमा, छहूँ ।

छायाचित्र सख्या –60 महापरिनिर्वाण स्तूप, कुशीनगर।

छायाचित्र सख्या – 61 हत्थायुक्त कडाही, खिलौना गाडी, स्पिन्कलर पहियॉ, रस्सीछाप घडे का टुकडा, बलडीह।

छायाचित्र सख्या – 62 रस्सी के छाप युक्त मृद्भाण्ड, बलडीहा।

छायाचित्र सख्या – 63 कैरिनेटेड हाडी, वडगॉव ।

छायाचित्र सख्या – 64 स्तूपाकार टीला, देवरहा।

छायाचित्र सख्या – 65 वनमोर्चा से प्राप्त ईटो से निर्मित चौडी दीवारे ।

छायाचित्र सख्या – 66 पपउर टीले का विहगम दृश्य ।

विषय-सूची

प्राक्कथन		II-VII
रेखाचित्रो एव तालिकाओ की सूची		VIII
छायाचित्रो की सूची		IX-XI
अध्याय 1	कुशीनगर जनपद का भौगोलिक परिदृश्य स्थिति, तहसील, प्राकृतिक अवस्था, जलवायु, नदियॉ, झीले और तालाब तथा आदिम जातियॉ	1-47
अध्याय 2	कुशीनगर जनपद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि साहित्यिक विवरणो, अभिलेखो, मुद्राओ और स्मारको के आधार पर	48-114
अध्याय 3	कुशीनगर जनपद मे पूर्ववर्ती पुरातात्विक अनुसधानो का विवेचन	115-153
अध्याय 4	कुशीनगर जनपद मे पुरातात्विक अन्वेषण और कला अवशेषो का अध्ययन	154-203
अध्याय 5	उपसहार	204-209
	सन्दर्भ-सूची	210-222
	छाया चित्र	

अध्याय–1

कुशीनगर जनपद का भौगोलिक परिदृश्य

मानव के सास्कृतिक विकास पर भौगोलिक परिस्थितियो का बहुत अधिक प्रभाव पडता है। प्रागैतिहासिक काल मे जब मानव के भौतिक और सास्कृतिक उपादान बहुत कम थे, पृथ्वी तल पर घटित होने वाली भौगोलिक घटनाओ का उसके जीवन पर अत्यधिक प्रभाव पडा। उदाहरण के लिए प्रतिनूतन काल के जलवायु सम्बधी तीव्र उतार–चढावो के साथ मानव के विकास का इतिहास अभिन्न रूप से जुडा हुआ है । वनस्पति, जीव–जन्तु तथा पृथ्वी तल पर प्रवाहित होने वाले जल की मात्रा का पुरातात्विक अध्ययन के लिए ज्ञान नितान्त आवश्यक है। मानव के सन्निवेश (settlement pattern) सम्बधी अध्ययन के लिए भौगोलिक ज्ञान आवश्यक है। जनसख्या का वितरण, ससाधनो के दोहन आदि के अध्ययन के लिए भूगोल का ज्ञान अपेक्षित है।

इस प्रकार किसी क्षेत्र के इतिहास के निर्धारण मे भूगोल के अध्ययन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पुरातत्व बहुत कुछ उस क्षेत्र के भूगोल पर आधारित होता है। भूगोल के ज्ञान के बिना पुरातत्व का अध्ययन अपूर्ण है। सुब्बाराव[1] के अनुसार भारत मे सास्कृतिक विकास की पद्धति को स्पष्ट रूप से समझने के लिए भौगोलिक कारको का ज्ञान होना चाहिए। अत इस अध्याय मे जनपद के भौगोलिक विशेषताओ का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

कुशीनगर पहले देवरिया जनपद का एक हिस्सा था। 13 मई 1994 ई0 को तत्कालीन शासन द्वारा जनपद देवरिया के उत्तरी भाग को अलग करके एक नये जनपद के रूप मे 'जनपद पडरौना' का सृजन किया गया। 19 जून 1997

---

[1] बी0 सुब्बाराव, *द पर्सनालिटी ऑफ इण्डिया* (द्वितीय सस्करण), बडौदा, 1958, पृष्ठ 8।

ई0 को तत्कालीन मुख्यमत्री द्वारा जनपद का नाम महात्मा बुद्ध की निर्वाण–स्थली कुशीनगर के नाम पर पडरौना से कुशीनगर कर दिया गया। जनपद का मुख्यालय पडरौना है तथा यह गोरखपुर मण्डल का अग है।

स्थिति

कुशीनगर उत्तर प्रदेश के उत्तर–पूर्व मे 26^0 35′ से 27^0 18′ उत्तरी अक्षाश तथा 83^0 32′ से 84^0 26′ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है।[1] इस जनपद के दक्षिण–पश्चिम मे गोरखपुर, पश्चिम मे महाराजगज, दक्षिण मे देवरिया, उत्तर मे नेपाल तथा उत्तर–पूर्व मे बिहार प्रदेश के पश्चिमी चम्पारण एव गोपालगज जिले इसकी सीमाओ का निर्धारण करते है। बडी गण्डक और उसकी शाखा बॉसी नदी इस जिले की उत्तरी–पूर्वी सीमा निर्धारित करती है, जो इसे बिहार प्रदेश से अलग करती है। छोटी गण्डक नदी और मझना नाला जिले की लगभग तीन चौथाई पश्चिमी तथा दक्षिणी–पश्चिमी सीमा निर्धारित करती है और इसे महाराजगज तथा गोरखपुर जनपद से अलग करती है। (रेखाचित्र सख्या–1)। भौगोलिक दृष्टि से यह जनपद हिमालय की तराई–अचल के पूर्वी भाग मे स्थित है तथा विशाल सिधु–गगा के मैदान का छोटा सा हिस्सा है।

1991 की जनगणना के अनुसार जनपद का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 2873 5 वर्ग किलोमीटर है।[2] क्षेत्रफल की दृष्टि से इस जिले का राज्य मे 44 वॉ स्थान है जो प्रदेश का 1 6 प्रतिशत एव मण्डल का 24 52 प्रतिशत है। पश्चिम (सुकरौली) से पूर्व (पिपरा घाट) इस जनपद की लम्बाई लगभग 80 किलोमीटर तथा उत्तर (मरिचहवा) से दक्षिण (कसया) लगभग 70 किमी0 है।[3]

जनपद कुशीनगर मे कुल चार तहसीले (पडरौना, हाटा, कसया तथा तमकुहीराज), 14 विकास खण्ड, 1 नगर पालिका परिषद, 6 नगर पचायत, 140

---

[1] वरूण, डी0पी0,1988, *गजेटियर्स ऑफ इण्डिया उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक्ट देवरिया,* पृष्ठ 1 के आधार पर शोधार्थी द्वारा निर्धारण।

[2] *सामाजार्थिक समीक्षा, जनपद कुशीनगर,* 2000–2001, पृष्ठ 2।

[3] शर्मा, चन्द्रिका प्रसाद, 1998, *कुशीनगर का भौगोलिक परिचय,* गोरखपुर, पृष्ट 14।
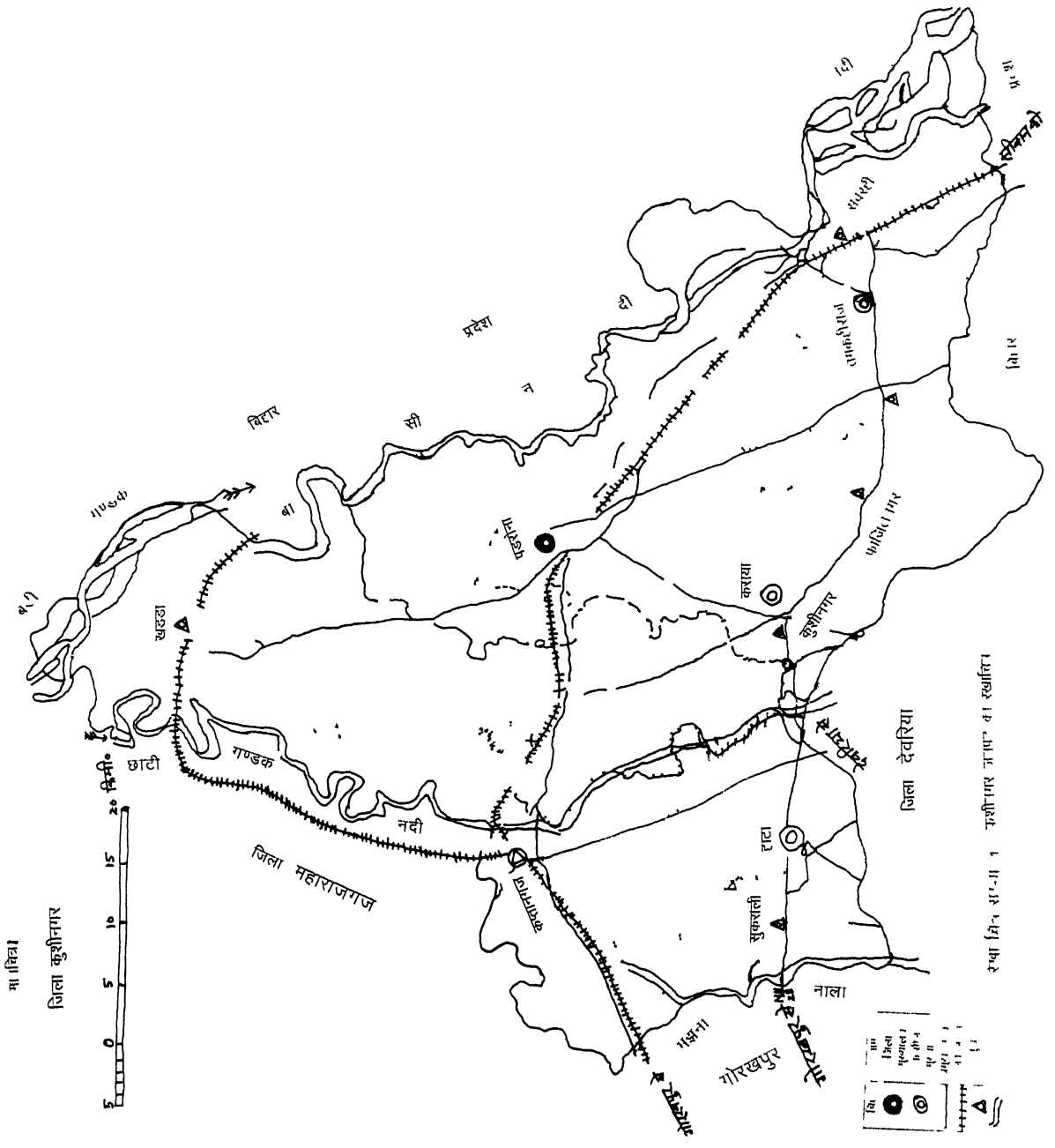
Location of Kushinagar in U.P. and India. 9

न्याय पचायत, 957 ग्राम पचायत तथा 1638 ग्राम है। आबाद ग्रामो की सख्या 1 567 तथा गैर आबाद ग्रामो की सख्या 71 है। जनपद मे कुल 17 पुलिस स्टेशन (शहरी–7, ग्रामीण–10), 15 सिनेमा घर (शहरी–12, ग्रामीण–3), 213 डाकघर (नगरीय–10, ग्रामीण–203), 105 बस स्टेशन (नगरीय–7, ग्रामीण–98), 18 रेलवे स्टेशन (नगरीय–5, ग्रामीण–13) तथा 43 राष्ट्रीयकृत बैक शाखाएँ है।[1]

कुशीनगर जनपद सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश राज्य के सघनतम आबादी वाले जिलो मे से एक है। यद्यपि यह जनपद क्षेत्रफल की दृष्टि से प्रान्त मे 44 वे स्थान पर है, लेकिन जनसख्या की दृष्टि से इसका स्थान 22 वॉ है। उल्लेखनीय है कि यह सघन जनसख्या जनपद के बडे नगरो के कारण नही अपितु ग्रामीण जनसख्या के सघनता के कारण है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार जनपद की कुल जनसख्या 28,91,933 (राज्य का 1 74 प्रतिशत) है, जिनमे 27,59,414 ग्रामीण तथा 1,32,529 नगरीय जनसख्या निवास करती है। पुरूषो की जनसख्या 14,74,884 तथा महिलाओ की जनसख्या 14,17,049 है। जनसख्या मे दशकीय .वृद्धि दर 28 17 प्रतिशत रही। जनपद का जनसख्या घनत्व 994 व्यक्ति प्रति किलोमीटर है, जो प्रदेश मे 12 वॉ स्थान रखता है। स्त्री–पुरूष अनुपात 961 / 1000 है। जिले की कुल साक्षरता दर 48 43 % (कुल 11, 25, 939) है, जिनमे पुरूषो की साक्षरता दर 65 35 प्रतिशत (कुल 7,74,171) तथा महिलाओ की साक्षरता दर 30 85 प्रतिशत (कुल 3,51,768) है।[2]

तहसीले

कुशीनगर जिले मे वर्तमान समय मे 4 तहसीले है – पडरौना, हाटा, तमकुहीराज (सृजन वर्ष 1987) और कसया (सृजन वर्ष 1995)। जनपद के दक्षिण–पश्चिम मे हाटा तहसील, दक्षिण–पूर्व मे तमकुहीराज तथा दक्षिण मे कसया

---

[1] *विकास पुस्तिका, कुशीनगर,* 2001–02

[2] जनगणना निदेशालय भारत सरकार, गृह मत्रालय अ0शा0 पत्राक सीटी 833/D C O U P / 73 - 2001

तहसील है। इन तीनो तहसीलो से तीन ओर से घिरा पडरौना तहसील जिले के मध्य मे है, जो जिले की पूर्वोत्तर सीमा पर स्थित है।

पडरौना तहसील

यह तहसील जिले के केन्द्रीय और उत्तरी–पूर्वी भाग से मिलकर बनी है। इसके उत्तर तथा पूर्व मे बिहार प्रदेश, पश्चिम मे महाराजगज जिला एव हाटा तहसील, दक्षिण मे कसया तहसील तथा दक्षिण–पूर्व मे तमकुहीराज तहसील है। इसके उत्तरी और पूर्वी भाग मे बडी गण्डक और उसकी शाखा बॉसी नदी इसको बिहार प्रदेश से तथा पश्चिमी भाग मे छोटी गण्डक नदी इसको महाराजगज जिले से अलग करती है। इसका क्षेत्रफल 1040 10 वर्ग किलोमीटर तथा जनसख्या 6,50,106 है। तहसील के कुल ग्रामो की सख्या 560 है जिनमे आबाद ग्रामो की सख्या 512 तथा गैर आबाद ग्रामो की सख्या 48 है।

हाटा तहसील

यह तहसील जिले के दक्षिण–पश्चिम मे स्थित है। इसके दक्षिण मे देवरिया जिला, पश्चिम मे गोरखपुर जिला, उत्तर–पूर्व मे पडरौना तहसील तथा महाराजगज जिला एव दक्षिण पूर्व मे कसया तहसील स्थित है इसके पश्चिमी भाग मे मझना नाला इसको गोरखपुर जनपद से अलग करता है। इसका क्षेत्रफल 79,802 हेक्टेयर तथा जनसख्या 8,11,625 है। हाटा तहसील के कुल ग्रामो की सख्या 403 है, जिनमे आबाद ग्रामो की सख्या 400 तथा गैर आबाद ग्रामो की सख्या 3 है।

तमकुहीराज तहसील

यह तहसील जिले के दक्षिण–पूर्व मे स्थित है। इसके उत्तर–पश्चिम मे पडरौना तहसील, दक्षिण–पश्चिम मे कसया तहसील, उत्तर–पूर्व मे बिहार प्रदेश का पश्चिमी चम्पारन जिला तथा दक्षिण–पूर्व मे गोपालगज जिला स्थित है। उत्तर–पूर्व मे बडी गण्डक और उसकी सहायक बॉसी नदी इसको बिहार प्रदेश से अलग करती है। इसका क्षेत्रफल 65,311 हेक्टेयर तथा जनसख्या 6,55,184 है।

तहसील के कुल ग्रामो की सख्या 377 है, जिनमे आबाद ग्रामो की सख्या 359 तथा गैर आबाद ग्रामो की सख्या 18 है।

कसया तहसील

इस तहसील का निर्माण जनपद के गठन के बाद 25 मार्च 1995 ई0 मे पडरौना तहसील के 91 ग्राम, तमकुहीराज तहसील के 134 ग्राम तथा हाटा तहसील के 59 ग्रामो को मिलाकर किया गया। यह जिले के दक्षिणी भाग मे स्थित है । इसके दक्षिण–पश्चिम मे देवरिया जिला और हाटा तहसील, उत्तर–पूर्व मे तमकुहीराज एव पडरौना तहसील तथा दक्षिण–पूर्व मे बिहार प्रदेश का गोपालगज जिला स्थित है। इसका क्षेत्रफल 46,739 862 हेक्टेअर तथा जनसख्या 4,08,991 है। तहसील के कुल गॉवो की सख्या 298 है, जिनमे आबाद ग्रामो की सख्या 286 तथा गैर आबाद ग्रामो की सख्या 12 है।

विकास खण्ड[1]

1 कप्तानगज

यह हाटा तहसील के अन्तर्गत आता है। इसके उत्तर और पश्चिम मे महाराजगज और गोरखपुर जिला, पूर्व मे रामकोला विकास खण्ड तथा दक्षिण मे मोतीचक एव सुकरौली विकास खण्ड है। छोटी गण्डक नदी इसकी पूर्वी सीमा बनाते हुए इसे रामकोला से अलग करती है। इसका क्षेत्रफल 185 5 वर्ग कि मी तथा जनसख्या 1,54,009 है, जिसमे महिलाये 73,731 और 95 ग्राम है।

2 रामकोला

यह भी हाटा तहसील के अन्तर्गत आता है। इसके उत्तर–पश्चिम मे महाराजगज जिला, उत्तर मे नेबुआ नौरगिया विकास खण्ड, उत्तर–पूर्व मे विशुनपुरा विकास खण्ड, पूर्व मे पडरौना, दक्षिण मे हाटा, दक्षिण–पश्चिम मे मोतीचक तथा पश्चिम मे कप्तानगज विकास खण्ड स्थित है। छोटी गण्डक इसकी पश्चिमी सीमा

---

[1] विकासखण्ड के सभी आकडे 1991 की जनगणना पर आधारित है जो साख्यिकीय पत्रिका, जनपद–कुशीनगर, 2001, राज्य नियोजन सस्थान, उ0प्र0 से उद्धृत है।

के साथ बहती है। इसका क्षेत्रफल 188 7 वर्ग कि मी है तथा जनसख्या 1,67,105 है, जिनमे महिलाएँ 80107 और 69 ग्राम है।

3 मोतीचक

इसके उत्तर–पश्चिम मे कप्तानगज, उत्तर–पूर्व मे रामकोला, दक्षिण–पूर्व मे हाटा तथा दक्षिण पश्चिम मे सुकरौली ब्लॉक स्थित है। यह हाटा तहसील के अन्तर्गत आता है। छोटी गण्डक इसकी पूर्वी सीमा के समानान्तर सीमा के अन्दर बहती है। इसका क्षेत्रफल 163 3 वर्ग किमी तथा जनसख्या 1,32,663 है, जिसमे महिलाएँ 65,062 और 83 ग्राम है। एक ग्राम गैर आबाद है।

4 सुकरौली

यह जिले के दक्षिण–पश्चिम मे स्थित है। इसके पश्चिम मे गोरखपुर, दक्षिण मे देवरिया जनपद, उत्तर मे कप्तानगज, पूर्व मे मोतीचक एव हाटा ब्लॉक स्थित है। मझना नाला इसके पश्चिम सीमा को गोरखपुर से अलग करता है। इसका क्षेत्रफल 155 4 वर्ग किमी तथा जनसख्या 1,33,402 है जिसमे महिलाएँ 65,150 और 105 ग्राम है।

5 हाटा

इसके उत्तर मे मोतीचक और रामकोला, पश्चिम मे सुकरौली, पूर्व मे कसया और पडरौना ब्लॉक तथा दक्षिण मे देवरिया जनपद स्थित है। इसके बीच से होकर उत्तर–पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर छोटी गण्डक नदी बहती है जो देवरिया को चली जाती है। इसका क्षेत्रफल 167 42 वर्ग किमी तथा जनसख्या 147045 है, जिसमे महिलाएँ 72,094 और 110 ग्राम है।

6 खड्डा

यह जनपद के उत्तरी भाग मे स्थित है। इसके उत्तर–पूर्व मे बिहार प्रदेश का पश्चिमी चम्पारन जिला तथा पश्चिम मे महाराजगज जिला स्थित है। दक्षिण मे नेबुआ नौरगिया तथा विशुनपुरा ब्लॉक है। बडी गण्डक तथा उसकी

सहायक बॉसी नदी उत्तर–पूर्व मे इसकी सीमा बनाती है और इसको बिहार प्रदेश के पश्चिमी चम्पारन जिला से अलग करती है। पश्चिम मे छोटी गण्डक इसको महाराजगज जिले से अलग करती है। इसका क्षेत्रफल 323 8 वर्ग किमी0 तथा जनसख्या 1,58,044 है जिसमे महिलाएँ 74,413 और 143 ग्राम है, जिनमे 26 गैर आबाद है।

7 नेबुआ नौरगिया

इसके पश्चिम मे महाराजगज जिला, उत्तर मे खड्डा, पूर्व मे विशुनपुरा तथा दक्षिण मे रामकोला ब्लॉक स्थित है। इसके पश्चिमी सीमा का निर्माण छोटी गण्डक नदी करती है जो इसको महाराजगज जिले से अलग करती है। इसका क्षेत्रफल 211 3 वर्ग किमी0 तथा जनसख्या 136557 है जिसमे महिलॉए 65,194 और 115 ग्राम है, जिनमे 4 गैर आबाद है।

8 विशुनपुरा

इसके उत्तर मे खड्डा, दक्षिण मे पडरौना, पश्चिम मे नेबुआ नौरगिया तथा रामकोला ब्लॉक तथा पूर्व मे बिहार प्रदेश का चम्पारन जिला स्थित है। बॉसी नदी इसकी पूर्वी सीमा बनाती है तथा इसको बिहार प्रदेश से अलग करती है। इसका क्षेत्रफल 217 7 वर्ग किमी0 तथा जनसख्या 1,55,132 है, जिसमे महिलाएँ 73,833 और 144 ग्राम है, जिनमे 11 गैर आबाद है।

9 पडरौना

यह उत्तर मे विशुनपुरा, पश्चिम मे रामकोला व हाटा, दक्षिण मे कसया, दक्षिण–पूर्व मे तमकुही व दुधई ब्लॉक तथा उत्तर–पूर्व मे बिहार प्रदेश के पश्चिम चम्पारन जिला से घिरा हुआ है। उत्तर–पूर्व मे इसके सीमा का निर्माण बॉसी नदी करती है तथा इसको पश्चिमी चम्पारन जिले से अलग करती है। इसका क्षेत्रफल 295 34 वर्ग किमी0 तथा जनसख्या 274919 है जिसमे महिलाएँ 1,31,567 और 181 ग्राम है, जिनमे 7 गैर आबाद है।

10 कसया

इसके उत्तर मे पडरौना, पश्चिम मे हाटा, दक्षिण तथा दक्षिण–पश्चिम दिशा मे देवरिया जिला तथा पूर्व एव दक्षिण पूर्व मे तमकुही एव फाजिलनगर ब्लॉक स्थित है। इसका क्षेत्रफल 120 3 वर्ग किमी0 तथा जनसख्या 1,09,832 है जिसमे महिलाएँ 5,30,92 और 78 ग्राम है, जिनमे 4 ग्राम गैर आबाद है।

11 दुधई

इसके पूर्व तथा उत्तर–पूर्व मे बिहार प्रदेश, दक्षिण पूर्व मे सेवरही, दक्षिण–पश्चिम मे तमकुहीराज तथा उत्तर–पश्चिम मे पडरौना विकास खण्ड स्थित है इसके उत्तरी–पूर्वी सीमा का निर्माण बडी गण्डक नदी करती है तथा इसको बिहार से अलग करती है। इसका क्षेत्रफल 226 7 वर्ग किमी0 तथा जनसख्या 1,71,998 है, जिसमे महिलाएँ 83,102 और 91 ग्राम है।

12 फाजिलनगर

यह दक्षिण–पश्चिम तथा उत्तर–पश्चिम मे कसया, पूर्व तथा उत्तर–पूर्व मे तमकुहीराज ब्लाक तथा दक्षिण–पूर्व मे देवरिया जिला व बिहार प्रदेश से घिरा है। इसका क्षेत्रफल 178 8 वर्ग किमी0 तथा जनसख्या 141652 है, जिसमे महिलाये 70963 और 126 ग्राम है, जिनमे 4 गैर आबाद है।

13 तमकुही

यह पूर्व मे सेवरही, उत्तर–पूर्व मे दूदही, पश्चिम मे कसया व फाजिलनगर तथा उत्तर–पश्चिम मे पडरौना ब्लॉक और दक्षिण मे बिहार प्रदेश के गोपालगज जिला से घिरा है। इसका क्षेत्रफल 199 1 वर्ग किमी0 तथा जनसख्या 1,71,968 है, जिसमे महिलाये 85,862 और 164 ग्राम है, जिनमे 9 गैर आबाद है।

14 सेवरही

यह पूर्व, उत्तर–पूर्व तथा दक्षिण मे बिहार प्रदेश से तथा पश्चिम मे तमकुहीराज और उत्तर–पश्चिम मे दुदही ब्लाक से घिरा है। इसके पूर्वोत्तर सीमा का निर्माण बडी गण्डक नदी करती है और इसको बिहार से अलग करती है। इसका

क्षेत्रफल 239 6 वर्ग किमी0 तथा जनसख्या 1,61,194 है, जिसमे महिलाये 88,871 और 130 ग्राम है, जिनमे 8 गैर आबाद है।

प्राकृतिक अवस्था

स्थलाकृति (**Topography**)

धरातल की बनावट हर जगह एक जैसी नही होती। कही उपजाऊ भूमि पायी जाती है तो कही ऊसर बजर भूमि। कही नदियो की ऊॅची नीची भूमि और जगल ही जगल पाये जाते है, तो कही पहाडी भूमि। एक जैसे प्राकृतिक दशाओ वाले भाग को अलग करके उस क्षेत्र को विभिन्न प्राकृतिक भागो मे विभाजित किया जाता है।

कुशीनगर जनपद सिधु–गगा मैदान के जलोढ मिट्टी के महीन कणो से निर्मित एक लघु भाग है। यह बडी गण्डक, छोटी गण्डक तथा इनकी शाखाओ द्वारा लायी गयी जलोढ मिट्टी के जमाव का प्रतिफल है। कुशीनगर जनपद का सम्पूर्ण क्षेत्र मूलत एक समतल मैदान है जिसकी सामान्य ढाल उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पूर्व की ओर है। इसलिए बडी एव छोटी सभी नदियॉ और नाले इसी दिशा मे बहते है। इसका धरातल बडी गण्डक तथा छोटी गण्डक द्वारा निर्धारित है। इन नदियो की शाखाऍ अनेक ऊॅची–नीची भूमि, झील, बाढ क्षेत्र आदि स्वरूप धरातल पर निर्मित की है। जनपद के उत्तरी भाग मे तीव्र ढाल है जिसकी दिशा उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पूर्व की ओर है। समतल मध्यवर्ती भाग मे कही कही रेत के टीले है जिन्हे स्थानीय भाषा मे धूस कहते है। मात्र बडी गण्डक को छोडकर जनपद की शेष नदियो का जल सरयू (घाघरा नदी) मे मिलता है। जनपद अपने भूमाकार मे प्रकृतित एक द्रोणी के रूप मे होने के कारण वर्षा के जल को अपने भूमि से बाहर नही निकाल पाता और भूमि का बहुत बडा भाग महीनो तक जलमग्न रहता है। बडी गण्डक और छोटी गण्डक अपनी सहायिकाओ के साथ कमश

पूर्वोत्तर और कुछ दूरी तक पश्चिमी सीमा का निर्माण करती है और स्थलाकृति के निर्धारण मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जनपद का एक बडा भाग गण्डक द्वारा लायी गयी जलोढ मिट्टी का बना है, जिसे 'भाठ' के नाम से जाना जाता है।[1]

यह नदी के समय–समय पर स्थानान्तरण के कारण निर्मित हुआ है। कही–कही नदियो और उससे सम्बन्धित नालो के कारण ऊँचे–ऊँचे कगार भी देखने को मिलते है। कुछ बालू के टीले नदियो की घाटी मे पाये जाते है। उन स्थानो पर जहॉ बालुकामयी भूमि की अनियमित पहाडियॉ पायी जाती है, वहॉ की भूमि काफी ऊँची उठी होती है। इस बालुकामयी भूमि के कारण इसके समीपवर्ती भागो मे कही तो भूमि नीची है, कही–कही झील बन गये है और कही–कही पर ककरीले भूमि के खड्ड (Pebbles) पाये जाते है। इसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्राचीन काल मे कोई नदी इस मार्ग से होकर बहती थी। जनपद मे ऊँची भूमि की श्रेणी कसया और पडरौना के बीच मे मिलती है। इसकी ऊँचाई जनपद मे सबसे अधिक है। समुद्र तल से इसकी ऊँचाई 128 6 मीटर है।[2] बॉगर अथवा ऊँची जमीन के विपरीत नदियो की नीची और बहुधा चौडी घटियॉ, समान्यत कछार के रूप मे जानी जाती है।[3]

प्राकृतिक रूप से भूमि की यह ऊँचाई और नदियो के गहरे कछार उसके समतल होने मे बाधा नही पहुँचाते अर्थात बाधक नही है। जनपद के मैदानी भाग की दूसरी विशेषता उसकी कछार भूमि है। प्रकृतित ऊँची भूमि तथा जनपद मे प्रवाहित नदियो की गहरी कछार भूमियॉ इस क्षेत्र की मैदानी भूमि के निर्माण मे पर्याप्त भिन्नता प्रदर्शित करती है। समतल भूमि के कछार कही–कही बहुत चौडे हो गये है और वर्षा के दिनो मे इनका विस्तार समुद्र का दृश्य उत्पन्न करता है। जनपद के कछारी भूभाग का प्रभाव इसकी आर्थिक सरचना पर भी पडता है।

---

[1] वरूण, डी0पी0,1988, *उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स देवरिया*, पृष्ठ 3।

[2] पाण्डेय, राजबली, *गोरखपुर जनपद और उसके क्षत्रीय जातियो का इतिहास*, गोरखपुर, 1946, पृष्ठ 6, *विकास के नियोजित कदम* 1996–97, पडरौना, सूचना जन सपर्क विभाग, पृष्ठ 8।

[3] वरूण, डी0पी0, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 3।

कछार मे जहाँ नदियो की बाढ जमीन को उपजाऊ बनाती है, वही दूसरी ओर अपने भीषण प्रवाह से कृषि तथा जन–माल को भारी क्षति पहुँचाती है। कभी–कभी तो गाँव के गाँव भीषण जल प्रवाह मे बह जाते है और सहस्रो लोग आश्रयहीन हो जाते है।

जनपद के तराई भाग मे ढाल उत्तर से दक्षिण 0 75 मीटर प्रति किलोमीटर है जबकि बाँगर और भाठ क्षेत्र मे यह ढाल उत्तर–पश्चिम से दक्षिण पूर्व 0 90 मी0 प्रति किमी0 है। खादर क्षेत्र का ढाल उ0–प0 से द0–पू0 15 मी0 प्रति किमी0 है।[1]

इस प्रकार ऊपज एव बनावट की दृष्टि से जनपद के सम्पूर्ण भूमि को तीन भागो मे बाँटा जा सकता है

1 भाठ

2 बाँगर तथा

3 कछार

1 भाठ

भाठ मिट्टी जनपद के कप्तानगज, रामकोला, दुधई, पडरौना, नेबुआ नौरगिया, सेवरही तथा तमकुही विकास खण्ड मे पायी जाती है। गण्डक और छोटी गण्डक के मध्य कसया के दक्षिण का कुछ भाग भी इसमे शामिल है। इस क्षेत्र का ढाल उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पश्चिम की ओर है तथा समुद्र तल से इसकी ऊँचाई 89 मी0 है। इसका निर्माण गण्डक, छोटी गण्डक और उनकी सहायक नदियो द्वारा लायी गयी मिट्टी से हुआ है। खनुआ नाला और झरही नदी का किनारा भी भाठ है। बाँसी नदी तथा इसकी शाखाएँ भी इस क्षेत्र मे आती है। बालू की मात्रा युक्त यह मिट्टी चिकनी, भुरभुरी, हल्की एवम सफेद होती है। सफेदी का कारण मिट्टी मे अनुपात से अधिक चूना का होना है। इस मिट्टी मे पानी सोखने की क्षमता अधिक होती है। इसलिए इसमे बराबर नमी बनी रहती है। अत इसमे सिचाई की कम

---

[1] कुशवाहा, रमाकान्त, *देवरिया जनपद का प्रतीकात्मक अध्ययन*, 1993, पृष्ठ 46।

आवश्यकता पडती है और जुताई आसानी से हो जाती है। इस प्रकार कृषि की दृष्टि से यह भूमि उपयुक्त है। इसकी मुख्य विशेषता यह है कि खाद्य पदार्थ के साथ–2 वाणिज्यिक फसलो का उत्पादन अत्यधिक मात्रा मे होता है। गन्ना, हल्दी, मिर्च, अदरख सोठ, धनिया, ज्वार, बाजरा, गेहूँ आदि के लिए यह मिट्टी काफी उपयुक्त है, किन्तु मानव जीवन के लिए यह भूमि बहुत उपयुक्त और शक्ति सम्पन्न नही है। इस मिट्टी के बालू युक्त होने के कारण बरसात मे अपरदन अधिक होता है तथा जल स्तर नीचा होने के कारण कुओ का निर्माण कठिन होता है।

भाठ की मिट्टी के दो प्रकार है – 1 धूसी भाठ और 2 चउर भाठ[1]। धूसी भाठ का एक भाग कसया और पडरौना के बीच है जो समुद्र तल से 117 65 मीटर ऊँचा उठा हुआ है।[2]

2 बॉगर

बॉगर पुरानी जलोढ मिट्टी से निर्मित ऊँचे मैदान होते है जिस पर नदियो के बाढ का पानी नही पहुँचता है। यह भू भाग हाटा तहसील के पश्चिमी भाग मे स्थित अत्यन्त उपजाऊ एव समतल मैदान है। इसके विपरीत खादर नये जलोढो से बना मैदान होता है जिस पर हर साल बाढ का पानी पहुँच जाता है तथा नयी मिट्टी का जमाव करता है। यह मिट्टी काफी उपजाऊ होती है। इस क्षेत्र की औसत ऊँचाई 84 मीटर तथा ढाल उत्तर से दक्षिण की ओर पाया जाता है। बॉगर की एक पतली पेटी पडरौना मे भी है, किन्तु यह जनपद के और बॉगरो से भिन्न है। इसका धरातल नीचा है। भाठ क्षेत्र मे भी झरही और खनुआ के बीच जगह जगह बॉगर है । इसी तरह छोटी गण्डक और खनुआ नदी के बीच बॉगर का एक विस्तृत क्षेत्र है। मिट्टी मे बालू की मात्रा कम या अधिक होने के आधार पर बॉगर की भूमि को तीन प्रकारो मे बॉटा जा सकता है – दोमट, मटियार और बलुई। दोमट मिट्टी मुख्यत जनपद के हाटा तथा पडरौना तहसील मे पायी जाती है। कसया तथा तमकुही के पश्चिमी भाग मे भी इस प्रकार की मिट्टी पायी जाती

---

[1] पाण्डेय, राजबली, पुर्वोद्धृत, पृष्ठ 16।

[2] वरूण, डी0पी0, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 4।

है। यह मिट्टी अत्यधिक उपजाऊ है जिसमे लगभग सभी प्रकार की फसले उगायी जाती है। फिर भी रबी की फसल के लिए यह सर्वाधिक उपयुक्त मानी जाती है। गेहूँ, जौ, चना, मटर, अरहर तथा साग-सब्जियाँ इस मिट्टी की प्रमुख फसले है। इस भाग की जलवायु स्वास्थप्रद होने के कारण आबादी घनी है।

मटियार मिट्टी जनपद के लगभग हर क्षेत्र मे पायी जाती है। ये मुख्य रूप से सम्पूर्ण ऊँच भूमि और झीलो तथा तालाबो के किनारे मिलती है। यह मिट्टी काफी कठोर तथा उपजाऊ होती है। इसमे खेती करने के लिए अधिक मेहनत करनी पडती है। जनपद के किन्ही-किन्ही भागो मे बलुई मिट्टी भी पायी जाती है जिसमे मोटे अनाजो का उत्पादन होता है। खास तौर से गण्डक, छोटी गण्डक तथा इनकी सहायक नदियो के किनारे यह मिट्टी अधिक मिलती है।

3 कछार

नदियो के पार्श्ववर्ती भू-भाग को कछार कहा जाता है जिसे दियारा के नाम से भी जाना जाता है। जनपद के उत्तर-पूर्व मे गण्डक के बगल मे कछार का एक खण्ड है। गण्डक का दियारा भाग दो भागो मे बॅटा है। पहला भाग सुदूर उत्तर और दूसरा भाग सुदूर दक्षिण-पूर्व मे है। इस क्षेत्र मे प्रतिवर्ष बाढ के साथ मिट्टी आती है और भूमि की उर्वरा शक्ति बढती रहती है। गण्डक के कछार की मिट्टी मे बालू की अधिकता होने के कारण उनकी उत्पादन शक्ति कम होती है। इस क्षेत्र के एक चौथाई से अधिक भाग पर केवल शरद् काल मे ही कृषि कार्य होता है।

स्थलाकृति की उपरोक्त तीन विभाजनो के अतिरिक्त उत्तर मे तराई की भूमि का अलग उल्लेख करना आपेक्षित है। यद्यपि कि जनपद के भीतर कोई पर्वत श्रेणी नही है, परन्तु हिमालय की चरण श्रृंखला इसकी उत्तरी सीमा के निकट आ पहुँचती है। हिमालय उत्तर से दक्षिण की ओर ढलता आया है जिसका प्राकृतिक प्रभाव जनपद के भू-स्थलाकृति पर भी पडा है। शिवालिक पहाडियो की चरण श्रृंखला के नीचे उनके समानान्तर भूमि का सिलसिला पश्चिम से पूर्व की ओर अग्रसर होता गया है जिसे तराई कहते है। इसका अधिकाश भाग नेपाल मे है।

जनपद कुशीनगर के तहसील पडरौना और हाटा का उत्तरी भाग इसके अन्तर्गत आता है।[1] यह जनपद के 326 वर्ग किमी0 क्षेत्र मे स्थित है। इस क्षेत्र मे छोटी–छोटी झीले तथा गण्डक नदी की छोटी–छोटी शाखाएँ भी पायी जाती है। यह क्षेत्र जगलो से ढका हुआ है। इस क्षेत्र की सबसे बडी विशेषता यह है कि कृषि भूमि पर स्वत शीशम आदि वृक्ष उग आते है।प्राचीन काल मे शाक्य और मल्ल राष्ट्र हिमालय की चरण श्रृखला को स्पर्श करते थे।[2] भू–स्थलाकृति के निर्माण से तराई की स्थिति का ज्ञान होता है। तराई भूमि का निर्माण वर्षा कालीन जल और नदियो तथा नालो द्वारा वर्षा काल मे बाढ जल से होता है। तराई की भूमि की बनावट ऐसी है कि बरसात का पूरा पानी नालो द्वारा यहा से बाहर नही निकल पाता और यही धरती मे समसे जाता है। फलत समस्त भूमि आर्द्र हो जाती है और नमी युक्त बनी रहती है जो मानव जीवन के लिए अस्वास्थ्यकर है। जनपद की समस्त भूमि का उत्तरी भाग किस प्रकार तराई भूमि मे परिवर्तित हो गया यह विचारणीय है, क्योकि तराई क्षेत्र मे प्राचीन काल मे आर्यो के अनेक उपनिवेश हिमालय की तलहटी मे बसे हुए थे। सभवत भौगर्भिक कारणो से भूकम्प आदि के प्रकोप से यहॉ की भूमि नीचे दब गई।[3] ऐसा प्रतीत होता है कि हिमालय के वर्द्धमान आकार के कारण उसके नीचे की शिवालिक श्रेणी के धसने के कारण सबद्ध क्षेत्र भी नीचे धॅस गई होगी जिससे तराई का क्षेत्र एक द्रोणी के रूप मे बन गई होगी जहॉ से वर्षा का जल बाहर न निकल कर उसी भूमि मे रिस जाता है और सम्पूर्ण तराई क्षेत्र की पट्टिका सदा आर्द्र भूमि के रूप मे बनी रहती है। जनपद के तराई भू–भाग का अधिकाश भाग झाडियो एव जगलो से भरा हुआ था। अद्यतन जगलो को काटकर कृषि भूमि बनती जा रही है। यह उपजाऊ भूमि है तथा धान की अच्छी पैदावार होती है। गन्ना की खेती भी बहुतायत से की जाती है। बडी गण्डक, छोटी गण्डक

---

[1] शर्मा, चन्द्रिका प्रसाद, 1998, *कुशीनगर का भौगोलिक परिचय,* गोरखपुर, पृष्ट 15।

[2] पाण्डेय, राजबली, पुर्वोद्धृत, पृष्ठ 5।

[3] पाण्डेय, राजबली, पुर्वोद्धृत, पृष्ठ 5।

तथा झरही नदी इसी भाग से होकर बहती है। इस भाग मे आबादी घनी है। खड्डा एव छितौनी इस भाग के मुख्य नगर है।

नदियॉ

जनपद की प्रमुख नदियो मे बडी गण्डक, छोटी गण्डक तथा इनकी विभिन्न सहायक नदिया है। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, जनपद का सामान्य ढाल, उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व की दिशा मे है और छोटी–बडी सभी नदिया इसी दिशा मे बहती है। केवल बडी गण्डक को छोडकर शेष सभी नदियो का पानी उत्तर भारत की एक प्रमुख नदी सरयू जो घाघरा नाम से भी प्रसिद्ध है, मे मिलती है।

बडी गण्डक

गण्डक नदी जिले की सबसे प्रमुख गगा की ऊपरी सहायक नदी है। यह मध्य हिमालय मे नेपाल की उत्तरी सीमा और तिब्बत मे विस्तृत हिमालय की अन्नपूर्णा पहाडियो के समीप मानगमोट और कुताग के समीप से निकलती है[1] तथा निचले नेपाल की पहाडियो से होते हुए त्रिवेणी घाट पर सर्वप्रथम समतल भूमि पर उतरती है। त्रिवेणी पडरौना के उत्तर पश्चिम मे 28 मील की दूरी पर है। नेपाल से जब यह नदी चलती है तो इसमे बॉयी तरफ से चार और दाहिनी तरफ से दो सहायक नदियॉ मिलती है। अपने सहायक नदियो के कारण नेपाल मे इसे सप्तगण्डकी के नाम से पुकारा जाता है। इसका मुख्य प्रवाह बिहार मे है।यह नदी नेपाल की सीमा को पार कर बिहार के पश्चिमी चम्पारन जिले मे प्रवेश करती है तथा उत्तर प्रदेश और बिहार की सीमा को अलग करते हुए पटना के पास गगा मे मिल जाती है। अपने देश मे इसका प्रचलित नाम नरायणी[2] और नेपाल मे शालीग्रामी[3] है क्योकि इसी तलहटी मे बीच मे सफेद पट्टीयुक्त काले रग के

---

[1]कुमार अरविन्द, शाडिल्य, यतीन्द्र, *बिहार एक खोज*, पृष्ठ 199।

[2] *पद्म पुराण*, रा0प्र0 21 4।

[3] *वाराहपुराण*, रामेश्वरादि महिमाध्याय।

सुडौल गोल पत्थर अत्यधिक मात्रा मे प्राप्त होते है और हिन्दुओ द्वारा नरायण अथवा शालीग्राम के रूप मे इसकी पूजा की जाती है। यह वही प्रसिद्ध नदी है जिसमे पौराणिक गज ग्रह युद्ध हुआ था और गज की पुकार सुनकर भगवान ने ग्रह का वध कर गज की प्राण बचायी थी। इसमे सदैव जल प्रवाहित होने के कारण कुछ लेखको ने इसकी पहचान महाकाव्यो (रामायण और महाभारत) मे उल्लिखित सदानीरा नदी से की है। प्राचीन काल मे कोसल राज्य और विदेहराज्य की सीमा सदानीरा ही थी।[1] कुशीनगर जनपद मे यह नदी हाटा तहसील के उत्तरी सिरे पर करवनियॉ गाव के पास प्रवेश करती है और इससे होकर दक्षिण– पूर्व मे सात किमी बहने के बाद छितौनी रेलवे स्टेशन के पास जनपद से अलग हो जाती है। पुन यह नदी तमकुहीराज तहसील के साहबगज के पास जिले को स्पर्श करती है और दक्षिण पूर्व की ओर बहते हुए बिहार मे प्रवेश कर जाती है तथा कुशीनगर जनपद को बिहार राज्य के पश्चिमी चम्पारन जिले से अलग करती है। इस प्रकार यह नदी जनपद की उत्तरी पूर्वी सीमा का निर्माण करती है। जिले मे इस नदी की तलहटी प्रस्तर युक्त है, पानी ठढा और स्वच्छ है तथा इसकी धारा बहुत तेज है। बडी गण्डक मे अचानक और प्राय बाढ आ जाती है जिसके कारण हाटा, पडरौना तथा तमकुहीराज तहसील मे इसके किनारे स्थित गाव को भारी नुकसान पहुचता है। इसका पानी उपनदियो मे पहुँच कर बहुत तबाही मचाता है और पर्याप्त मात्रा मे मिट्टी भी जमा कर देता है। झरही और बासी इसकी सहायक नदियॉ है।
यह शक्तिशालिनी नदी कही भी छिछली नही है। इसका पानी सिचाई के लिए प्रयुक्त नही होता। पूर्व मे यह नदी अपनी धारा को कई बार बदल चुकी है और इसकी यह प्रवृत्ति पूर्व की ओर खिसकने की है।

छोटी गण्डक

छोटी गण्डक नदी बडी गण्डक नदी की एक शाखा है जो नेपाल मे बाघवन से निकलकर महाराजगज जनपद को पार करती हुई कुछ दूरी तक

---

[1] पाण्डेय, राजबली, पुर्वोद्धृत, पृष्ठ 11।

कुशीनगर जनपद के उत्तरी–पश्चिमी भाग की सीमा बनाती है तथा जनपद को महाराजगज जनपद से अलग करती है। यह नदी चौडी कम किन्तु गहरी अधिक है। यह नदी जनपद मे सर्वप्रथम हाटा तहसील के उत्तरी–पश्चिमी सिरे पर स्थित कप्तानगज विकास खण्ड के उत्तरी भाग मे प्रवेश करती है और दक्षिण दिशा मे तहसील के बीचो–बीच बहती हुई देवरिया जनपद मे प्रवेश कर जाती है और सलेमपुर होकर अन्तत सिमारी के पास सरयू नदी मे मिल जाती है। इसकी खास विशेषता यह है कि सरयू नदी के साथ सगम बनाने तक इसका जल विमल रहता है। घाघी, खमुआ और मौन इसकी सहायक नदियॉ है जिनमे केवल बरसात की अवधि मे ही जल प्रवाहित होता है और फिर सूख जाता है।

मझना

यह नदी हाटा तहसील के कप्तानगज विकास खण्ड मे स्थित मसूरगज के पास से निकलती है। यह हाटा तहसील की पश्चिमी सीमा बनाते हुये कुशीनगर जनपद को गोरखुपर जनपद से अलग करती है। यह दक्षिण दिशा मे बहते हुए सुकरौली से कुछ दूरी पर देवरिया जनपद मे प्रवेश करती है और उसी दिशा मे रास्ते मे बरी, बरहरी, करना तथा कटना की धाराओ के साथ मिलकर अन्तत राप्ती से जा मिलती है।

इसका प्रवाह धीमा है और यह सकीर्ण व तेज मोड के साथ थोडी सी बालू मिश्रित सख्त चिकनी मिट्टी से होकर बहती है। इसके अपने किनारे है और इसके किनारे स्थित खेतो को कम नुकसान पहुॅचता है।

मन

यह छोटी गण्डक की मुख्य सहायक नदी है। यह महाराजगज जनपद के दक्षिणी–पूर्वी भाग से निकलती है। यह कुशीनगर जनपद मे हाटा तहसील मे कप्तानगज से लगभग 4 किमी0 उत्तर–पश्चिम मे प्रवेश करती है और पश्चिम से होकर दक्षिण–पूर्व दिशा मे बहते हुए हेतिमपुर के पास देवरिया जनपद की सीमा पर छोटी गण्डक से मिल जाती है। इस नदी का बहाव बलुई पहाडियो

के टूटे हुए किनारे से प्रवाहित होता है। इसका सामान्य झुकाव उत्तर और दक्षिण की ओर है। यह बारह मासी नदी है।

खनुआ

यह नदी जो कि छोटी गण्डक का एक नाला है, इसका स्रोत महुआडीह के पास है। यह दक्षिण–पूर्व की दिशा मे अपनी बॉयी तरफ पडरौना कसया व तमकुही तहसील को तथा अपनी दायी तरफ देवरिया जनपद को अलग करते हुए बढती है। सोडा से मिलने के बाद यह दक्षिण–पश्चिम की ओर मुड जाती है और देवरिया को सीवान से अलग करती है। बरसात के दिनो मे यह महत्वपूर्ण हो जाती है और बॉगर क्षेत्र के जल निस्तारण की मुख्य स्रोत बन जाती है। यह रजवाबार मे प्रवेश करते हुए घाघी, भलुआ और कुछ अन्य नालो के पानी को ग्रहण करता है । यह कसया के पास रामभार ताल से होकर बहता है और बाढ की दशा मे कसया के पडोस मे भारी नुकसान पहुॅचाता है।

सोडा

इस नदी का स्रोत कुचिया गॉव के पास है और यह दक्षिण की ओर तहसील पडरौना से होकर (बारीपट्टी तक) बहती है। इसके बाद दक्षिण–पश्चिम मे मुडकर खनुआ मे मिल जाती है। यद्यपि कि यह एक तुच्छ नदी है लेकिन अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण इसका कुछ महत्व है।

झरही

यह नदी तमकुहीराज तहसील के उत्तरी भाग मे दुधई ब्लॉक के बॉसगॉव के पास से निकलती है। झरही जो कि अब घाघरा की एक सहायक नदी है, गण्डक की एक पुरानी शाखा है यह तमकुहीराज के पास से होते हुए डिबनी बजरवा गॉव के पास कुशीनगर जनपद को छोड देती है और बिहार प्रदेश के गोपालगज जिले मे प्रवेश कर जाती है। आगे चलकर सिवान और देवरिया जनपद की सीमा बनाते हुए अन्तत सरयू मे मिल जाती है।

बॉसी . यह नदी जो गण्डक नदी की एक मात्र सहायक नदी है, सोता गण्डक के नाम से भी जानी जाती है। यह छितौनी के पास से निकलती है और

कुशीनगर जनपद को बिहार से अलग करती है। यह जनपद मे कुल 77 किमी0 की लम्बाई मे बहती है। यह पडरौना तहसील मे बैकुठपुर के उत्तर से सर्वप्रथम जिले मे प्रवेश करती है और जनपद के उत्तर–पूर्व तथा पूर्व मध्य भाग से दक्षिण पूर्व की ओर बहती है और सेवरही विकास खण्ड के तरकौलिया गॉव के पास सोता से मिलकर गण्डक मे गिर जाती है।

बनरी

यह नदी छोटी गण्डक का एक नाला है। इसका स्रोत हाटा तहसील मे लखुआ गॉव के पास है। यह हाटा तहसील से होकर दक्षिण–पूर्व की ओर बहती है और बॉसी घाट के पास बॉसी नदी मे मिल जाती है।

दूसरी बनरी पश्चिमी बनरी के रूप मे जानी जाती है यह उस बिन्दु से जहॉ बनरी छोटी गण्डक से निकलती है, 12 किमी0 दक्षिण मे प्रकट होती है। अन्त मे यह घाघी मे मिलती है और दक्षिण की ओर मुडकर खनुआ मे गिरती है, जो वस्तुत गण्डक का ही एक सिलसिला है।

उपरोक्त नदियो के अलावा जनपद की कुछ प्राचीन नदियॉ जो प्राय विलुप्त हो चुकी है या दूसरे नामो से अपना अस्तित्व बनाये हुये है, का उल्लेख भी आवश्यक है। जनपद की प्राचीन नदियो मे हिरण्यवती, कुकुत्था तथा मही प्रमुख है। जनपद मे आज से सहस्रो वर्ष पूर्व अनेक नदियॉ रही होगी, जिनका उल्लेख साहित्य मे प्राप्त नही है। दूसरी ओर बौध ग्रथो मे प्राय उन्ही नदियो का उल्लेख किया गया है जो राजनैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण थी। अथवा बुद्ध की चारिका से सम्बद्ध रही । अनेक नदियॉ ऐसी रही होगी जो अद्यावधि अस्तित्व मे है, परन्तु साहित्य मे उल्लेखित नही है। आधुनिक अस्तित्वमान लघु नदियॉ यह सकेत करती है। प्राचीन काल मे इनका आकार और प्रकार वृहद रहा होगा, जो प्राकृतिक परिवर्तनो तथा अनेकविध अपरदनो तथा निक्षेपो से भर गयी है।[1]

---

[1] पाण्डेय, राजबली, पुर्वोद्धृत,।

हिरण्यवती

मल्लभूमि की यह एक प्रसिद्ध नदी थी जो कुसीनारा के पास से होकर बहती थी। दीघनिकाय के महापरिनिर्वाण सूत्त मे हिरण्यवती नदी के तट पर कुशीनारा के मल्लो के उपवतन नामक शालवन का उल्लेख है।[1] पडित राहुल साकृत्यायन[2] तथा भरत सिह उपाध्याय[3] के मतानुसार आधुनिक सोनरा नाला ही हिरण्यवती है जो रामाभार ताल से निकलकर सिसवा गॉव के पूर्व से होकर बहते हुए कुलकुला स्थान के पास खनुआ मे मिलती है, जहॉ पर घाधी भी आ मिलती है। परन्तु डा0 राजबली पाण्डेय[4] एव डा0 विमलचरण लाहा[5] ने हिरण्यवती की पहचान छोटी गण्डक से किया है। राजबली पाण्डेय के अनुसार सम्भवत अपने निर्मल जल अथवा बालू के साथ हिरण्य (स्वर्ण) कण लाने के कारण यह हिरण्यवती कहलाती है। भिक्षु धर्मरक्षित[6] वर्तमान कुसम्हीनारा तथा हिरवा की नारी नामक नाले को हिरण्यवती का पर्याय मानते है। कुसम्हीनारा विशुनपुर गॉव के पूर्व मे उत्तर से दक्षिण की ओर बहती है। हिरवा की नारी रामाभार ताल और अनिरूधवा के बीच से होता हुआ डुमरी गॉव के पूर्व से जाकर शिवराजपट्टी के पास खनुआ मे मिलता है। धर्मरक्षित का तर्क है कि सन् 1911 ई0 मे रामाभार के स्तूप की खुदाई मे ताल के पश्चिमी किनारे, स्तूप से कुछ दक्षिण और उत्तर लट्ठो के बधे हुए बेडे मिले थे और अब भी विशुनपुर गॉव के उत्तर बकया ताल मे साखू के गिरे पेडो की लकडिया और उनकी जडे मिलती है। डा0 वोगेल[7] को कुशीनगर की पूर्वी चहारदीवारी वर्तमान भूमि के सतह से 12 फीट नीचे मिली थी और उसके ऊपर नदी द्वारा

---

[1] *दीघनिकाय,* महापरिनिर्वाण सुत्त, 2/3।

[2] साकृत्यायन, राहुल, *बुद्धचर्या,* पृष्ठ 572।

[3] उपाध्याय, भरत सिह, *बुद्ध कालीन भारतीय भूगोल,* पृष्ठ 134।

[4] पाण्डेय, राजबली, पुर्वोद्धृत, पृष्ठ 10।

[5] लाहा, विमलचरण, *प्राचीन भारत का ऐतिहासिक भूगोल,* पृष्ठ 53।

[6] धर्म रक्षित, भिक्षु, *कुशीनगर का इतिहास,* पृष्ठ 32।

[7] *आर्क्यालाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया,* एनुअल रिपोर्ट, 1905–6, पृष्ठ 75।

बिछाये हुए बालू का ढेर जमा था। कनिघम[1] ने रोहनाला को हिरण्यवती बतलाया है। रोहनाला कुसम्हीनारा के पूर्व और कसया के पश्चिम मे है, जो उत्तर से आकर सीधे रामाभार ताल मे मिलता है।

कुकुत्था

मल्लगणराज्य की उत्तरी और दक्षिणी राजधानियो की प्राकृतिक सीमा–विभाजक–रेखा के रूप मे कुकुत्था नदी का उल्लेख बौद्ध ग्रन्थो मे किया गया है। दीघनिकाय के महापरिनिर्वाण सुत्त मे उल्लिखित है कि वैशाली से कुशीनगर के अन्तिम यात्रा मे चलते हुए भगवान बुद्ध ने अपने परिनिर्वाण के पहले इस नदी का जल ग्रहण किया था और स्नान किया था[2] तथा उसे पार कर एक आम्रवन मे विश्राम किया था। दीघनिकाय की अट्ठकथा[3] के अनुसार यह आम्रवन इस कुकुत्था नदी के दूसरे किनारे पर स्थित था। भिक्षु धर्मरक्षित[4] और ए0सी0एल0 कार्लाइल ने इसकी पहचान वर्तमान फाजिलनगर और कुशीनगर के बीच प्रवाहित होने वाली घाघी नदी से किया है। इसमे सदा पानी भरा रहता है। भरत सिह उपाध्याय[5] और विमलचरण लाहा[6] इसका समीकरण बरही नामक छोटी सी नदी से करते है जो कसया से 8 मील नीचे छोटी गण्डक मे मिलती है। कनिघम[7] ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है कि कसया से 8 मील नीचे जाकर यह नदी छोटी गण्डक के दक्षिणी छोर पर मिलती है। उन्होने इसे आधुनिक बाडी या बरही या बान्धी नाला कहा है।

---

[1] *आर्क्यालाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया,* रिपोर्ट, 1861–62, वाल्यूम I।

[2] *दीघनिकाय,* अट्ठकथा 2, 3।

[3] तत्रैव, पृष्ठ 130।

[4] धर्मरक्षित, *सयुक्त निकाय* (हिन्दी अनुवाद), पृष्ठ 10 , धर्मरक्षित, *कुशीनगर का इतिहास,* पृष्ठ 30।

[5] उपाध्याय, भरत सिह, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 134, 367।

[6] लाहा, विमलचरण, *प्राचीन भारत का ऐतिहासिक भूगोल,* पृष्ठ 150।

[7] कनिघम, ए0, *ऐशिएट ज्याग्राफी आफ इण्डिया,* पृष्ठ 367।

मही

डा0 भरत सिह उपाध्याय[1] और भिक्षु धर्मरक्षित[2] ने इसकी पहचान वर्तमान बडी गण्डक से की है किन्तु डा0 विमल चरण लाहा[3] ने इसे गण्डक की एक सहायक नदी बताया है। सयुक्त निकाय[4] मे इसकी गणना पच महानदियो—गगा, यमुना, अचिरावती (राप्ती), सरभू (सरयू) और मही मे की गयी है। अगुतर निकाय[5] और मिलिन्दपञ्हो[6] मे भी इस नदी का उल्लेख है। सुत्त निपात[7] के धनिय सुत्त से ज्ञात होता है कि एक बार भगवान बुद्ध महीनदी के किनारे खुली कुटी मे रात भर के लिए ठहरे थे।

सोना नदी

दीघनिकाय[8] मे कहा गया है कि पावा (वर्तमान फाजिलनगर) से कुछ दूरी पर मार्ग मे भगवान बुद्ध ने आनन्द से पानी मगाकर जलपान किया था। आनन्द ने जिस छोटी नदी से जल लाया था, उसकी पहचान धर्मरक्षित[9] तथा ए0सी0एल0 कार्लाइल[10] वर्तमान सोना नामक नदी से की है। कार्लाइल ने इसके तीन नाम बताये है—सोना, सोनवा, अन्हया। यह नदी सठियॉव गॉव से कुछ मील पश्चिम मे स्थित है। अब उसका प्रवाह—स्थान मात्र अवशेष है।

---

1 उपाध्याय भरत सिह, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 132।

2 धर्मरक्षित, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 10।

3 लाहा, विमरण चरण, *इण्डोलॉजिकल स्टडीज,* भाग 3, पृष्ठ 100।

4 *सयुक्त निकाय,* भाग 2, पृष्ठ 823।

5 *अगुत्तर निकाय,* जिल्द 4, पृष्ठ 101।

6 *मिलिन्दपन्हो,* पृष्ठ 73 (बम्बई विश्वविद्यालय सस्करण)।

7 उपाध्याय, भरत सिह, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 132।

8 दीघनिकाय, अट्ठकथा, 2।3।

9 धर्मरक्षित, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 28।

10 ए एस आई आर, वाल्यूम 22, पृष्ठ 30, 31।

झील और तालाब

प्राकृतिक भूगोल के निर्माण मे भूगर्भ की आन्तरिक कियाए प्रभावी होती है। भूगर्भ मे विद्यमान विभिन्न आर्द्र एव आग्नेय तत्वो के कारण स्थान–स्थान पर झीलो, तालाबो और कुण्डो का निर्माण हो जाता है। इनके निर्माण की प्रकिया शनै–शनै सहस्रो वर्षो मे एकत्रित उद्वेग से अचानक होता है जिसका ऐतिहासिक काल निर्धारण भूगर्भ विज्ञान अथवा पुरा प्राकृतिक विज्ञान के द्वारा ही किया जा सकता है।

झील धरातल पर फैले हुए गड्ढे है, जिनमे जल भरा होता है। सामान्य रूप से छोटे गड्ढो को पोखर और इससे कुछ बडो को तालाब और इनसे बडो को झील कहा जाता है। अत झील जल के वे स्थिर भाग है जो चारो तरफ से स्थल खण्डो से घिरे होते है। दूसरे शब्दो मे झीले भूपटल के वे आन्तरिक जलाशय है, जो विभिन्न आकार, विस्तार और गहराई के चट्टानी बेसिनो मे बन जाते है।

झीलो की उत्पत्ति के लिए किसी पूर्व स्थित गड्ढे की उपस्थिति पानी को एकत्र होने के लिए जरूरी होता है। इसके अलावा अधोभौमिक जल–तल की उपस्थिति धरातल के नजदीक या गड्ढे के तल से ऊँची होना आवश्यक होता है जिससे जल की पूर्ति होती रहे। पर्याप्त मात्रा मे जल की प्राप्ति या तो बरसा के माध्यम से या झील मे गिरने वाली नदियो द्वारा जरूरी होती है क्योकि कुछ नदियो का उद्भव झीलो से भी होता है। जल आपूर्ति के अतिरिक्त खाद्य समाग्री के स्रोत होने के कारण इन झीलो का आदिमानव के जीवन मे महत्वपूर्ण स्थान था।

कुशीनगर जनपद मे कोई बडी झील नही है जिसका उल्लेख किया जा सके परन्तु जल जमाव हेतु बडी सख्या मे गडढे मिलते है, जहा वर्षा का जल बडी मात्रा मे एकत्र हो जाता है। पानी के बाहर निकलने का कोई रास्ता न होने कारण इनका आकार बढता गया और कालान्तर मे ये विशाल ताल बन गये। तालो के अतिरिक्त कुछ छोटी मोटी झीले भी है। ताल और झील नदियो के छोडनो से

या भौगर्भिक कारणो से पृथ्वी के दब जाने से बने है।[1] इनका जल गर्मियो मे कम हो जाता है और किसी किसी का कुछ भाग सूख जाता है।

जनपद का सर्वाधिक महत्वपूर्ण ताल रामाभार ताल है, जो कसया के दक्षिण लगभग एक किमी दूर कसया–देवरिया मार्ग के पश्चिम मे स्थित है। गर्मियो मे यह क्षीण होकर लम्बाई मे लगभग एक किमी0 तथा 180 मी0 चौडा रह जाता है, परन्तु बरसात मे खनुआ नदी की बाढ से इस ताल का विस्तार दूना बढ जाता है। कभी कभी इसका पानी कसया को चारो तरफ से घेर कर उसको टापू बना देता है। जनश्रुतियो के अनुसार इस ताल का नाम कोसल के राजा राम के नाम पर पडा है। इसके ही किनारे कुशीनगर के मल्ल राजाओ का मुकुटबन्धन होता था मल्लो द्वारा इसी के किनारे भगवान बुद्ध के अस्थि अवशेष पर स्तूप बनवाया गया था जिसका भग्नावशेष आज भी रामभार स्तूप के नाम से विद्यमान है। इसका उपयोग सिचाई और मछलियो के लिए किया जाता है। जनपद के अन्य झीलो मे कुसेहर ताल जो हाटा तहसील मे धारा के पास है तथा तमकुहीराज तहसील मे तमकुही के दक्षिण–पूर्व मे एक विस्तृत गडढा है जो चखनी ताल कहलाता है जिसमे बरसात मे अधिक मात्रा मे पानी इकट्ठा हो जाता है उल्लेखनीय है। जनपद मे तालो की सख्या कम होने का प्रमुख कारण है जनपद मे नदियो की कमी। फिर भी छोटी गण्डक और बडी गण्डक के छोडनो से कही–कही झील बन गये है। जनपद मे तालाबो की सख्या भी नगण्य है और इनका कोई उल्लेखनीय योगदान भी नही है।

भू–गर्भ एव खनिज

भू–गर्भ शास्त्र वह विज्ञान है जो पृथ्वी के विगत इतिहास का अन्वेषण करता है। इसके द्वारा धरातल पर होने वाले परिवर्तनो को ठीक से समझने मे मदद मिलती है। यह उन चीजो का भी अन्वेषण करता है जिनसे ब्रह्माण्ड मे ग्रहो का स्वतत्र इकाई के रूप मे निर्माण हुआ। भू–गर्भ विज्ञान का पुरातत्व से बहुत गहरा सम्बध है। भू–गर्भ एव मानव इतिहास के बीच का समय पुरात्व की परिधि मे आता है। भू–गर्भ शास्त्र का जहा समापन होता है वही से पुरातत्व का प्रारम्भ होता है। ये

---

[1] पाण्डेय, राजबली, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 14।

पृथ्वी के इतिहास के दो भिन्न काल है और समय के एक ही पैमाने के द्वारा नही मापे जा सकते है। इतिहास के वर्षो से भिन्न भू–गर्भीय वर्ष कई मिलियन वर्षो से मिलकर बना है। यह मिलियन वर्ष वह न्यूनतम समय है जो भू–गर्भीय घटनाओ को एक आकार लेने मे लगा है। जहा हमारे ग्रहो के भू–गर्भीय इतिहास का अन्तिम अध्याय समाप्त होता है वहा मानव इतिहास, आद्यैतिहास और पुरातत्व प्रारम्भ होता है। स्तरीकरण का नियम पुरातत्व ने भू–तत्व विज्ञान से ही लिया है। सक्षेप मे इसका अभिप्राय है कि नवीन सामग्री का निक्षेप (जमाव) पुरातन सामग्री के ठीक ऊपर होता है। भू–तात्विक जमावो के साथ प्राप्त मानवकृत पुरा–पाषाणिक औजारो एव पुरातत्व की दृष्टि से उपयोगी अन्य पुरावशेषो की तिथिया सौर वर्षो मे निश्चित करना आसान नही है। इसीलिए इनकी तिथि भू–तात्विक कालो मे निर्धारित की जाती है। पुरा–पाषाणिक मानव का सास्कृतिक विकास जिन परिस्थितियो मे हुआ, उसकी समग्र जानकारी प्राप्त करने का भू–तत्व विज्ञान एक सशक्त माध्यम है।

भू–गर्भीय रूप से उत्तर भारत का मैदान सवेदनशील नही है। पूर्ववर्ती टर्शियरी युग मे वहा एक गहरा बेसिन था जो नदियो द्वारा लाए गए मलबो से भर गया और बाद मे जलोढ के रूप मे ऊपरी और बाद के टर्शियरी द्वारा पूरा कर दिया गया।

कुशीनगर जनपद सिधु–गगा मैदान के जलोढ मिट्टी के महीन कणो से निर्मित एक लघु भाग है। इस जलोढ का जमाव हिमालय के ऊपर उठने के उपरान्त प्रारम्भ हुआ जो प्लीस्टोसीन युग से लेकर अब तक जारी है। जलोढ की एकदम ठीक–ठीक मुटाई ज्ञात नही है। जनपद का उत्तरी भाग तराई क्षेत्र के समीप स्थित है और यह रूखे पदार्थ के उपर महीन मिट्टी के परत की अधिकता से पहचाना जाता है।

जलोढ मे बालू, सिल्ट, क्ले और ककड विभिन्न अनुपात मे मिले होते है। जलोढ का जमाव दो प्रकार का है –बागर अथवा पुराना जलोढ जो काले रंग का होता है, मध्य से ऊपरी प्लीस्टोसीन युग से सम्बन्धित है। सामान्यत यह बाढ के स्तर के ऊपर थोडा सा उठा हुआ चौरस जमीन होता है ठोस कण एव अशुद्ध

कैल्सियम कार्बोनेट के कण (ककड) बागर के बनावट मे पाए जाते है। खादर या नव जलोढ का काल ऊपरी प्लीस्टोसीन युग से अब तक माना गया है। यह हल्के रग का ककड एव रेह से मुक्त होता है।

खनिज

जनपद की भूमि हिमालय से निकलने वाली नदियो द्वारा लायी गयी नर्म और उपजाऊ मिट्टी की तहो से बनी है। इसलिए इसके भूगर्भ मे खनिज पदार्थों की रचना कम हुयी है। अत जनपद मे मध्यम या विस्तृत आकार की कोई खान नही है जिससे खनिज पदार्थ प्राप्त किया जा सके। अभी जनपद का समुचित रूप से भौगर्भिक रूप से निरीक्षण नही हुआ है। सम्भव है आगे चलकर नये खनिज पदार्थों का पता लग जाये। जनपद मे प्राप्त खनिजो मे ककड, बालू, साल्ट पीटर तथा क्ले का उल्लेख किया जा सकता है।

ककड

यह उबड खाबड पत्थर के आकार का बालू चूना मिश्रित अशुद्ध पदार्थ होता है । यह जनपद के कुछ हिस्से मे कही–कही यथा कसया हाटा मार्ग पर पगरा गॉव मे, कप्तानगज हाटा मार्ग पर मथौली मे और चडकी देवी के स्थान के पास पाया जाता है। यह सडक निर्माण और चूना बनाने के काम आता है।

बालू

यहॉ कि नदियो मे पर्याप्त मात्रा मे बालू पाया जाता है, जो भवन निर्माण के काम मे आता है। यह पडरौना तहसील मे बॉसी नदी के किनारे बॉसी घाट के पास, हाटा तहसील मे छोटी गण्डक के किनारे हेतिमपुर मे तथा तमकुहीराज तहसील मे सेवरही के उत्तर बॉसी नदी के किनारे शिवा घाट के पास निकाली जाती है। यहॉ पर बालू पर्याप्त मात्रा मे प्राप्त होने के कारण इसे जनपद के बाहर भी भेजा जाता है। इससे काफी लोगो का जीविकोपार्जन चलता है।

शोरा (शाल्टपीटर) यह एक प्रकार का सफेद पाउडर होता है जिसका उपयोग भोजन को सरक्षित करने, दियासलाई बनाने तथा गन पाउडर बनाने के

लिए होता है। तमकुहीराज तहसील मे सेवरही के पास कच्ची अवस्था मे इसका निर्माण अधिक मात्रा मे होता है।

चिकनी मिट्टी

यह एक प्रकार की सख्त और चिपचिपी मिट्टी है, जो पकाने पर कठोर हो जाता है। यह जनपद मे लगभग हर जगह पायी जाती है। इसका उपयोग ईटे, खिलौने और बर्तन बनाने के लिए होता है।

जनपद कुशीनगर भूकम्प की दृष्टि से मध्यम तीव्रता वाले चतुर्थ जोन मे पडता है। यहॉ हाल मे कोई बडा विनाशकारी हलचल और भूमिगत परिवर्तन नही हुआ है। 4 जनवरी 1894 को गोरखपुर मे जो झटका महसूस किया गया था, उससे नाम मात्र का नुकसान हुआ था। यह जनपद विशाल हिमालय की सीमा क्षेत्र से दूर नही है। वहा जब कोई बडा भूकम्प आता है तो उसका प्रभाव जिले मे भी महसूस किया जाता है।

जलवायु

सामान्यतय़ा वर्ष भर मे गर्मी, जाडा, वर्षा एव हवा की औसत दशा को जलवायु कहते है। कुशीनगर जनपद की जलवायु समशीतोष्ण है। यहा न तो गर्मियो मे प्रदेश के पश्चिमी जिलो की भॉति असह्य गर्मी और न जाडो मे कडाके की ठढी पडती है। इसका कारण है हिमालय की निकटता और वर्षा का आधिक्य। समुद्र तट से जनपद की दूरी भी पर्याप्त है। तराई क्षेत्र से नजदीक होने के कारण यहा की जलवायु स्वास्थ्यवर्धक नही है।

जलवायु की दृष्टि से कुशीनगर जनपद को तीन भागो मे बॉटा जा सकता है[1]–

1 उत्तर का तराई वाला भाग
2 मध्य का भाग और
3 दक्षिण का भाग

---

[1] शर्मा, चन्द्रिका प्रसाद, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 17।

1 उत्तर का तराई वाला भाग

कुशीनगर जनपद हिमालय पर्वत की तराई मे बसा हुआ है।[1] अत पूरे जनपद की जलवायु सर्द और तर है किन्तु उसमे भी जनपद के उत्तरी भाग मे ठढ, वर्षा अधिक होने के कारण जलवायु अधिक नम एव तर है। यह स्वास्थ्य के लिए अच्छा नही होता है। जगलो के कटान से अब यह क्षेत्र शुष्क और स्वास्थ्यकर हो रहा है।

2 मध्य का भाग

इस भाग मे पडरौना तहसील का दक्षिणी भाग, तमकुहीराज तहसील का उत्तरी भाग तथा हाटा तहसील का मध्यवर्ती भाग आता है। यहा की जलवायु अच्छी है तथा सभी प्रकार की फसले पैदा होती है।

3. दक्षिणी भाग

जनपद का दक्षिणी भाग जलवायु की दृष्टि से अच्छा है। बर्षा, गर्मी एव जाडा की औसत दशा सम–सामान्य रहती है। वातावरण की दृष्टि से जिले मे चार प्रकार की ऋतुएँ पायी जाती है। मध्य नवम्बर से फरवरी तक सर्दी, मार्च से मध्य जून तक गर्मी, मध्य जून से सितम्बर तक बरसात (दक्षिण पश्चिम मानसून) और अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक मानसूनोत्तर ऋतु रहती है।

वर्षा :

जनपद मे सामान्य वर्षा लगभग 1200 मी मी तथा वास्तविक वर्षा लगभग 625 मी मी तक होती है। वर्षा यहा मुख्यतया मानसूनी हवाओ से होती है, जो सामान्यतया जून के द्वितीय सप्ताह मे जनपद मे प्रवेश करती है और अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक लगातार रहती है। जुलाई और अगस्त मे अत्यधिक वर्षा होती है। जाडे मे भी यहॉ थोडी बहुत बिखरे रूप मे वर्षा हो जाती है। यह वर्षा पूस के अन्त मे होती है। कभी–कभी माघ के अन्त मे और फागुन के प्रारम्भ मे भी वर्षा होती है।

---

[1] शर्मा, चन्द्रिका प्रसाद, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 17।

तापमान

वर्षा काल को छोडकर यहॉ की जलवायु अपेक्षाकृत शुष्क रहती है। फरवरी के बाद से जिले का तापमान तेजी से बढने लगता है और मई तथा जून का महीना सबसे गर्म होता है। जिले का अधिकतम तापमान 44°C और औसत तापमान लगभग 25°C तथा अधिकतम औसत तापमान 38°C हो जाता है। कभी–कभी तापमान 46°C तक भी पहुॅच जाता है। गर्मी के दिनो मे 2 या 3 सप्ताह सूखी गर्म पछुआ हवा चलती है, किन्तु वह प्रदेश के पश्चिमी भागो जैसी धूल युक्त नही होती। गर्मियो मे यहॉ कभी–कभी आधिया भी आती है। मध्य नवम्बर से तापमान तेजी से गिरने लगता है। दिसम्बर और जनवरी महीने मे सर्वाधिक ठढ पडती है। समान्यता जनवरी का महीना सबसे ठण्डा रहता है, जब अधिकतम औसत तापमान 23°C और न्यूतम औसत तापमान 9°C तक पहुच जाता है। जनपद का वार्षिक तापान्तर 11 79°C है। सबसे अधिक तापान्तर 13 62°C जनवरी के महीने मे तथा सबसे कम 6 34°C जून के महीने मे पाया जाता है। जाडे मे कभी–कभी पश्चिमी वायुमण्डलीय व़िक्षोभ से उत्पन्न ठण्डी धाराओ के चलने से जनपद का तापमान 1 अथवा 2°C तक गिर जाता है तथा घना कोहरा पडने लगता है। इसी कारण शीतलहर से पूरा जनपद प्रभावित रहता है।

आर्द्रता

दक्षिणी पश्चिमी मानसून के समय जनपद की सापेक्षिक आद्रता सामान्यतया 70% तक पहुॅच जाती है। जाडे के महीनो मे आर्द्रता घट जाती है। ग्रीष्म ऋतु मे विशेषत दोपहर के बाद हवा बहुत शुष्क हो जाती है।

बादल

वर्षा ऋतु के दौरान और शरद ऋतु मे दिन के कुछ समय जब पश्चिमी विक्षोभ समूह मे जनपद से होकर गुजरता है तब आकाश मे अत्यधिक मात्रा मे बादल होते है अथवा बादलो से ढका होता है। वर्ष के बाकी समय मे आकाश अधिकाशत स्वच्छ अथवा हल्का बादल युक्त होता है।

पवन

जनपद मे साधारणत हल्की हवाएँ चलती है जो ग्रीष्म और मानसून महीने के बाद तेज हो जाती है। शरद ऋतु के दौरान हवाए अधिकाशत पश्चिम से बहती है। पूर्वी हवा ग्रीष्म ऋतु के प्रारम्भ मे चलती है। वर्ष के अधिकाश दिनो मे यहाँ पर पूर्वी पवन बहता है जिसमे बराबर नमी बनी रहती है। अक्टूबर मे हवा हल्की होती है और वह या तो पश्चिम से अथवा उत्तर–पूर्व से पूर्व की ओर बहती है। नवम्बर से अप्रैल के बीच हवा मुख्यत पश्चिम से उत्तर–पश्चिम की ओर बहती है। अक्टूबर के प्रारम्भ मे वायु दाब 1002 6 मिलीबार रहता है, लेकिन दिसम्बर व जनवरी मे यह 1008 7 मिलीबार हो जाता है। मई मे 995 4 मिलीबार तथा जुलाई मे 991 4 मिलीबार पाया जाता है। हवा की सामान्य गति 3–7 किलोमीटर प्रति घटे रहती है।

विशेष मौसमी घटनाएँ

शरद ऋतु मे पश्चिमी विक्षोभ, जनपद के मौसम को प्रभावित करता है और तब बवडर सहित् बिजली का गिरना, ऑधी और ओले पडना जैसी घटनाए कभी–कभी होती रहती है। कभी–कभार ग्रीष्म और वर्षा ऋतु के बाद बवण्डर भरी ऑधी चलती है। शरद ऋतु मे विशेष रूप से जनपद के उत्तरी भाग मे कभी कभी घने कोहरे पडते है।

वनस्पतियॉ .

किसी क्षेत्र की वनस्पति पर उसकी भौगोलिक स्थिति और जलवायु का गहरा प्रभाव पडता है। उक्त दोनो दृष्टियो से कुशीनगर जनपद का क्षेत्र उपयुक्त है। विशाल जलोढ मैदान जैसा कि आज हमे देखने को मिलता है, वह दो हजार वर्ष पूर्व से लेकर आज तक वनो के कटान का परिणाम है। आज जहॉ खाली मैदान है वहॉ कभी प्रचुर मात्रा मे घने और आर्द्र शाल वृक्ष के जगल थे।[1]

---

[1] स्टैबिग, 1992, कोल्बर, 1937।

प्रारम्भिक दिनो मे कुशीनगर जनपद का क्षेत्र वनो से ढका था। पारपरिक साहित्य इस क्षेत्र मे घने जगल होने का साक्ष्य प्रस्तुत करते है। शतपथ ब्राह्मण[1] मे उल्लेख है कि सरस्वती और सदानीरा (वर्तमान गण्डक) के बीच का क्षेत्र घने जगलो से आवेष्ठित था और जगलो को जलाने के बाद भी यहॉ आर्यीकरण व कृषि कार्य सम्भव हुआ। ह्वेनसाग के विवरण[2] से ही पता चलता है कि कुशीनगर का क्षेत्र वनो से आच्छादित था तथा इनमे जगली जानवरो और डाकुओ की भरमार थी। कुशीनगर के दक्षिण–पश्चिम मे उसके समीप ही मल्लो का उपवतन नामक शालवन था जो हिरण्यवती नदी के दूसरे किनारे पर स्थित था।[3] इस उपवतन शालवन मे ही भगवान बुद्ध का महापरिनिर्वाण हुआ था। इसी शालवन मे बुद्ध ने कुशीनारा सुत्त का उपदेश दिया था।[4] कुशीनारा के समीप बलिहरण वनसण्ड नामक वन या वनखण्ड था। भगवान बुद्ध ने यहॉ कई बार निवास किया था। मज्झिमनिकाय के किन्ति सुत्तन्त तथा अगुतरनिकाय के दो कुशीनारा सुत्तो का उपदेश इसी वनखण्ड मे दिया गया था।[5]

सघन उपनिवेशन और वनो की कटाई से मानव और वनस्पति के बीच सतुलन स्थापित हुंआ। मध्यकाल के दौरान कुछ क्षेत्र कृषि योग्य बना, किन्तु स्थानीय राजपूत प्रमुखो के बीच आपसी युद्ध के कारण दुबारा जगल मे बदल गया ब्रिटिश शासन के प्रारम्भिक दिनो मे जनपद के उत्तरी भाग का कुछ हिस्सा कटीले जगलो से ढॅका था। नेपाल से लगी उत्तरी सीमा अबाध रूप से जगलो की शृंखलाओ से परिपूर्ण था। पडरौना वनपट से आवेष्टित था और दक्षिण मे भी छोटे–छोटे उपवतन यत्र–तत्र फैले हुये थे, परन्तु ईष्ट इण्डिया कम्पनी का अधिकार

---

[1] *शतपथ ब्राहम्ण,* 1। 4, 14, 15, 16।

[2] वरूण, डी0पी0, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 13।

[3] *सारत्थप्पकासिनी,* जिल्द 1, पृष्ठ 222।

[4] *अगुत्तर निकाय,* जिल्द 2, पृष्ठ 238।

[5] उपाध्याय, भारत सिह, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 321।

स्थापित होते ही प्राकृतिक वनो एव कानन गृहो का परिदृश्य बदलने लगा और वन, उपवन तथा अमराईयॉ काट कर धरती को नग्न कर दिया गया।[1]

वर्तमान समय मे जनपद मे वन का क्षेत्रफल 816 हेक्टेयर है जो जनपद के कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल 2,84,908 हेक्टेयर का 0 28 प्रतिशत है।[2] जबकि प्रदेश मे वनो का प्रतिशत 17 55 है। इस प्रकार जनपद मे वनो का क्षेत्रफल अत्यल्प है जबकि पडोसी जनपद गोरखपुर मे 33,604 हेक्टेयर तथा महाराजगज मे 22,265 हेक्टेयर वन पाया जाता है।[3] जनपद मे उपलब्ध जगल इमारती लकडी एव ईधन के प्रयोग मे आने वाली लकडियो के है। सामाजिक वानिकी विभाग द्वारा वृक्षारोपण कार्यक्रम अभियान के तहत चलाया जा रहा है। इन कार्यक्रमो से वन के क्षेत्रफल मे अगले कुछ वर्षो मे वृद्धि की सभावना है।

जनपद मे विभिन्न प्रकार की मिट्टी तथा पानी के अधिकता के कारण सिन्ध गगा के मैदान विशेषकर पूर्वी उत्तर प्रदेश मे पाये जाने वाले सभी प्रकार के वृक्ष और वनस्पतियॉ पायी जाती है। जनपद मे बडे जगल बहुत कम है। मुख्यत जनपद के तराई क्षेत्र मे जगल पाये जाते है। खड्डा, विशुनपुर, नेबुआ नौरगिया विकास खण्ड मे जगलो की बहुलता है। जगल की इमारती लकडियो मे शाल और शीशम प्रमुख है। वृक्षो मे सबसे अधिक आम के बगीचे मिलते है जो फल और लकडी दोनो दृष्टियो से लोगो को बहुत प्रिय है। नालो के किनारे नीची भूमि मे, जो बरसात मे जल मग्न हो जाती है, जामुन आदि वृक्ष पाये जाते है। इमली और जामुन के वृक्ष अधिकाशत सडको के किनारे मिलते है। इसी प्रकार बगीचो मे कटहल के वृक्ष भी पाये जाते है। इसका वृक्ष छायादार होता है और फल बडे आकार का होता है। ऑवला, बेल तथा महुआ के वृक्ष भी बगीचो मे पाये जाते है। वर्तमान मे बागो के किनारे तथा खेतो के मेड पर बहुत से यू0के0 लिप्टस के वृक्ष भी लगा दिये गये है। शाल, शीशम आदि इमारती लकडी के वृक्ष सडको के किनारे

---

[1] पाण्डेय, राजबली, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 18।

[2] *समाजार्थिक समीक्षा*, जनपद कुशीनगर, 2000 – 2001, पृष्ठ 9।

[3] सामाजार्थिक समीक्षा, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 9।

तथा कही–कही बागो मे पाया जाता है। बेर, अमरूद और लीची के बगीचे भी कही–कही पाये जाते है। नीम का वृक्ष पूरे जिले मे पाया जाता है। बबूल और खैर कही–कही पाये जाते है। बॉस प्राय गॉवो के पास देखने को मिलता है। घर पर छप्पर डालने के फूस बहुतायत से मिलते है। बडे वृक्षो मे बरगद, पीपल, पाकड, गूलर, सेमल आदि अधिक मिलते है। झाडियो मे जो सामान्यत यहॉ उगती है – ऐल, अकोला, वन निबुआ, वन तुलसी, बेर, झऊ, मुसाली, रोहिनी, बॉस, बेत, मदार, करौदा, नरकट, पतहर, खर, कुस और सर्पगन्धा है। दूधी–बेल, गुरिच, हरिजोर और कालीबेल जनपद मे प्राप्त होने वाली प्रमुख लताएँ है। घासो मे मुख्यत नरकुट, केन, दूब, मोथा, जनेवा, विरल, भाग, बथुआ और कुस जिले मे हर जगह मिलता है।

इसके अतिरिक्त उद्यानो, बागो, वृक्षो एव झाडियो के अन्तर्गत 1,927 हेक्टेयर क्षेत्र आता है।[1] आम, अमरूद, जामुन, महुआ, केला, पपीता, लीची एव कटहल यहॉ का मुख्य फल है, जिनके बाग जिले मे जगह–जगह पाये जाते है।

कृषि तथा सिचाई के साधन

जनपद में कृषको के आय का प्रमुख स्रोत खेती है तथा लगभग 85 प्रतिशत जनसख्या कृषि पर निर्भर है। यद्यपि कि जनपद का कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल 2,84,908 हेक्टेयर है, किन्तु कृषि गणना वर्ष 1995–96 के अनुसार जोतो का कुल क्षेत्रफल 2,23,103 हेक्टेयर (जनपद के कुल क्षेत्रफल का 58 49 प्रतिशत) तथा कुल जोतो की सख्या 4,15,442 है, जो कमश प्रदेश मे जोतो के क्षेत्रफल का 1 24 प्रतिशत तथा प्रदेश के जोतो की सख्या का 2 06 प्रतिशत है। जनपद मे प्रति जोत औसत 0 53 हेक्टेयर तथा प्रति परिवार औसत 0 63 हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि है।[2] भू–लेख वर्ष 1998–99 के अनुसार जनपद के कुल कृषि योग्य भूमि 2, 26, 635 हेक्टेयर थी, जिसमे से बोया गया क्षेत्रफल 2,25,382 हेक्टेयर था जो कृषि

---

[1] *सामाजार्थिक समीक्षा,* पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 9।

[2] तदैव।

योग्य भूमि का 99 44 प्रतिशत तथा प्रतिवेदित क्षेत्रफल का 79 10 प्रतिशत है।[1] सन्दर्भित वर्ष मे जनपद मे प्रति हेक्टेयर उर्वरको का प्रयोग 132 2 कि0ग्रा0 रहा जो प्रदेश (116 3 कि0ग्रा0 प्रति हेक्टेयर) की तुलना मे अधिक है। यहॉ मुख्य रूप से बलुई, मटियार, दोमट तथा भाट मिट्टी पायी जाती है। ऋतु की दृष्टि से जनपद मे मुख्यत तीन प्रकार की फसले पैदा होती है –

1 रबी।

2 खरीफ और

3 जायद।

1 रबी

लगभग 1,26,455 हेक्टेयर क्षेत्र मे रबी की फसल बोयी जाती है। इसकी बुवाई अक्टूबर–नवम्बर से प्रारम्भ होती है तथा मार्च–अप्रैल तक काट ली जाती है। रबी की प्रमुख फसले गेहूॅ, जौ, चना, मटर, लाही/सरसो आदि है।

2 खरीफ

खरीफ की खेती लगभग 92,397 हेक्टेयर भूमि पर होती है। इसकी बुवाई जून, जुलाई मे होती है तथा अक्टूबर–नवम्बर तक काट ली जाती है। खरीफ की प्रमुख फसले धान, मक्का, अरहर, मूग, उडद, ज्वार, बाजरा आदि है।

3 जायद

जायद की खेती लगभग 7,293 हेक्टेयर भूमि पर की जाती है। यह मुख्यत मार्च–अप्रैल मे बोयी जाती है और जून–जुलाई मे काट ली जाती है। जायद की प्रमुख फसले ककरी, खरबूज, तरबूजा, शकरकद आदि है।

गन्ना और आलू जनपद की प्रमुख वाणिज्यिक फसले है। मीलो के नियमित रूप से न चलने, गन्ने के कय मे अनियमिता तथा समय से उसका भुगतान न होने के कारण किसानो मे गन्ने की खेती के प्रति उदासीनता बढती जा रही है। इनके अतिरिक्त आलू, परवल, गोभी, टमाटर, बैगन, कद्दू, लौकी, करैला,

---

[1] पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 11।

गाजर, मूली, प्याज, लहसुन, मिर्च, हल्दी, अदरक, धनियॉ आदि साग–सब्जियॉ भी उगायी जाती है।

कृषि उपज के सग्रहण/विपणन के लिए जनपद मे एक मण्डी समिति तथा दो कय–विक्रय सहकारी समितियॉ कार्यरत है।

सिचाई के साधन

जनपद मे सिचाई के समस्त साधन जैसे नहरे, नलकूप, कुएॅ एव तालाब उपलब्ध है, परन्तु नहरो का जाल विछा होने के कारण जनपद मे सबसे अधिक सिचाई नहरो द्वारा ही किया जाता है। इसके बाद कमश नलकूप, कूप एव तालाबो द्वारा सिचाई किया जाता है (तालिका स0–1)। जनपद मे सकल सिचित क्षेत्रफल 2,23,804 हेक्टेयर तथा शुद्ध सिचित क्षेत्रफल 1,86,377 हेक्टेयर है।[1]

मार्च 2000 की स्थिति के अनुसार जनपद मे नहरो की कुल लम्बाई 1,491 किमी0 है, जिनमे अधिकाश गण्डक परियोजना के अन्तर्गत आते है। इनके अतिरिक्त 129 राजकीय नलकूपो, 92 निजी नलकूपो तथा 8,888 भू–स्तरीय पम्प सेटो एव अन्य साधनो द्वारा सिचाई का कार्य पूरा किया जाता है।

तालिका सख्या 1

स्रोतवार सिचाई के साधनो द्वारा सिचाई का तुलनात्मक विवरण[2]

क स	सिचाई के स्रोत	सिचित क्षेत्रफल, वर्ष 1998–99 जनपद कुशीनगर	
		हेक्टेयर	प्रतिशत
1	2	3	4
1	नहर	77,841	53 2
2	नलकूप	59,390	40 6
3	कुँआ	7,847	5 4
4	तालाब, झील/पोखरि	58	0 00
5	अन्य	1,241	0 8

---

[1] *विकास पुस्तिका,* कुशीनगर, 2001–2002, पृष्ठ 37।

[2] सामाजार्थिक समीक्षा, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 16।

बडी गण्डक तथा छोटी गण्डक जनपद की प्रमुख नदियॉ है, जो अपनी शाखाओ के साथ फैली हुयी है। इन नदियो मे लगभग प्रतिवर्ष बाढ आती है जिससे कृषि को भारी क्षति पहुॅचती है। इसके अतिरिक्त वर्षा के समय पानी का जल जमाव होने से काफी क्षेत्र प्रभावित होता है।

जीवजन्तु

पहले जनपद मे विविध प्रकार के जगली जानवर, पक्षी और रेगने वाले जन्तु बडी सख्या मे पाये जाते थे। 1858 ई0 तक गोरखपुर से पडरौना जाने वाले डाकियो का रास्ता बाघ रोक देते थे। कृषि के लिए एव अन्य उद्देश्यो से जगलो के कटाव तथा बेरोकटोक शिकार के चलते जनपद के बहुत से जगली जानवर वस्तुत लुप्त हो चुके है। साथ ही अन्य जीव जन्तुओ की सख्या मे भी भारी कमी आयी है।

वर्ष 1997 की पशु गणना के अनुसार जिले मे कुल पशुओ की सख्या 5,23,949 थी।[1] गाय, बैल, भैस, घोडे, टट्टू, भेड, बकरी, सुअर, गधे, कुत्ते आदि जनपद के प्रमुख पालतू पशु है। बैल हल जोतने और गाडी खीचने के काम आता है। गाय और भैस दूध देने वाले पशु है। घोड और टट्टू से बोझ ढोने और इक्का खीचने का काम लिया जाता है। भेड और बकरियॉ प्राय ऊन के लिए पाली जाती है, जिससे कम्बल तैयार होता है। इनका गोबर खाद के काम आता है।

इस प्रकार जिले की आर्थिक समस्याओ के समाधान मे पशुधन का एक महत्वपूर्ण स्थान के साथ ही पशुपालन कृषि का प्रधान एव अपरिहार्य अग है।

जगली पशुओ की सख्या एव उनकी प्रजातियॉ इस जनपद मे अधिक नही है। बडे मासाहारी पशु जैसे चीता, पेन्थर, लेपर्ड नही मिलते है, लेकिन छोटे मासाहारी पशु जैसे भेडिया, गीदड, लोमडी जगलो और नदी–नालो के किनारे पाये जाते हैं। घास खाने वाले जानवरो मे हिरणो के कुछ प्रकार जो विशेषत जनपद के उत्तरी भाग मे पाये जाते है तथा नीलगाये जो वनो के बाहरी भाग, झाडियो और बडे–बडे बागो मे रहती है, सरक्षित है। जगली सूअर नदियो के किनारे और तराई

---

[1] *सामाजार्थिक समीक्षा,* पूर्वोद्धृत पृष्ठ, 17।

क्षेत्रो मे मिलते है। अन्य जगली जानवरो मे लगूर, लाल बन्दर, खरगोश और चूहे प्रमुख है। साही प्राय ऊॅचे टीले के आस–पास पाये जाते है। कुत्ते जगली और पालतू दोनो ही अवस्था मे मिलते है।

पशओ की तरह जनपद मे पक्षियो की भी विविधता है। प्राय जिले मे पायी जाने वाली चिडियॉ वही है, जो आस–पास के जिलो मे पायी जाती है। कौआ, कोयल और गौरैया सबसे अधिक पायी जाती है। तितर, चकोर, बटेर, जलमुर्गे आदि विशेष आकषर्ण के पक्षी है। शरद के प्रारम्भ मे बहुत से पक्षी हिमालय से मैदानो मे उतर आते है जिनमे खजन प्रसिद्ध है। अन्य पक्षियो मे बत्तख, कबूतर, तोता, वनमुर्गे, मुर्गा–मुर्गी, बाज, हारिल, पडुक, महोख, नीलकठ, उल्लू, बगुला आदि प्रमुख है।

रेगने वाले जन्तुओ मे जहरीले और गैर जहरीले सॉप जैसे करइत, गेहुँअन, धामिन, कोबरा, डोडहा, पनईत, नेवला, गिरगिट, छिपकली, बिच्छू प्रमुख है। जलचरो मे सूस, घडियाल और मगरमच्छ नही के बराबर गडक नदी मे मिलते है। जलचरो मे मेढक और जोक की भी गणना की जा सकती है। कछुए और मछलियॉ नदियो, झीलो और तालाबो मे पायी जाती है। प्रमुख मछलियो मे रोहू, भाकुर, टेगना, बरारी, सौर, वाम, चेलवा, सीगी, झीगा आदि है। मछली खाद्य सामग्री का एक महत्वपूर्ण अग है और बहुत से लोग मछली पकडने और बेचने के कार्य मे लगे हुए है।

भाषा, जाति और धर्म

जनपद की मुख्य भाषा हिन्दी है। जिले मे हिन्दी बोलने वालो की सख्या 1991 की जनगणना के अनुसार 43,28,254 है, जो कुल जनसख्या का 97 49 प्रतिशत है। दूसरा स्थान उर्दू का है। उर्दू बोलने वालो की सख्या 1,10,541 है, जो कुल जनसख्या का 2 49 प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त बगाली पजाबी आदि भाषाए बोलने वालो की सख्या अत्यल्प है। जिले मे हिन्दू धर्म को मानने वाले लोग सबसे अधिक है। इनकी कुल सख्या 16,75,283 है, जो जिले की कुल जनसख्या का 74 93 प्रतिशत है। हिन्दू धर्म के अतिरिक्त मुस्लिम (24 84 प्रतिशत),

सिक्ख–इसाई (04 प्रतिशत), बौद्ध (0 16 प्रतिशत) तथा जैन (02 प्रतिशत) धर्म को मानने वाले लोग भी है।[1]

त्यौहार एवम मेले

देश के अन्य भागो की भाति इस जनपद मे त्यौहारो तथा उत्सवो के मनाने की परम्परा काफी पुरानी है। जिले के प्रमुख त्यौहार–होली, दीवाली, दशहरा, जनमाष्टमी, नागपचमी, रक्षा बन्धन आदि है। मुस्लिम त्यौहारो मे मुहर्रम, ईद आदि प्रमुख है। अलग–अलग अवसरो पर मुख्य रूप से तमकुही, शिवाघाट, बॉसी, कुशीनगर, कुबेरस्थान, भिसवा रामपुर मे मेला लगता है।

शिक्षा

किसी क्षेत्र के आर्थिक एवम सामाजिक विकास के लिए शिक्षा की भूमिका अति महत्वपूर्ण होती है। शैक्षणिक दृष्टि से जनपद कुशीनगर पिछडा हुआ है। इस समय जनपद मे 1387 प्राथमिक विद्यालय, 146 उच्च प्राथमिक विद्यालय, हाई स्कूल–राजकीय 3, वित्तिय 17 तथा वित्तविहीन 26, इण्टरमीडियट–वित्तीय 37 तथा वित्त विहीन 20, डिग्री कालेज–वित्तीय 4 तथा वित्त विहीन 3 कार्यरत है।[2] जिले मे नर्सरी स्कूलो का प्रभाव अधिक बढ रहा है जिसके कारण छात्रो तथा अभिभावको का झुकाव इनकी ओर अधिक हो रहा है। जनपद के विभिन्न स्थानो पर तीन औद्योगिक प्रशिक्षण सस्थान कार्यरत है, जिसमे महिलाओ तथा पुरूषो को विभिन्न व्यवसायो का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। जनपद मे 1 शिक्षण–प्रशिक्षण सस्थान पडरौना मे कार्यरत है, जिसमे पुरूष एवम महिलाओ को प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। जनपद मे कोई उच्च तकनीकी प्रशिक्षण सस्थान न होने के कारण छात्रो को जनपद से बाहर जाना पडता है।

जनस्वास्थ्य · किसी भी क्षेत्र के आर्थिक उत्पादकता मे वृद्धि वहॉ के निवासियो के स्वास्थ्य पर निर्भर करता है। जनपद मे विभिन्न सस्थाओ के माध्यम

---

[1] *साख्यिकीय पत्रिका,* कुशीनगर जनपद 2001, पृष्ठ 33।

[2] *सामाजार्थिक समीक्षा,* पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 27, 28।

से स्वास्थ्य एव चिकित्सा सुविधाये उपलब्ध करायी जाती है। इस क्षेत्र मे विशेष सहयोग राज्य सरकार एव स्थानीय निकायो का रहता है। इस समय जनपद मे दो जिला अस्पताल (महिला एव पुरूष), एक क्षय तथा एक कुष्ठ अस्पताल कार्यरत है। जनपद मे 7 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र , 61 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 41 होमियोपैथिक तथा 41 आयुर्वेदिक चिकित्सालय, 1 यूनानी चिकित्सालय, 18 परिवार एव मातृ शिशु कल्याण मुख्य केन्द्र तथा 343 उपकेन्द्र स्थापित है।[1]

उद्योग–धन्धे

जनपद कुशीनगर औद्योगीकरण के क्षेत्र मे, जो कि वर्तमान समय मे विकास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार है, अत्यन्त पिछडा हुआ जिला है। इसका प्रमुख कारण यह है कि स्वतत्रता पूर्व यह क्षेत्र अग्रेजी सत्ता का विरोध करता रहा तथा स्वतत्र्योत्तर भारत मे इस क्षेत्र की राजनीति कॉग्रेसी शासन की प्रमुख धारा से दूर बहुत समय तक समाजवादियो के हाथ मे रही। चूँकि किसी भी स्थान क्षेत्र का औद्योगीकरण मुख्यत वहा पाये जाने वाले प्राकृतिक ससाधनो पर निर्भर करता है और इस रूप मे जनपद् कुशीनगर कृषि प्रधान क्षेत्र होने के कारण यहॉ पर कृषि पर आधारित उद्योग ही विकसित हो पाये है।

जनपद कुशीनगर के उद्योगो का विश्लेषण तीन श्रेणियो मे कर सकते है –

1 बडे पैमाने के उद्योग।

2 लघु या छोटे पैमाने के उद्योग तथा

3 कुटीर उद्योग।

चीनी मिलो के सिवाय जनपद मे कोई वृहद् उद्योग नही है। वर्तमान मे जनपद मे कुल 9 चीनी मिले है, जिनका विवरण निम्नलिखित है –

1 द यूनाइटेड सुगर मिल, सेवरही इसकी स्थापना सन् 1914 ई0 मे हुई थी। यह गोरखपुर–सीवान रेलवे मार्ग के किनारे स्थित है। यहॉ मुख्यत चीनी तथा शीरा का उत्पादन होता है।

---

[1] पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 28।

2 गनेश्वर सुगर मिल, रामकोला इसकी स्थापना सन् 1934ई0 मे हुई थी। यह गोरखपुर पडरौना रेलवे मार्ग पर स्थित है। यहा भी मुख्यत चीनी एवम शीरा का उत्पादन होता है।

3 यू0पी0 स्टेट मिल रामकोला इसका पुराना नाम खेत्तान सुगर मिल है। इसकी स्थापना सन् 1932 ई0 मे हुई थी। यहा मुख्यत चीनी शीरा एव खाद का उत्पादन होता है।

4 कानपुर सुगर वर्क्स, कटकुईयॉ इसकी स्थापना सन् 1933ई0 मे हुई थी। इसमे मुख्यत चीनी व शीरा का उत्पादन होता है।

5 यू0पी0 चीनी मिल, खड्डा इसकी स्थापना भी 1933ई0 मे हुई थी। यहॉ चीनी, शीरा व खोईया का उत्पादन होता है।

6 कानपुर सुगर वर्क्स, कप्तानगज इसकी स्थापना सन् 1934 ई0 मे हुई थी। चीनी व शीरा इसका प्रमुख उत्पादन है।

7 लक्ष्मी देवी सुगर मिल, छितौनी यह गण्डक के किनारे स्थित है।

8 रामपुर चीनी वर्क्स, पडरौना यहॉ शीरा, चीनी एव खाद का उत्पादन होता है।

9 लक्ष्मीगज मे भी एक शुगर मिल स्थापित है।

जनपद मे एकमात्र मद्य निर्माण शाला कप्तानगज डिस्टलरी कप्तानगज है जिसकी स्थापना 1945 मे हुई थी। जनपद मे एक गन्ना प्रजनन एव अनुसधान केन्द्र सेवरही मे है जिसकी स्थापना 22 जून, 1975 मे हुई थी। यहॉ प्रजनन द्वारा गन्ना की नयी नस्ले तैयार की जाती है।

इन्जीनियरिग उद्योग

यह मुख्यत पडरौना, हाटा, कसया सेवरही, रामकोला, कप्तानगज, लक्ष्मीगज तथा खड्डा मे विकसित है।

लघु एव कुटीर उद्योग

लघु एव कुटीर उद्योगो मे कुक्कुट पालन, रेशम उद्योग, सूत उद्योग, कपडा बनाने, कम्बल बनाने, रगाई–छपाई का कार्य, लोहे के बाक्स, अलमारी, सदूक

आदि समान बनाने का कार्य, भुजिया चावल तैयार करना, चावल मिले एव आटा मिले, मिट्टी के वर्तन बनाना, रस्सी बनाना, जूते बनाना, चटाईया बनाना, लकडी के समान बनाना, सुतली काटना आदि प्रमुख है। गन्ने से गुड एव खडसारी बनाने का उद्योग हर जगह मिलता है। पडरौना मे फूल (एक प्रकार की धातु) के बर्तन बनाये जाते है। ईट–भट्टा उद्योग पूरे जिले मे मिलता है।

पर्यटन उद्योग से भी आर्थिक विकास को बढावा मिला है। इस जनपद के प्रमुख पर्यटन स्थल कुशीनगर और पावा है।

यातायात के साधन

किसी भी क्षेत्र के विकास मे सडक यातायात की सुविधाओ का महत्वपूर्ण स्थान होता है। सडक परिवहन अवागमन की सुविधा एवम औद्योगिक विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इससे माल एव जीवनोपयोगी वस्तुओ की उपलब्धता सुनिश्चित करने मे काफी मदद मिलती है। सडक यातायात के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रो मे उत्पादित वस्तुओ को बाजार तक पहुचाया जाता है। इतना ही नही बेरोजगार व्यक्तियो को रोजगार के अवसर प्रदान करने मे यातायात की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। आर्थिक विकास की कडी मे सडको के महत्व को ध्यान मे रखते हुए विभिन्न योजनाओ के अन्तर्गत सडको का अधिकाधिक निर्माण कराने का अनवरत प्रयास जारी है। जनपद कुशीनगर मे आवागमन के प्रमुख साधन रेलवे और बस है।

वर्ष 1999–2000 के अन्त तक पक्की सडको की कुल लम्बाई 1,700 किमी0 थी, जिसमे 1,158 किमी0 लोक निर्माण विभाग द्वारा निर्मित थी।[1] प्रधानमत्री ग्राम सडक योजना के अन्तर्गत 1000 से अधिक आबादी वाले ग्रामो को पक्की सडक से जोडने का कार्यक्रम चलाया जा रहा है। जनपद से होकर मात्र एक राष्ट्रीय राज्यमार्ग–28 गुजरता है। राजकीय मार्गो का अभाव है जबकि जिला मार्गो का जाल सा बिछा है।

---

[1] *साख्यिकी पत्रिका,* पूर्वोद्धृत पृष्ठ 4।

राष्ट्रीय राजमार्ग, 28

यह राजमार्ग यातायात की दृष्टि से जनपद का सर्वाधिक महत्वपूर्ण मार्ग है। यह गोरखपुर से होकर जनपद मे हाटा तहसील के सुकरौली बाजार से कुछ दूर पहले प्रवेश करती है और हाटा, कुशीनगर, कसया, जोकवॉ, फाजिलनगर, पटहेरवॉ तथा तमकुही–सलेमगढ होते हुए बिहार प्रान्त के गोपालगज जिले मे प्रवेश कर जाती है। इस सडक के दोनो ओर छायादार वृक्ष लगाये गये है। जनपद के प्रमुख जिला मार्ग इस प्रकार है –

1 गोरखपुर–कसया–पडरौना मार्ग।
2 गोरखपुर–कसया–तमकुहीरोड मार्ग।
3 पडरौना–खड्डा–छितौनी मार्ग।
4 पडरौना–रामकोला–कप्तानगज मार्ग।
5 पडरौना–दुधई–तमकुहीरोड मार्ग।
6 पडरौना–पटहेरवॉ–समऊर मार्ग।
7 पडरौना–कसया–देवरिया मार्ग
8 पडरौना–तुर्कपट्टी–पावानगर मार्ग।
9 कसया–रामकोला मार्ग।
10 कसया–तुर्कपट्टी–सेवरही मार्ग।
11 हाटा–कप्तानगज मार्ग।
12 हाटा–पिपराइच मार्ग।
13 हाटा–देवरिया मार्ग।

इनके अतिरिक्त फाजिलनगर से बघौच घाट, पावनगर से समउर, तमकुही से समउर आदि मार्ग अन्य अच्छी पक्की सडके है।

रेलवें ·

आवागमन एव माल ढुलाई के क्षेत्र मे भारतीय रेल का प्रमुख स्थान है। जनपद मे कुल रेलवे स्टेशनो (हाल्ट सहित) की कुल सख्या 18 है तथा रेलवे लाइन की कुल लम्बाई 177 किमी0 है, जिनमे बडी लाइन 14 किमी0 तथा छोटी

लाइन 163 किमी0 लम्बी है।[1] जनपद कुशीनगर मे पूर्वोत्तर रेलवे की छोटी लाइन कप्तानगज से लक्ष्मीगज, रामकोला, पडरौना, कठकुईया, दुधई, तमकुही रोड, और तरया सुजान होते हुए बिहार प्रान्त मे चली जाती है तथा बडी लाइन गोरखपुर से कप्तानगज खडड्ा तथा पनीहवॉ होते हुए बिहार को चली जाती है।

जनपद मे बीस–सूत्री कार्यक्रमो के बढते कदम

देश तथा प्रदेश के अन्य जिलो की भॅाति जनपद कुशीनगर मे भी बहुमुखी विकास के अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे है। कुछ का विवरण इस प्रकार है–

भूमि सुधार योजना

इसके अन्तर्गत भूमि सरक्षण विभाग द्वारा भूमि सुधार कार्यक्रम चलाकर अकृष्य भूमि को कृषि योग्य बनाना, भूमि को क्षरण से बचाना, नाले के किनारे वृक्षारोपण कराना, कटान से बचाना आदि शामिल है।

रेशम विकास कार्यक्रम

देश और प्रदेश मे रेशम का उपयोग तेजी से बढ रहा है। जनपद कुशीनगर की जलवायु रेशम उत्पादन के अनुकूल है। जनपद की मिट्टी बलुई तथा दोमट, दोनो प्रकार की है, जो शहतूत पौधारोपण के अनुकूल है। इन्ही सभावनाओ को वास्तविकता मे बदलने के लिए जनपद मे 15 राजकीय रेशम फार्म विकसित किया गया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत रेशम ग्रामो का विकास किया जा रहा है। उ0 प्र0 कृषि विविधीकरण परियोजना के अन्तर्गत विकास खण्ड दुधई तथा खड्डा मे 54 5 एकड का शहतूत पौधारोपण 101 कृषको के यहॉ कराया गया है। इस उद्योग के विशेष लाभ यह है कि यह खेती पर आधारित है, जिसे घरेलू या कुटीर उद्योग के रूप मे अपनाया जा सकता है। इस उद्योग के मुख्य घटक जैसे शहतूत वृक्षारोपण, रेशम कीटपालन, धागाकरण, एव वस्त्र निर्माण के माध्यम से

---

[1] *साख्यिकी पत्रिका,* पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 2।

ग्रामीण अँचलो के भूमिहीन खेतिहर मजदूर एव अल्प आय परिवारो को रोजगार उपलब्ध कराया जा सकता है।

स्वत रोजगार योजना

इसके अन्तर्गत अनुसूचित जाति के गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले पात्र परिवारो को उनके सामाजिक, आर्थिक तथा शैक्षिक विकास करने हेतु उनके रूचि एव आवश्यकतानुसार बैको के माध्यम से ऋण उपलब्ध कराया जाता है।

समन्वित बाल विकास परियोजना

यूनिसेफ की रिपोर्ट के आधार पर 2 अक्टूबर 1975 ई0 मे समन्वित बाल विकास परियोजना की स्थापना भारत मे हुई थी। जनपद कुशीनगर के तीन विकास खण्डो मे इस परियोजना के कमश हाटा, पडरौना, एव खड्डा मे 469 केन्द्र सचालित है। वर्ष 2000–01 से जनपद के शेष 11 विकास खण्डो मे यह योजना सचालित की जा रही है जिसमे शासन द्वारा 1622 केन्द्र स्वीकृत है।[1] इस योजना के माध्यम से ऑगनबाड़ी कार्यक्रमो के द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के महिलाओ एव गरीब बच्चो को निम्न सेवाएँ प्रदान की जाती है–

1 टीकाकरण

2 स्वास्थ्य जॉच

3 सदर्भित सेवाएँ

4 वृद्धि निगरानी एव पोषाहार

5 स्कूल पूर्व शिक्षा

,6 पोषण एव स्वास्थ्य शिक्षा।

इसके लिए ऑगनबाडी कार्यकत्रियो तथा सहायिकाओ की नियुक्ति की गई है।

सम्पूर्ण साक्षरता अभियान निरक्षरता एक सामाजिक अभिशाप है। जहॉ पूरा विश्व 21वी सदी मे प्रवेश कर रहा है वही उत्तर प्रदेश मे विशेषकर पूर्वी

---

[1] *विकास पुस्तिका,* पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 22।

जनपदो पर निरक्षरता रूपी कलक का धब्बा लगा हुआ है , जिसे दूर करने के लिए देश एव परदेश के अन्य जिलो की भॉति जनपद कुशीनगर मे भी सम्पूर्ण साक्षरता अभियान चलाया जा रहा है। इसका उद्देश्य जनपद के प्रत्येक नागरिक को साक्षर बनाना है। विशेष रूप से 15 से 35 वर्ष के महिला एव पुरूष निरक्षरो को। एक सर्वे के अनुसार जनपद मे निरक्षरो की कुल सख्या 4,28,150 है। स्कूल न जाने वाले बच्चो को प्राथमिक विद्यालयो मे प्रवेश दिलाने तथा अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रो पर पजीकृत करवाना भी इस कार्यक्रम का एक लक्ष्य है।

जनपद मे सम्पूर्ण साक्षरता कार्यक्रम के प्रथम चरण के अर्न्तगत 6 विकास खण्डो–सुकरौली, हाटा, कसया, फाजिलनगर, तमकुही, तथा पडरौना मे पठन –पाठन का कार्य पूरा किया जा चुका है। द्वितीय चरण के शेष सात विकास खण्डो –सेवरही, दुधई, विशुनपुरा, रामकोला, कप्तानगज, नेबुआ नौरगिया एव खड्डा मे धनाभाव के कारण पठन–पाठन का कार्य शुरू नही हो सका है।

अन्त्योदय अन्न योजना

इसके अर्न्तगत गरीबी रेखा के नीचे के पात्र लाभार्थियो को सस्ते दर पर खद्यान्न उपलब्ध कराया जाता है। लाभार्थियो को प्रत्येक माह 25 किग्रा0 खाद्यान्न, जिसमे गेहू रू0 2 प्रति किग्रा0 तथा चावल रू0 3 प्रति किग्रा0 की दर से उपलब्ध कराया जाता है।

यह योजना अप्रैल 2001 से लागू है। माह अप्रैल 2001 से मार्च 2002 तक कुल 1,11,156 5 कुन्तल खद्यान्न का वितरण किया जा चुका है। जिले मे इस योजना से लाभान्वित होने वालो की सख्या 46550 है।[1]

स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना

इस योजना के अन्तर्गत गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले ग्रामीण परिवारो को समूह मे अथवा व्यक्तिगत ऋण दिलाकर लाभान्वित किया जाता है।

---

[1] *विकास पुस्तिका,* पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 34।

स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना

इस योजना के अर्न्तगत गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले शहरी व्यक्तियो को स्वय का रोजगार करने हेतु अधिकतम 50000 रू0 तक ऋण उपलब्ध कराया जाता है। विभाग द्वारा स्वीकृत ऋण का 15 प्रतिशत धनराशि अनुदान के रूप मे दी जाती है।

डवाकुआ

इस योजना के अन्तर्गत गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाली उन महिलाओ को जो कि समूह मे रोजगार करना चाहती है, सगठित किया जाता है तथा उनका सोसाइटी बनाकर बैक के माध्यम से ऋण उपलब्ध कराया जाता है। इस योजना के अर्न्तगत स्वीकृत ऋण का 50 प्रतिशत या अधिकतम 1 25 लाख रू0 अनुदान के रूप मे दिया जाता है।

सामाजिक वानिकी

इसके अन्तर्गत समाज के लोगो को वृक्षारोपण के लिए प्रेरित किया जाता है तथा विभाग द्वारा सडक, नहर, रेल की पटरियो एव ग्राम समाज की खाली पडी भूमि पर वृक्षारोपण कराया जाता है। सामाजिक वानिकी प्रभाग कुशीनगर द्वारा वर्ष 2000–01 मे 51 हेक्टेयर क्षेत्र पर वृक्षारोपण कार्य कराया गया। वर्ष 2001–02 मे अक्टूबर 2001 तक सडक, नहर, रेल की पटरियो एव ग्राम समाज की खाली पडी भूमि पर 198 10 हेक्टेयर क्षेत्र मे वृक्षारोपण कराया गया।[1]

इन योजनाओ के अतिरिक्त कुछ अन्य योजनाएँ भी विकास पथ पर अग्रसर है, जिनमे राष्ट्रीय परिवारिक लाभ योजना, विधवा, किसान वृद्धावस्था पेशन, इन्दिरा आवास, बायो गैस सयत्र योजना, उन्नत चूल्हा, राष्ट्रीय बचत, जवाहर ग्राम योजना, जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यकम जिसमे नि शुल्क पाठ्य–पुस्तक वितरण, शिक्षा मित्र, स्कूल चलो अभियान, प्रमुख है। अल्पसख्यक एव परिवार कल्याण से सम्बधित योजनाएँ, आपरेशन ग्रीन, प्रधानमत्री ग्रामोदय योजना, भूतपूर्व सैनिको के

[1] विकास पुस्तिका, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 26।

कल्याण एव पुर्नवास से सम्बधित सैम्फैक्स (I,II,III) , अम्बेदकर ग्राम विकास कार्यक्रम, जिला सेक्टर योजना, अन्नपूर्णा योजना, मत्स्य विकास एव कुक्कुट विकास कार्यक्रम, नि शुल्क बोरिंग, महिला समृद्धि योजना महत्वपूर्ण है।

मूल आदिम जातियाँ

कुशीनगर जनपद मे वर्तमान समय मे मूल आदिम जातियो के अवशेष कम मिलते है। कुक ने गगा के मैदान की आदिम जातियो का सर्वप्रथम विवरण प्रस्तुत किया था।[1] 1971 ई0 की जनगणना रिपोर्टो के अनुसार देवरिया जनपद, जिसमे विभाजन के पूर्व कुशीनगर जिला भी शामिल था, की आखेटक जातियो मे बहेलिया, वधिक, मुसहर, कजड जातियॅा अभी भी पायी जाती है, जिनमे कुछ सीमा तक आखेटक और सग्रहक प्रवृत्ति बची हुई है।[2] इन वन्य जातियो मे से कजडो के आवासीय प्रकार, शारीरिक प्रारूप, पहनावा, आभूषण, सामाजिक सगठन, खाद्य साम्रगी, शिकार मे प्रयुक्त उपकरण एव शवाधान प्रणाली के बारे मे डा0 मालती नागर और डा0 बी0 एन0 मिश्र ने विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है।[3]

---

[1] कुक डब्ल्यू, 1996, *द ट्राइब्स एण्ड कास्ट्रस ऑफ द नार्थ–वेस्टर्न प्रॉविन्सेज,* अक 1–5।

[2] नागर, मालती और मिश्र, बी0एन0, 1989, *हण्टर गैदरर्स इन एन अग्रेरियन सेटिग दि नाइन्टीन्थ, सेचुरी सिचुएशान इन दि गगा प्लेन्स, मैन एण्ड इन्वायरमेण्ट,* वाल्यूम 13, पृष्ठ 66–78।

[3] नागर, मालती और मिश्र, बी0एन0, 1990, *द कन्जर्स–ए–हण्टिग गैदरिंग कम्युनिटी ऑफ द गगा वैली, उ0प्र0, मैन एण्ड इन्वायरमेट,* वाल्यूम 15, पृष्ठ 71–78।

अध्याय 2

कुशीनगर जनपद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

आधुनिक काल के इतिहासकारो ने भारतवर्ष का इतिहास लिखने का जो प्रयत्न किया है उसमे अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है। इतिहास के प्राय सभी पक्ष–सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक आदि पर समुचित प्रकाश पडा है। भारत को एक भौगोलिक इकाई मानते हुए निश्चय ही इसमे आधारभूत सास्कृतिक एकरूपता भी समाहित है। कालक्रमानुसार राजवशो का इतिहास लिखने का प्रयत्न हुआ है। थोडा सा प्रयत्न क्षेत्रीय इतिहास लेखन की दिशा मे भी हुआ है, जैसे उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास[1], दक्षिण भारत का इतिहास[2], कन्नौज का इतिहास[3], मालवा का इतिहास, बगाल का इतिहास और कश्मीर का इतिहास, परन्तु इसमे बहुत अधिक कार्य नही हो पाया है। यूँ तो इतिहास का क्षेत्रीय विभाजन उचित नही है और सभव भी नही है, परन्तु क्षेत्रीय अध्ययन लाभकारी होता है क्योकि इससे अस्पष्ट सामान्यीकरण से हटकर इतिहास का ज्ञान और इसकी समझ गहरी होती है। क्षेत्रीय इतिहास से ही एक बडे भौगोलिक इतिहास का पुनर्निर्माण किया जा सकता है और उससे ही बढकर पूरे देश का इतिहास बनता है। पूर्वी उत्तर प्रदेश के इतिहास को प्रकाश मे लाने का सराहनीय कार्य डा0 राजबली पाण्डेय[4] ने किया है, परन्तु उससे कुशीनगर जनपद का इतिहास बहुत

---

[1] पाठक, विशुद्धानन्द, *उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास,* उत्तर प्रदेश हिन्दी सस्थान लखनऊ, 1973 (प्रथम सस्करण)

[2] शास्त्री, के0 ए0 नीलकण्ठ, *दक्षिण भारत का इतिहास,* बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1972 (प्रथम सस्करण)।

[3] त्रिपाठी, रमाशकर, *कन्नौज का इतिहास, बनारस, 1937।*

[4] पाण्डेय, राजबली, *गोरखपुर जनपद और उसकी क्षत्रिय जातियो का इतिहास,* गोरखपुर, 1946

स्पष्ट नही हो पाया है। इस अध्याय मे जनपद के इतिहास की रूपरेखा प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

ऐतिहासिक स्रोतो (साहित्य, अभिलेख, मुद्रा, स्मारक आदि) से कुशीनगर के प्राचीन महत्व के बारे मे विस्तृत जानकारी मिलती है। प्राचीन इतिहास का पुनर्निर्माण मुख्यत ब्राह्मण परम्परा की पौराणिक अनुश्रुतियो, बौद्ध एव जैन परम्परा के साधनो तथा कतिपय विदेशी यात्रियो के विवरण के आधार पर किया जाता है। परन्तु ये साक्ष्य पूर्णतया प्रामाणिक नही है और इनमे कल्पना का भी पर्याप्त अश विद्यमान है। अत इतिहास की वास्तविकता को उजागर करने के लिए पुरातात्विक स्रोतो का सहारा लिया जाता है। वस्तुत यह मानव इतिहास को एक नया आयाम प्रदान करता है।

जनपद कुशीनगर पुरातत्व की दृष्टि से अत्यत समृद्ध है लेकिन इसका सम्बध ऐतिहासिक काल की सस्कृतियो से है। जनपद से जुडी किवदतियो, पुरातात्विक अवशेषो—मूर्तियॉ, सिक्के, अभिलेख और अधिकाधिक ईटे तथा मन्दिरो, स्तूपो और बौद्ध मठो के अवशेष जिले मे कई स्थानो पर पाए गए है। इसका आशय है कि जनपद मे विभिन्न कालो के पुरातात्विक अवशेष विद्यमान है।

कुशीनगर जनपद का वर्तमान क्षेत्र मध्यदेश के मध्य मे स्थित है और केन्द्र प्राचीन कोशल राज्य का भाग है जो उत्तर मे हिमालय दक्षिण मे सर्पिका या स्यन्दिका नदी, पश्चिम मे पाचाल देश और पूरब मे मगध (बिहार) से घिरा था।[1] राजबली पाण्डेय के अनुसार मध्य देश एक प्राचीन भौगोलिक नाम है जिसमे पश्चिम

[1] त्रिपाठी, आर० एस०, *हिस्ट्री ऑफ ऐश्येण्ट इण्डिया,* वाराणसी, 1942,पृ० 41,पाठक, वी० एन० *हिस्ट्री ऑफ कोसल अप टू द राइज ऑफ मौर्या,* वाराणसी, 1963, पृ० 39—42, 68, मैकडानेल, ए० ए० एड कीथ, ए० बी०, *वैदिक इण्डेक्स ऑफ नेम्स एड सब्जैक्टस,* वाल्यूम 1—2, वाराणसी, 1958, पृ० 109।

मे सतलज से लेकर पूर्व मे कजगल (राजमहल की पहाडियॉ) तक के प्रदेश सम्मिलित थे।[1] मनुस्मृति मे मध्यदेश की सीमा इस प्रकार दी गई है –

हिमवद विन्ध्ययोर्मध्य यत्प्राग विनशनादपि।

प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेश प्रकीर्तित ।।[2]

अर्थात उत्तर मे हिमालय, दक्षिण मे विन्ध्याचल, पश्चिम मे विनशन और पूर्व मे प्रयाग तक मध्य देश था। कोसल का प्रथम उल्लेख शतपथ ब्राह्मण मे हुआ है। यह इस बात का सूचक है कि कोसल राज्य ऋग्वैदिक काल मे विद्यमान नही था। कोसल का विस्तृत वर्णन बाल्मिकी रामायण मे मिलता है।[3] बौद्ध युग मे यह दो भागो मे बॅटा था। घाघरा नदी के उत्तर का भाग उत्तर कोसल के नाम से जाना जाता था जिसकी राजधानी श्रावस्ती थी। दक्षिणी भाग का नाम दक्षिणी कोसल था, जिसकी राजधानी अयोध्या थी।[4] गौतम बुद्ध का कार्य क्षेत्र होने के कारण कोसल का बौद्ध परम्परा मे विशेष महत्व है क्योकि गौतम बुद्ध कपिलवस्तु मे उत्पन्न हुए थे, श्रावस्ती मे निवास किए थे और कुशीनगर मे उन्हे निर्वाण प्राप्त हुआ था। ये सब स्थल कोसल मे ही विद्यमान थे।

पुराणो और महाकाव्यो के अनुसार इस देश के मूल राजा मनु वैवस्वत थे जो विवस्वान अर्थात सूर्य से उत्पन्न हुए थे। इन्हे भारत के अनेक प्रारम्भिक वशो का जनक भी बताया गया है जिनमे सूर्यवश भी एक था। पौराणिक आख्यानो के अनुसार मनु के पहले न कोई सुव्यवस्थित समाज था और न कोई राज्य। केवल

---

[1] पाण्डेय, राजबली, *गोरखपुर जनपद और उसकी क्षत्रिय जातियो का इतिहास,* गोरखपुर, 1946, पृष्ठ स0 41।

[2] मनुस्मृति, 2–21।

[3] कोसलोनाम विदित स्फीतो जनपदो महान्।
निवष्टि सरयूतीरे प्रभृतधनधान्यवान

[4] डे, नन्दलाल, *द ज्योग्राफिकल डिक्शनरी ऑफ ऐशियण्ट एड मेडिवल इण्डिया,* लन्दन, 1927, पृ 14

मानव समूह था। मनु की कहानी वास्तव मे समाज और राष्ट्र के उदय की कथा है जिसके प्रतिनिधि मनु थे। पौराणिक अनुश्रुति के अनुसार मनु ने अपने 9 पुत्रो और एक पुत्री[1] के बीच अपने साम्राज्य को दस भागो[2] मे बॉट दिया था।

मनु के सबसे बडे पुत्र इक्ष्वाकु थे। इनको मध्यदेश का राज्य मिला जिसकी राजधानी अयोध्या थी।[3] इक्ष्वाकु ने ही अयोध्या मे सूर्यवश की स्थापना की जिसको ऐक्ष्वाकु वश भी कहते है। कोशल के अन्तर्गत होने के कारण कुशीनगर जनपद का सम्बध विशेषकर अयोध्या के सूर्यवश से रहा है। यद्यपि विवाह, युद्ध और प्रसार के सिलसिले से अन्य वश के क्षत्रिय भी इस जनपद मे आ बसे। पुराणो के अनुसार इक्ष्वाकु के सौ पुत्र थे। इनमे से विकुक्षी ज्येष्ठ होने के कारण अपने पिता के बाद अयोध्या की गद्दी पर बैठा। इसके बाद के अयोध्या के महान राजाओ मे मन्धाता, सगर, भगीरथ, रघु, अज और दशरथ प्रमुख थे। त्रेतायुग के प्राय अत मे दशरथ के पुत्र रामचद्र हुए।[4] राम को कोसल के राजाओ मे सबसे महान् माना जाता है।

राम के समय ही कुशीनगर जनपद विशेष प्रकाश मे आया। अश्वमेघ यज्ञ के बाद उन्होने अपने साम्राज्य को अपने भतीजो और पुत्रो के बीच माण्डलिक राज्यो मे बॉट दिया। राम के अनुज लक्ष्मण के दोनो पुत्रो अगद और चद्रकेतु जो धर्म के तत्व को समझने वाले और दृढ पराकम वाले थे,[5] के बीच कारूपथ का

---

[1] मनु की पुत्री का नाम इला था, जिसमे स्त्री और पुरूष दोनो के लक्षण थे। देखिए *मत्स्य पुराण,* 12–26, *हरिवशपुराण,* 1,10–15, *पद्म पुराण,* 5,8 –21।

[2] *मत्स्य पुराण,* 12–8, *ब्रह्म पुराण* 17–20, *शिव पुराण,* 2, 5–36,19–20, *हरिवश पुराण* 1, 10,20–21, *पद्म पुराण* ,5, 8–124, *वायु पुराण,*85–21, *ब्रह्माण्ड पुराण,*3,60–20, *लिग पुराण,*1,65–28

[3] *ब्रह्म पुराण,* 7 / 20, *वायु पुराण* 85 / 21।

[4] *पद्म पुराण* 5 / 269, *ब्रहम पुराण,* 123

[5] धर्मविशारदौ।
अगदश्चन्द्रकेतुश्च राज्यार्थे दृढविक्रमौ।।

बॅटवारा कर दिया गया और अगद के लिए अगदिया नाम की सुन्दर पुरी स्थापित हुई जबकि चद्रकेतु मल्ल की मल्लभुमि मे स्वर्गपुरी के समान सुन्दर प्रसिद्ध चद्रकान्ता नाम की नगरी बसायी गयी।[1] तदुपरान्त अगद को कारूपथ का पश्चिमी भाग और चद्रकेतु को कारूपथ का पूर्वी भाग राज्य करने के लिए दे दिया गया।[2] अगद और चद्रकेतु के राज्य लाभ का उल्लेख कालिदास के महाकाव्य रघुवश मे भी मिलता है जिसके अनुसार राम की आज्ञा से लक्ष्मण ने अपने पुत्र अगद और चद्रकेतु को कारापथ (वास्तव मे कारूपथ) का राजा बनाया था।[3] वायु पुराण[4] और विष्णु पुराण भी इस बात से सहमत है कि लक्ष्मण ने अपने दोनो पुत्रो अगद और चद्रकेतु को हिमालय के निकट दो प्रदेश राज्य करने के लिए दिया जिनकी राजधानियॉ क्रमश अगदीया और चद्रचका (चद्रकान्ता) थी। डा0 राजबली पाण्डेय ने कारूपथ के दोनो क्षेत्रो का अभिधान आधुनिक बस्ती जनपद के पूर्वी भाग तथा गोरखपुर जनपद के पश्चिमी भाग के रूप मे किया है।[5] इसके पक्ष मे उनका तर्क है कि बाल्मिकी रामायण मे कारूपथ के पूर्वोत्तरी भाग को जहॉ चद्रकेतु की राजधानी चद्रकान्ता बसायी गयी थी, मल्लभूमि कहा गया है और भारतीय इतिहास मे एक ही मल्लभूमि या मल्ल राष्ट्र ज्ञात है और वह है गोरखपुर जनपद (विभाजन के पूर्व) का मल्ल राष्ट्र। चद्रकेतु की उपाधि मल्ल थी इसलिए जिस भूखण्ड को चद्रकेतु ने आवर्त किया उसे मल्लभूमि या मल्ल राष्ट्र कहा गया। शाक्यो के

(बाल्मीकि रामायण, उत्तर काण्ड, सर्ग 102/2)।

[1] अगदीया पुरी रम्या ह्यगदस्य निवेशिता।
चन्द्रकेतोश्च मल्लस्य मल्लभूम्या निवेशिता।
चन्द्रकातेति विख्याता दिव्या स्वर्गपुरी यथा।।वही, 8–9।

[2] अगदम पश्चिमा भूमि चन्द्रकेतुमुदङ्मुखाम्। वही,11।

[3] अगदम चद्रकेतु च लक्ष्मणोऽयात्मसभवौ।
शाासनाद्रघुनाथस्य चक्रे कारापथेश्वरौ।। कालिदास, *रघुवश,* सर्ग 15,श्लोक 90।

[4] *वायु पुराण,* 88/187/8।

[5] पाण्डेय राजबली,पूर्वोद्धृत,पृ 52।

परम्परागत वर्णनो से ज्ञात होता है कि वे अपने को सूर्यवशी कहते थे तथा कारूपथ के पश्चिम निवास करते थे और अगद के वशज थे।

कुशीनगर जनपद के परम्परागत इतिहास के सूत्र महाकाव्य युग से नि सृत है। रामचद्र ने केवल अपने भतीजो को ही सिहासनारूढ नही किया अपितु अपने शासनकाल मे अपने पुत्र कुश और लव को भी छोटे छोटे प्रदेश राज्य करने को दिया। कुश को कुशावती का राज्य और लव को शरावती (श्रावस्ती) का राज्य प्रदान किया गया।[1] कुशावती की पहचान वर्तमान कुशीनगर से की गयी है। कुशावती, कुशीनारा, कुशीग्राम, कुशीनगरी, कुशीनगर और आधुनिक कसया प्राचीन कुशावती के ही विभिन्न नाम लगते है अथवा इसी से उत्पन्न हुए है।[2] कुछ विद्वान बाल्मीकि रामायण का सन्दर्भ[3] देते हुए कुशावती को विध्य श्रेणी के पास स्थित मानते है।[4] किन्तु उस समय इस प्रदेश पर चद्रवशी पौरवो और यादवो का राज्य था।[5] अत ऐसा मानना समीचीन नही है।

रामचद्र के देहावसान के बाद कुश बहुत दिनो तक कुशावती मे नही रह सके। वे अयोध्यावासियो के निवेदन पर अयोध्या चले गए और उनका राम के उत्तराधिकारी के रूप मे राज्याभिषेक हुआ और वही से अधीनस्थ क्षेत्रो पर जीवन

---

[1] स निवेश्य कुशावत्या रिपुनागाकुश कुशम्।
शरावत्या सता सूक्तैर्जनिताश्रुलव लवम्।। कालिदास *रघुवश,* सर्ग 15,श्लोक 97, पाठक,बी0 एन0, पूर्वोद्धृत, पृ 278।

[2] दत एन0 एड बाजपेयी के0 डी0 *डेवलपमेण्ट ऑफ बुद्धिज्म इन उत्तर प्रदेश,* लखनऊ, 1956, पृ0 345।

[3] कुशस्य नगरी रम्या विध्यपर्वतरोधसि।
कुशावतीति नाम्ना सा कृता रामेण धीमता।। (राम ने विध्य पर्वत के किनारे कुशावती नामक रमणीय नगरी का निर्माण कराया)। *बाल्मीकि रामायण,* उत्तर काण्ड,108/3

[4] लाहा, विमल चरण, *हिस्टारिकल ज्याग्राफी ऑफ ऐश्येण्ट इण्डिया,* पेरिस, 1954 पृ0 49–50

[5] पाडेय, राजबली, पूर्वोद्धृत, पृ0 54।

पर्यन्त शासन करते रहे। जातक कथाओ[1] के अनुसार कुशावती के लिए कुश की इतनी ममता थी कि कुछ दिनो तक वे कुशावती को ही अपनी राजधानी बनाकर कोसल राज्य पर शासन करते रहे।[2] इससे अयोध्या की श्री हत हो गई और अयोध्यावासियो को बडा दु ख हुआ। कालीदास ने कुश के पास स्वय अयोध्या की नगर देवी के जाने और उनसे कुशावती छोडकर अयोध्या वापस लौटने के लिए प्रार्थना करने का उल्लेख किया है।[3] लव भी शरावती त्याग कर श्रावस्ती चले गए। कुश के अयोध्या लौट जाने के बाद यह क्षेत्र लक्ष्मण के पुत्र चद्रकेतु के अधिकार मे आ गया जिसे रामायण मे मल्ल (बहादुर) का विरूद् (उपाधि) प्रदान किया गया और वह प्रसिद्ध मल्लो का प्रथम पूर्वज बना।[4] उसने चद्रकान्ता छोडकर कुशावती (कुशीनगर) को अपनी राजधानी बनायी और तभी से कुशावती मल्ल राष्ट्र की राजधानी हुई जो बौद्ध काल तक बनी रही।[5]

पूर्व महाभारत काल मे इस जनपद का सम्बध एक मात्र चक्रवर्ती सम्राट महासुदसन से था। यद्यपि कि इसकी पहचान कठिन है किन्तु इसके नाम का उल्लेख महासुदत्सन् सुतन्त[6] मे मिलता है। उसकी राजधानी कुशावती अत्यत विकसित और सम्पन्न थी।[7] इतना ही नही उसके शासनकाल मे वाणिज्यिक दृष्टि से इसका महत्वपूर्ण स्थान था तथा युद्ध कौशल और वैभव मे वह अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया था। पूर्व से पश्चिम इसकी लम्बाई 12 योजन और उत्तर से दक्षिण इसकी चौडाई 7 योजन थी। कुशावती राजधानी सात चहारदीवारियो से घिरी थी

---

[1] *जातक* सख्या, 531।

[2] कालिदास, *रघुवश,* सर्ग 16, श्लोक 1–21।

[3] तदैव, श्लोक 1–22

[4] पाठक, वी0 एन0,पूर्वोद्धृत, पृ0 278

[5] पाण्डेय, राजबली पूर्वोद्धृत पृ0 55

[6] दीघनिकाय, 2, पृ0 134।

[7] बाजपेयी, के0 डी0, एड दीक्षित आर0 के0, *बुद्धिस्ट सेंटर इन उ0 प्र0,* पृ0, लखनऊ, 1956, पृ0 15।

जिसमे चार द्वार थे। प्रत्येक द्वार मे सात सात खम्भे गडे थे। राजधानी सात ताड वृक्ष की पक्तियो से घिरी थी। राजा का महल पूर्व से पश्चिम एक योजन लम्बा और उत्तर से दक्षिण 0 5 योजन चौडा था तथा उसके सामने एक तालाब था जिसकी लम्बाई चौडाई महल के बराबर थी।[1] उनके राज्य सीमा के पडोस मे घने जगलो का क्षेत्र महावन था और कुछ अन्य मल्ल नगर जैसे भोगनगर (जम्बूग्राम और पावा के बीच), अनुप्रिया और उरूलाकोप्पा।[2]

महाभारत काल मे युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के अवसर पर भीमसेन[3] ने पूर्वी राज्यो का दिग्विजय किया था और उस दौरान मल्ल जो इस भाग मे शासन कर रहे थे, भीमसेन द्वारा पराजित किए गए।[4] मल्लो की राजधानी इस समय निश्चित ही कुशीनगर थी।[5] सामान्यत भीमसेन का नाम देवरिया जनपद के कहाव गाव मे स्थित भूरे रग के बालुकाश्म स्तभ जिसे 'भीमसेन की लाट'[6] के रूप मे जाना जाता है, के साथ स्थापित किया जाता है। यह एक प्राचीन नगर था।[7] महाभारत युद्ध जिसे 1400 ई0 पू0 मे हुआ माना जाता है,[8] के समय कोसल का राजा बृहदबल था और वह कौरवो के पक्ष मे लडा था।[9] सभवत कुशीनगर जनपद

---

[1] बुद्धमित्र, भिक्षु, *भगवान बुद्ध के समकालीन अनुयायी तथा बौद्ध केन्द्र,* गोरखपुर, 1999 पृ0 146—47।

[2] मजूमदार, आर0 सी0, एण्ड पुसालकर, ए0 डी0, *द हिस्ट्री एड कल्चर ऑफ द इण्डियन पीपुल,* बम्बई, 1951, वाल्यूम 2, पृ0 8।

[3] भीमसेन पॉच पाण्डव भाइयो मे दूसरे थे।

[4] *श्री महाभारत* ,सभापर्व 30।

[5] पाण्डेय, राजबली, पूर्वोद्धृत पृ0 56।

[6] फ्यूहरर, ए0 , *द मानुमेण्टल एन्टिक्विटिज एड इन्स्क्रिप्सन इन द नार्थ वेस्टर्न प्रॉविन्सेज एड अवध,* इलाहाबाद, 1969 (पुनर्मुद्रित) पृ0 243।

[7] कनिंघम, ए0, *द ऐश्येण्ट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया* कलकत्ता, 1924 पृ0 366।

[8] मजूमदार, आर0 सी0, एड पुसालकर, पूर्वोद्धृत, वाल्यूम 1, पृ0 304

[9] पाण्डेय, राजबली, पूर्वोद्धृत पृ0 238

के कोसल के सामन्त राज्य भी इसी तरफ थे। बृहदबल महाभारत युद्ध मे मारे गए।[1]

महाभारत युद्ध के बाद अनेक स्वतत्र गणराज्यो के अस्तित्व मे आ जाने के कारण जनपद का राजनीतिक महत्व बढ गया[2] क्योकि मल्लो ने स्वय को एक गणतत्र (गणराज्य) के रूप मे सगठित कर लिया।[3]

प्रारम्भिक बौद्ध[4] और जैन[5] ग्रन्थो मे जिन षोडस महाजनपदो का उल्लेख हुआ है उसमे सरयू और बडी गण्डक के बीच केवल एक मल्ल राष्ट्र का उल्लेख है। नवोदित स्वतत्र राज्य किसी एक सत्ता का आधिपत्य नही मानते थे। यह भारत के राजनैतिक जीवन साम्राज्यवाद के विरूद्ध प्रतिकिया थी।[6] महाजनपदो के युग मे मल्ल राष्ट्र कोसल से बिल्कुल स्वतत्र अलग राष्ट्र हो गया। बौद्ध स्रोतो से पता चलता है कि प्रसेनजीत (कोसलनरेश) बुद्ध के समकालीन थे।[7] मल्लो का प्रमुख बधुल प्रसेनजीत का घनिष्ठ मित्र था।[8] मल्लो की सम्भावित तिथि छठी शताब्दी ई0 पू0 से लेकर 5वी शताब्दी ई0 पू0 के मध्य मानी गई है।[9]

---

[1] पार्जीटर, एफ0 ई0 , 1913, आक्सफोर्ड, *पुराण टेक्ट्स ऑफ द डायनेस्टीज ऑफ द कलि एज,* पृ0 60, महाभारत, द्रोण पर्व, 47–22।

[2] पाठक, बी0 एन0, पूर्वोद्धृत, पृ0 238।

[3] तदैव, पृ0 286

[4] *अगुतर निकाय* 1/213, 4/252।

[5] *महावस्तु,* 3/208, 209।

[6] पाण्डेय, राजबली, पूर्वोद्धृत, पृ0 58

[7] रायचौधरी, एच0 सी0, 1953, कलकत्ता, *पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ ऐशियेण्ट इण्डिया,* पृ0 103–104

[8] पाठक, बी0 एन0, पूवोद्धृत, पृ0 284

[9] सिन्हा,बी0 पी0, *द कम्प्रेहेन्सिव हिस्ट्री ऑफ बिहार,* वाल्यूम 1, पृ0 223

महाजनपदो के युग मे साम्राज्यवाद के विरूद्ध जो प्रतिक्रिया प्रारम्भ हुई थी उसकी पराकाष्ठा गणतत्रो के युग मे हुई। पालि ग्रन्थो से पता चलता है कि उत्तर भारत मे छोटे छोटे राज्यो ने राज्य तत्र का परित्याग कर गणतत्र की स्थापना कर ली। देश के राजनैतिक जीवन मे यह एक बहुत बडा प्रयोग था। कुशीनगर जनपद मे भी दो शक्तिशाली केन्द्र स्थापित हुए। पहला कुशीनगर मे और दूसरा पावा मे। वस्तुत कुशीनगर जनपद का सबसे गौरवमय इतिहास इसी युग मे निर्मित हुआ था। रीज डेविडस पहला विद्वान था जिसने बुद्ध के समकालीन गणतत्रो तथा राजतत्रो पर प्रकाश डाला।[1] पालिग्रन्थो मे बुद्धकालीन 10 गणतत्रो का उल्लेख मिलता है जिनकी गणना निम्नलिखित प्रकार से की जा सकती है–[2]

1 कपिलवस्तु के शाक्य

2 रामग्राम के कोलिय

3 पिप्पलीवन के मोरिय

4 पावा के मल्ल

5 कुशीनारा के मल्ल

6 मिथिला के विदेह

7 वैशाली के लिच्छवि

8 अल्लकप्प के बुलि

9 सुसुमारिगिरी के भग्ग और

10 केसपुत के कालामस।

---

[1] रीज डेविड्स, *बुद्धिस्ट इण्डिया*, कलकत्ता (प्रथम भारतीय सस्करण), 1950, पृ0 1।

[2] पाण्डेय राजबली, पूर्वोद्धृत, पृ0 59।

ये गणतत्र बडे ही प्रतिभासम्पन्न और शक्तिशाली थे। इनकी शासन प्रणाली, सामाजिक व्यवस्था और सम्बध आचार व्यवहार आदि प्राय सभी समान थे। इनकी राजनीति, समाजनीति, धर्म और सस्कृति मे देन उच्चकोटि की है। आधुनिक राजनितिशास्त्रविदो की यह धारणा है कि राजतत्र शासनप्रणाली विश्व की प्राचीनतम शासन पद्वति है। परन्तु भारतीय विद्वानो ने अपने शोधो एव अन्वेषणाओ द्वारा यह सिद्ध किया है कि भारत वर्ष मे सर्वप्रथम गण शासन प्रणाली का ही उदय हुआ था।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारत के राजनैतिक इतिहास मे चक्रीय सिद्धान्त का दर्शन होता है। महाकाव्य कालीन सम्राज्यो के पतनोपरान्त महाजनपदो के अवशेषो पर अजात शत्रु के नेतृत्व मे साम्राज्य प्रतिष्ठित हुआ। भारत के राजनैतिक विकास की प्रकिया प्राचीन यूनान के नगर राज्यो के समान दिखाई देती है। जहाँ वीरगाथाकाल के नृपतत्रीय राज्यो के पश्चात् गणतत्रो का अभ्युद्य हुआ।[1] राजनैतिक उद्विकास की चक्रीय सिद्धान्त की पुष्टि मेगस्थनीज के इस कथन से होती है कि गणतत्रीय प्रकार की शासन व्यवस्थाओ की स्थापना तीन बार हुई तथा तीन बार नृपतत्रीय रूप मे परिवर्तित हुई।[2] डा0 रामशरण शर्मा का विचार है कि उत्तर वैदिक काल के पश्चात क्षेत्रीय तथा वर्ग विभाजित गणो की उत्तपति का मूल कारण उत्तर वैदिक काल के पश्चात जीवन शैली के जागत्तिक परिवर्तन मे अन्वेषणीय है।[3]

अधिकाशत ये गणराज्य यूनानी गणराज्यो के समकालीन थे। राजनैतिक दृष्टि से वज्जियो एव मल्लो के सघ सर्वाधिक महत्वपूर्ण थे।[4]

---

[1] राय चौधरी, हेमचद, पुर्वोद्धृत, पृ0 121।

[2] मैकिण्डल, एशियट इण्डिया एज डिस्काइब्ड बाइ मेगस्थनीज एण्ड *एरियन*, सशोधित सस्करण, पृष्ठ 203, कलकत्ता, 1960।

[3] शर्मा, रामशरण, *ऑस्पेक्ट्स ऑफ पोलिटिकल आइडियाज एण्ड इस्टीट्यूशन्स इन एशियट इण्डिया,*, पृष्ठ 92, 93, वाराणसी 1968।

[4] पाठक, वी0एन0, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 238।

आधुनिक राजनीतिशास्त्र विदो की यह धारणा है कि राजतत्र शासन प्रणाली विश्व की प्राचीनतम पद्धति है। परन्तु भारतीय विद्वानो ने अपने शोधो एव अन्वेषणाओ द्वारा यह सिद्ध किया है कि भारत वर्ष मे सर्वप्रथम गण शासन प्रणाली का ही उदय हुआ था।

दिक् एव काल के आयामो मे आबद्ध परिवर्तनकारी घटनाएँ ही इतिहास की सज्ञा से अभिहित की जाती है। आधुनिक इतिहास की अवधारणा मे यद्यपि मार्क्स के चिन्तन ने परिवर्तन प्रस्तुत किया है तथापि साम्राज्यवादी लेखन के अन्तर्गत ऐतिहासिक अनुक्रम के अध्ययन मे सर्वाधिक अथवा विशेषता उसकी गणतत्रीय पद्धति रही है। क्योकि गणतत्रीय पद्धति मे शासकीय वशावलिया प्राय अप्राप्य ही है। गणतत्र एक सघीय और प्रजातत्रीय व्यवस्था होने के कारण उसके शासको की वशावली अथवा नामावली नही मिलती । इतिहास की विधा अपने चयनात्मक वृत्ति के कारण भी उन्ही घटनाओ का चयन करती है जो लोक जीवन के ऐतिहासिक अनुक्रम को प्रस्तुत किया जा सकता है।

मल्लजनगण का राजसत्तात्मक स्वरूप विभिन्न कालो मे परिवर्तित होता हुआ बुद्ध काल मे अत्यधिक सम्मानित हुआ तथा इसकी प्रसिद्धी का कारण बुद्ध की महापरिनिर्वाण स्थली होना है।

मल्ल गणराज्य प्रशासनीक दृष्टि से दो भागो मे विभक्त था जिनमे से उत्तर की राजधानी पावा थी और दक्षिण भाग की राजधानी कुशीनारा (कुशीनगर) थी।[1] पालि साहित्य मे इन्हे 'मल्लाकोसिनारका' (कुशीनारा के मल्ल) एव मल्ला पावेय्यका (पावा के मल्ल) कहा गया है।[2]

पावा के मल्ल : कुशावती नगरी के समान पावा भी मल्ल गण राज्य की राजधानी थी। पावा वही प्राचीन नगर है जहाँ भगवान महावीर ने निर्वाण प्राप्त किया

---

[1] मेहता, रतिलाल, *प्री बुद्धिस्ट इण्डिया*, पृष्ठ 56।

[2] मलाल सेकर, जी0पी0, लन्दन, 1938, *डिक्शनरी ऑफ पाली प्रापर नेम्स*, भाग –2, पृ0 435।

था। कल्पसूत्र के अनुसार जनपदो का विहार करते हुए भगवान महावीर ने अपना अन्तिम 12वा चतुर्मास पावा मे मल्ल राज्य के राजा हस्तिपाल के रज्जुकशाला मे बिताया था जिसके चारो ओर तालाब था। वहा कार्तिक कृष्ण अमावस्या के प्रभात काल मे भगवान महावीर निर्वाण को प्राप्त हुए थे।[1] महावीर के निर्माण पर मल्लो ने प्रकाशोत्सव मनाया था।[2] कुशीनगर जनपद से सटे जनपद देवरिया के खुखदु ग्राम के भगनावशेषो तथा कहॉव ग्राम के स्तम्भ लेख से भी इस क्षेत्र पर जैन धर्म का प्रभाव परिलक्षित होता है। खुखदु से हिन्दु धर्म से सम्बन्धित विभिन्न अवशेषो के साथ ही प्राचीन जैन मदिर एव मूर्तियो के साक्ष्य मिले है। जैन मूर्तियो मे आदिनाथ, शान्तिनाथ, पार्श्वनाथ तथा महावीर की है।[3] कहॉव स्तम्भ लेख गुप्त सम्राट स्कन्द गुप्त के शासन काल की है जिस पर पॉच जैन मूर्तियॉ उत्कीर्ण है।[4] पावा मे ही गणराज्य का सस्थागार भवन बना हुआ था। पावा उत्तर भारत मे विशेषकर गगा के उत्तर मे मुख्य व्यापारिक मार्ग पर स्थित था।[5] जिसका उल्लेख महाभारत मे अनेकत्र हुआ है।

पावा शब्द की उत्पत्ति के सम्बध मे जिनप्रभ सूरि ने अपने ग्रन्थ विविधतीर्थकल्प मे इसके तीन नाम दिए है अपापा, पापा और पावा तथा लिखा है कि अपापा मे वीर प्रभु का निर्वाण हुआ था। भगवान महावीर की निर्वाणभूमि होने के कारण यह भूमि पापहीना हो गई इसलिए अपापा कही गई । पापा और पावा इसी के अन्य रूप है।[6] कनिघम का मत है कि पावन, परवन, पदरमन एव पदरवन, पावा के ही रूपान्तरित नाम है। जिसका अपभ्रश रूप वर्तमान पडरौना है। ए0 सी0 एल0

---

[1] भद्रबाहु, *कल्पसूत्र, सूत्र* सख्या 121, 122, 123।

[2] *समागमसुतन्त,* 3 1 4।

[3] फ्यूहरर, *आर्क्योलाजिकल रिव्यू,* 1891 पृ0 248।

[4] तदैव पृ0 234।

[5] *अगुतर निकाय,* खण्ड 1, पृष्ठ 213।

[6] मिश्र योगेन्द्र, *प्राचीन पावा, श्रमण भगवान महावीर की वास्तविक निर्वाण भूमि पावा,* गोरखपुर 1973, पष्ठ 19।

कार्लाइल[1] पावा की उत्पत्ति सस्कृत शब्द पावन से मानते है। पावन का अर्थ है शुचि, पवित्र, निर्मल, पूज्य। तिब्बती बौद्ध साहित्य मे पावा 'दिग्पवन' के रूप मे वर्णित है।[2] तिब्बती शब्द पवन का अर्थ नगर या निवास स्थान होता है तथा दिग् का अर्थ पवित्र, पूज्य, शुद्ध। अत तिब्बती दिग्पवन सस्कृत के पावन पुर या पावननगर या पावनआलय का समानार्थी है जिसका अर्थ है पवित्रता एव शुद्धि का स्थान।[3] निष्कर्षत कहा जा सकता है कि पावा का स्मरण पवित्रता या पावन (भूमि) के रूप मे श्रद्धापूर्वक लोक प्रसिद्ध रहा है।

महाभारत मे यद्यपि पावा का उल्लेख अनेकत्र हुआ है तथापि भौगोलिक सन्दर्भो के अभाव के कारण तत्कालीन पावा की पहचान नही हो सकी है। इसी प्रकार अधिकाश जैन साहित्यो मे महावीर की निर्वाण भूमि का नाम पावा मात्र उल्लिखित है।[4] यहा भी ऐसे भौगोलिक प्रासगिक अथवा आनुषगिक विवरण अप्राप्य है जिनसे पावा के भू सन्निवेश एव भौगोलिक परिदृश्य की पहचान हो सके। अध्येताओ एव सशोधको के समक्ष मात्र बौद्ध ग्रन्थो मे ही पावा नामक एक स्थान विशेष का विस्तृत विवरण प्राप्त होता है, चाहे वह प्रसिद्ध व्यापार मार्ग पर स्थित हो या महावीर के निर्वाण से सम्बधित हो या भगवान बुद्ध और उनके शिष्यो से या मल्लो के सथागार से।[5] जैन एव बौद्ध ग्रन्थो के अवलोकन से विदित होता है कि जैनियो की सख्या का आधिक्य पावा मे था और बौद्धो की कुशीनारा मे। यही वह विशेष तथ्य है कि भगवान महावीर ने पावा मे निर्वाण लिया तथा बुद्ध ने

---

[1] कार्लाइल ए0सी0एल, *रिपोर्ट ऑफ टूर्स इन गोरखपुर, सारन एण्ड गाजीपुर,* 1977–78–79–80, वाल्यूम 22, वाराणसी 1966, पृष्ठ 34।

[2] कार्लाइल ए0सी0एल, *रिपोर्ट ऑफ टूर्स इन गोरखपुर, सारन एण्ड गाजीपुर,* 1977–78–79–80, वाल्यूम 22, वाराणसी 1966, पृष्ठ 34।

[3] चौधरी गुलाब चन्द, *भगवान महावीर की निर्वाण भूमि पावा, प्राचीन पावा,* गोरखपुर, 1973, पृ0 62, 63।

[4] मिश्र योगेन्द्र, पुर्वोद्धृत पृ0 25।

[5] तदैव।

कुशीनारा मे। भगवान महावीर के निर्वाणोपरान्त उनके अनुयायियो मे भेद उत्पन्न हो गया था। दीघ निकाय के 'सगीतिपरियायसुत्त' से विदित होता है कि भगवान महावीर बुद्ध मल्ल देश मे चारिका करते हुए पावा पहुचे थे और वहा उन्होने चुन्द कर्मार पुत्र के आम्रवन मे विहार किया था तथा पावा के मल्लो द्वारा निर्मित नवीन सस्थागार 'उबभटक' मे पधार कर धर्म कथा कह कर पावावासी मल्लो को सम्प्रहर्षित किया था।[1] यही सारिपुत्र ने भिक्षुओ को अपने धर्म सम्बोधन मे सूचित किया कि निर्ग्रन्थ ज्ञातृपुत्र अभी–अभी कालगत हुए और उसी समय निर्ग्रन्थ (जैन) दो भागो मे बट गये। किन्तु उन्हे (बौद्ध भिक्षुओ को) कलहरहित होकर बौद्ध सघ को चिरस्थायी बनाना चाहिए। महापरिनिर्वाण सूत्त से ज्ञात होता है कि पावा मे इसी चुन्द कर्मार के आम्रवन मे निर्वाण के पूर्व बुद्ध ने अपना अन्तिम पडाव डाला था तथा इन्ही के गृह मे अन्तिम भोजन सूकरमाद्दव ग्रहण की थी। भोजन पच नही सका और पेट मे असहनीय दर्द होने लगा। इसी स्थित मे बुद्ध ने अपने शिष्य आनन्द के साथ कुशीनगर की ओर प्रस्थान किया। रास्ते मे ठहरते हुए बुद्ध कुकुत्था नदी मे स्नान तथा जल ग्रहण कर मल्लो के शालवन नामक उपवतन मे पहुचे जो हिरण्यवती नदी के दूसरी ओर स्थित था और वही महापरिनिर्वाण को प्राप्त हुए।[2]

सूकरमाद्दव नामक भोज्य पदार्थ को लेकर विद्वानो मे मतभेद है। कुछ इसे शूकर (Pork) मास भी मानते है। लेकिन यहा विचारणीय है कि क्या अहिसा का पुजारी जो जीव दया से अभिभूत होकर सन्त बना था, मास का सेवन कर सकता था? इस सन्दर्भ मे डा0 रेखा चतुर्वेदी का कथन है कि माद्दव शब्द 'मार्जव' या मार्दव है जिसका अर्थ मृदुता से होता है। यह शब्द शूकर न होकर सुकर है जिसका अर्थ सरलता से सुपाच्य अथवा मृदु भोजन है। सूकर शकरकद का अपभ्रश भी है जिसे प्राकृत मे सूरणकन्द कहा गया है, जो इस अचल मे प्रभुत्त मात्रा मे

---

[1] कनिघम ए, *द एनसियट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया*, कलकत्ता, 1924 पृ0 360।

[2] *दीघनिकाय* II, पृ 100।

उत्पन्न होता है। यह प्रकृत्या मीठा या मृदु है।[1] इससे प्रमाणित होता है कि पावा मे जैन एव बौद्ध धर्म एव सस्कृति का समान प्रभाव था। मल्ल महावीर और बुद्ध दोनो के उत्साही अनुयायी थे।[2]

पावा के पहचान की समस्या

प्राचीन भारतीय इतिहास का एक प्रसग पावा अब भी विवादो के घेरे मे पडा है। जैन और बौद्ध साहित्यिक साक्ष्यो के विवेचन से स्पष्ट है कि पावा भगवान महावीर और बुद्ध दोनो से ही सम्बद्ध रही और अपनी राजनीतिक स्थिति, कला, सस्कृति एव वैभव की दृष्टि से इसका महत्वपूर्ण स्थान रहा है। परन्तु इसकी प्राचीनता एव भौगोलिक स्थित को लेकर आज भी तरह तरह की भ्रातिया बनी हुई है और इतिहास कार एव पुरातत्ववेत्ता सर्वसम्मत निर्णय पर नही पहुँच सके है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने भी इस सन्दर्भ मे विभिन्न स्थलो का उत्खनन करवाया किन्तु पावा की स्थिति निश्चित करने मे समर्थ नही हुआ। समय समय पर विभिन्न स्थलियो की पहचान पावा के रूप मे की जाती रही है। हम यहा उन स्थलियो के विवरण के साथ–साथ पावा के पहचान की समस्या पर समीक्षा प्रस्तुत कर रहे है।

जहॉ तक पावा की प्राचीनता का प्रश्न है विद्वानो मे मतैक्य नही है। डा0 राजबली पाण्डेय[3] के अनुसार इस नगरी (पावा) का बुद्ध पूर्व कोई सकेत नही मिलता है परन्तु डा0 के0 डी0 बाजपेयी[4] ने महाभारत मे कई स्थलो पर पावा के उल्लेख की चर्चा की है।

अद्यावधि निम्न स्थलो को पावा सिद्ध करने का प्रयास किया गया है–

---

[1] चतुर्वेदी रेखा, स्मारिका, बुद्ध स्मृति पर्व, 2000, कुशीनगर।

[2] पाठक, वी0एन0, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 281।

[3] पाण्डेय राजबली, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 77।

[4] वाजपेयी के0डी0, लोकेशन ऑफ पावा, पुरातत्व, नई दिल्ली 1987, पृष्ठ 47।

1 पपतार

मात्र गोरागगोपाल सेनगुप्त[1] ने इस ग्राम को पावा के रूप मे पहचान की है तथा इसे पडरौना तहसील मे स्थित बताया है। किन्तु पडरौना तहसील के सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि यहा पपतार नामक ग्राम का कोई अस्तित्व नही है।

2 पवैया

डा0 हीरालाल जैन[2] ने गोरखपुर जनपद स्थित पवैया नामक स्थान को पावा माना है किन्तु उन्होने अपने मत के समर्थन मे कोई साहित्यिक अथवा पुरातात्विक साक्ष्य प्रस्तुत नही किया है।

3 माझा बिहार प्रदेश के गोपालगज जिले मे पूर्वोत्तर रेलवे की गोपालगज–छपरा लूप लाइन पर स्थित माझा (माझागढ) को कपिलदेवगिरि[3] ने पावा के रूप मे पहचान करने का प्रयास किया है। लेकिन वे अपने पक्ष मे कोई ठोस तर्क नही दे पाये है जिससे उसे पावा के रूप के स्वीकार किया जा सके।

4. उस्मानपुर

कुशीनगर जनपद के अन्तर्गत फाजिलनगर से 6 किमी0 दक्षिण– पूर्व मे यह गाव स्थित है। डा0 श्यामसुन्दर सिह जो उस्मानपुर के नजदीकी गाव दर्जिया के निवासी है, कुछ प्राचीन पुरा सामग्रियो सहित एक ढक्कन पर मौर्य कालीन लेख, जिसे वह पावा नगर पढते है, उसे मौर्यकालीन बताते हुए कहते है कि यही उस्मानपुर पावा है। इसके पावा होने की सभावना से ही भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग[4] के श्री के0 एम0 श्रीवास्तव ने 1973–74 मे तथा गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग ने 1997 मे यहा

---

[1] सेनगुप्त गोरागगोपाल, *डेलीलैण्डरूट्स इन एशियट इण्डिया,* पृ 1–4, पटना 1968।

[2] सरावगी, के0एल0 (स0), *पावा समीक्षा,* पृ0 15, छपरा 1972।

[3] गिरी कपिलदेव, *महावीर की निर्वाण भूमि पावा की स्थिति,* श्रवण, नवम्बर, 1970।

[4] *इण्डियन आर्कियोलॉजी ए रिव्यू,* 1973–74।

उत्खनन करवाया था। परन्तु यहॉ से कोई ऐसा साक्ष्य नही मिला जो इसे पावा सिद्ध कर सके।

5 धारमठिया

यह पडरौना से 27 किमी दक्षिण–पूर्व मे पडरौना–पटहेरवा मार्ग के किनारे पूर्व मे स्थित है। फाजिलनगर से यह 6 किमी उत्तर–पूर्व मे स्थित है। जनश्रुति के अनुसार इसे 52 बीघे का टीला कहा जाता है। इसका शीर्ष समतल है। कार्लाइल[1] ने इस टीले का विस्तृत वर्णन किया है। इसकी महत्ता की पुष्टि फ्यूहरर[2] ने भी की है। परन्तु इसका उत्खनन होना अभी बाकी है। जब तक कोई साक्ष्य सामने नही आता कुछ भी कहना उचित नही होगा। गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर के प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग के सग्रहालयाध्यक्ष कृष्णानद त्रिपाठी के अनुसार उनके द्वारा भी धारमठिया एव उसके पार्श्ववर्ती टीलो का निरीक्षण किया गया तथा उन्होने इसे प्राचीन पावा होने की अधिक सभावना व्यक्त की है।[3]

6 पपउर :

यह ग्राम कुशीनगर जनपद के अन्तर्गत हाटा तहसील मे आता है। यह पडरौना से 10 किमी0 उत्तर–पश्चिम, पडरौना–रामकोला मार्ग के उत्तर स्थित है। पपउर टीला गाव से लगभग 500 मीटर दूरी पर पश्चिम मे स्थित है।

सर्वप्रथम राहुल साकृत्यायन[4] ने पपउर को पावा की सज्ञा दी थी। बाद मे डा0 मोतीचन्द,[5] नाथूराम प्रेमी, विद्याधर जोहरा पुरकर तथा बलदेव

---

[1] *ए0एस0आई0आर,* वाल्यूम 18, 1875–76, 1876–77, पृ0 115–16।

[2] फ्यूहरर, ए0, पुर्वोद्धृत, पृ0 240।

[3] त्रिपाठी, कृष्णानद, पावापुरी है कहा? *सूर्यमहोत्सव स्मारिका,* पृ0 27–28, देवरिया, 1987।

[4] पडित साकृत्यायन, राहुल, *बुद्धचर्या,* सारनाथ, 1952, पृ0 352।

[5] मोतीचन्द, *सार्थवाह* (हिन्दी), पटना, 1966, पृ0 17–18।

उपाध्याय[1] ने भी राहुल साकृत्यायन के मत का समर्थन करते हुए पपउर को ही पावा के रूप मे पहचान की। किन्तु पपउर को पावा के रूप मे मान्यता देने का कोई ठोस आधार नही है। अभी तक ऐसा कोई साक्ष्य प्राप्त नही हुआ है जिसके आधार पर इसे पावा माना जाय ।

7 पावा की पहचान पावापुरी (नालन्दा बिहार) से :

पावा के सम्बध मे कतिपय विद्वानो का मत है कि दक्षिण–बिहार के नालन्दा जनपद मे बिहार शरीफ से 10 5 किमी0 की दूरी पर दक्षिण दिशा मे राजगृह के पास 250 5′ अक्षाश एव 850 32′ देशान्तर पर स्थित पावापुरी ही प्राचीन पावा है। जैन धर्मावलम्बी इसी स्थान को परम्परा सम्मत महावीर की निर्वाण स्थली पावा मानते है। पावापुरी परस्पर 1 5–2 मील की दूरी पर स्थित पावा तथा पुरी नाम के दो पृथक ग्राम है। कुशीनगर से यह पावापुरी गगा के उस पार दक्षिण–पूर्व मे लगभग 235 मील की दूरी पर है। सर्वप्रथम बुकनन[2] ने 1812 मे पावापुरी तथा उसके निकटवर्ती क्षेत्र का सर्वेक्षण किया था। उस समय पोखरे (झील) के उत्तर मे पुरी ग्राम तथा वहा से लगभग 1 मील की दूरी पर पावा ग्राम स्थित था। गुलाबचद चौधरी[3] के अनुसार नालदा जिले मे स्थित पावापुरी या पावानगरी एक न होकर पावा और पुरी दो भिन्न गाव का सम्मिलित नाम है। पुरी के प्राचीन काल से ही ग्राम होने की पुष्टि यहा स्थित ग्राम मन्दिर या समवसरण मन्दिर से होता है। ग्राम मन्दिर के अतिरिक्त जल मन्दिर व श्वेताम्बरो एव दिगम्बरो के विशाल मन्दिरो की

---

[1] उपाध्याय बलदेव, *भगवान महावीर, वैशाली की दिव्य विभुति,* वैशाली अभिनन्दन ग्रन्थ, वैशाली (बिहार), 1985, पृ0 241।

[2] माण्टगोमरी मार्टीन, *हिस्ट्री एण्टिक्विटिज टोपोग्राफी एण्ड स्टैटिस्टिक्स ऑफ ईस्टर्न इण्डिया,* खण्ड 1, पटना–गया, दिल्ली, द्वितीय सस्करण, 1976, पृ0 168।

[3] चौधरी गुलाब चन्द, *भगवान महावीर की निर्माण भूमि, पावा, प्राचीन पावा,* गोरखपुर, 1973, पृ0 48।

श्रृखला दृष्टिगोचर होती है। पुरी के मन्दिरो की तुलना मे पावा के मन्दिर नगण्य प्रतीत होते है। डा0 चौधरी का मानना है कि भगवान महावीर की निर्वाण स्थली से पावा का कोई सम्बध नही है क्योकि पावा ग्राम की जनश्रुतियो मे भी इसकी कोई चर्चा नही है। डा0 येगेन्द्र मिश्र का कहना है कि जब पावा की इतनी पवित्रता है तब जैन मन्दिर भी वही निर्मित होनी चाहिए थी।

डा0 गुलाबचद्र चौधरी[1] के अनुसार पुरी के ग्राम मन्दिर की मूर्तियो मे से एक पर सवत् 1260 का अभिलेख उत्कीर्ण है जिसके अनुसार सवत 1260 ज्येष्ठ सुदी 2 को श्री भगवान महावीर बिम्ब तैयार हुआ। जिसे अभयदेव सूरी द्वारा प्रतिष्ठित किया गया था। पूर्णचद्र नाहर[2] ने भी इसकी पुष्टि की है। इस प्रकार पावा पुरी का सबसे प्राचीन अभिलेख सन् 1203 ई0 का है। इसमे न तो इस स्थल को भगवान महावीर की निर्वाण स्थली बताया गया है और न ही उसकी निर्वाण स्थली के रूप मे पावापुरी का नाम अकित है। अनुमानत भक्तो द्वारा अतीत काल मे पूजा अर्चना के लिए इस मूर्ति को राजगृह आदि स्थानो से लाकर यहा स्थापित किया गया था।

ग्राम मन्दिर का दूसरा अभिलेख मुगल सम्राट शाहजहा के शासन काल का है जिसे बुकनन ने लिपिबद्ध किया है। उनके मतानुसार वहा से प्राप्त अभिलेखो मे सबसे प्राचीन अभिलेख विकम सम्वत् 1605 (1548 ई0) का है। भण्डारकर[3] की सूची मे इस अभिलेख को विकम सम्वत् 1697 (1640 ई0) का माना गया है। किन्तु बाद के विद्वानो ने इसको वैशाख शुदी 5 विक्रम सम्वत् 1698 (1641 ई0) का माना है। इस अभिलेख से पावापुरी ग्राम मन्दिर के जीर्णोद्धार के विषय मे जानकारी मिलती है। इस अभिलेख को बिहार निवासी खरतरगच्छीय महातियाण सघ ने शाहजहा के शासन काल (1627–1658 ई0) मे वेदी के नीचे स्थापित

---

[1] चौधरी गुलाब चन्द, पुर्वोद्धृत, पृ0 49।

[2] नाहर, पूर्णचन्द्र, *जैन लेख सग्रह*, भाग 3, कलकत्ता, 1927, पृ 273।

[3] भण्डारकर, डी0आर0, *लिस्ट, लिस्ट ऑफ इस्क्रिप्शन्स इन नार्दन इण्डिया* 1003।

करवाया था। इस अभिलेख मे 21 पक्तियॉ है। विजयसिह नाहर[1] के अनुसार इस विशाल प्रशस्ति शिलालेख को पुरातत्व विद् पूर्णचद नाहर ने वेदी से निकालकर ग्राम मन्दिर की भित्ति मे स्थापित करवाया था। अभिलेख की दूसरी पक्ति मे प्रथम बार इस बात का उल्लेख मिलता है कि पावापुरी चौबीसवे जिनाधिराज श्री वर्धमान स्वामी के निर्वाण कल्याणक से पवित्र है। उपरोक्त तथ्यो की पुष्टि डी0आर0[2] पाटिल गुलाबचद्र चौधरी एव योगेन्द्र मिश्र ने भी की है। डी0 आर0 पाटिल के अनुसार वर्तमान ग्राम मन्दिर की अपेक्षा यह अभिलेख अधिक प्राचीन है। सभवत प्राचीन ग्राम मन्दिर के नष्ट हो जाने पर इसे आधुनिक ग्राम मन्दिर मे स्थापित कर दिया गया। ऐसा प्रतीत होता है कि मुस्लिम काल मे आवागमन की असुविधा एव गगा के उत्तरी क्षेत्र से जैन मतानुयायियो का सम्बध न होने के कारण 1649 ई0 मे नालदा जनपद की यह पावापुरी भगवान महावीर की निर्वाणभूमि पावा के रूप मे मान्यता प्राप्त होकर पूज्य हो गयी और विभिन्न स्थानो के धनवान श्रावको ने इस तीर्थस्थली के विस्तार मे योगदान किया।

भगवान महावीर की निर्वाण स्थली पावा के सम्बध मे ऐतिहासिक उल्लेखो और परम्पराओ मे परस्पर विरोध है। जैन धर्मावलम्बी परम्परागत रूप से नालदा जनपद मे स्थित पावापुरी को भगवान महावीर की निर्वाण स्थली मानते चले आ रहे है किन्तु ऐतिहासिक साक्ष्य इसको निर्वाण स्थली मानने के विपरीत है। परम्परा एव इतिहास के अन्तर्विरोध से अवगत श्री भॅवरलाल नाहटा[3] का मत उल्लेखनीय है—बहुत से स्थानो का सही निर्णय केवल इतिहास के आधार पर नही किया जा सकता है। परम्परा का भी अपना महत्त्व है। बौद्धो द्वारा मान्य पावा वस्तुत बौद्धो की पावा है और वह जैनो की पावा नही है। मुनि नगराज[4] ने भी

---

[1] नाहर विजय, सिह, *पावापुरी दिग्दर्शन*, महावीर निर्वाण महोत्सव स्मारिका, नालन्दा, 1974, पृ0 87।

[2] पाटिल, डी0आर0, एन्टीक्वेरियन रिमेन्सेज इन बिहार, पटना 1963, पृ0 422।

[3] नाहटा, भॅवरलाल, *विश्वमित्र दैनिक*, पृष्ठ 4, कलकत्ता, 12 अप्रैल 1984।

[4] नगराज, मुनि, *भगवान महावीर एव बुद्ध की समसामयिकता*, दिल्ली, 1969, पृ0 161।

परम्परा और ऐतिहासिकता के अन्तर्विरोध को स्वीकार किया है। परम्परा सम्मत पावा दक्षिण बिहार मे है और वहा के भव्य मन्दिरो ने उसे जैन तीर्थ बना दिया है। साथ ही उन्होने स्पष्ट किया है कि ऐतिहासिक साक्ष्य से इस बात का परिज्ञान नही होता है कि पावा वहा है।

कल्पसूत्र के अनुसार जब भगवान महावीर कालधर्म को प्राप्त हुए तो उस रात्रि मे काशी कोशलस्थ 9 मल्ल और 9 लिच्छवि गणराज्यो मे यह कहकर दीपोत्सव मनाया गया कि ज्ञान ज्योति का अस्त हो गया है। अब हम पौद्गलिक द्रव्यो से प्रकाश करे।[1] भगवान महावीर के निर्वाण के अवसर पर पावा मे मल्लो और लिच्छवियो के 18 गण राज्यो की उपस्थिति पावा के उत्तरी बिहार मे स्थित होने की ओर सकेत करती है। दक्षिण बिहार की वर्तमान पावापुरी तो निश्चय ही उनके शत्रु प्रदेश मे थी। अपने कट्टर शत्रु मागधो के प्रदेश मे उनकी उपस्थिति सदेह उत्पन्न करता है। दूसरे यदि पावा मगध राज्य मे स्थित होती तो, भगवान महावीर के निर्वाण के समय मगध नरेश अजातशत्रु वहा अवश्य उपस्थित होता, क्योकि जैन स्रोतो के अनुसार वह भगवान महावीर के प्रति अत्यत श्रद्धावान था।

डा0 के0 डी0 बाजपेयी[2] के अनुसार भगवान महावीर के निर्वाण के समय पावा मे और बुद्ध के परि निर्वाण के समय कुशीनगर मे मगध सम्राट अजातशत्रु के अनुपस्थिति आश्चर्यजनक है। किन्तु कुशीनगर मे अजातशत्रु के उपस्थित होने मे बाधा यह थी कि वह मल्लो की प्रसिद्धि एव लोकप्रियता से ईर्ष्या करता था। विचारणीय यह है कि उसने मगध के निवासियो के अनुरोध पर अपना दूत बुद्ध के धातु अवशेषो को प्राप्त करने के लिए भेजा था। रीज डेविड[3] का कथन है कि सम्राट ने अपने दूत द्वारा यह कह कर बुद्ध के धातु अवशेषो को प्राप्त किया

---

[1] भद्रवाहु, *कल्पसूत्र,* सूत्र सख्या 127।

[2] वाजपेयी, के0 डी0, *लोकेशन ऑफ पावा, युग–युगीन सरयु पार,* वारावणसी, 1987, पृष्ठ 54।

[3] डेविड रीज, पुर्वोद्धृत, पृ0 15–16।

कि वे भी उन्ही की भॉति एक क्षत्रिय है। डा0 शैलनाथ चतुर्वेदी[1] भी उस पुनीत अवसर पर अजातशत्रु की अनुपस्थिति पर आश्चर्य व्यक्त करते है। यदि निर्वाण मगध के किसी स्थान पर हुआ होता तो अजातशत्रु वहा अवश्य पहुँचता। चूकि कल्पसूत्र के अनुसार निर्वाण काल मे केवल शत्रु राजा ही उपस्थित थे। ऐसी स्थिति मे मगध राज्य के किसी भी स्थान पर पावा की स्थिति असभव थी। अत भगवान महावीर की निर्वाण स्थली ऐसे प्रदेश मे होनी चाहिए जहा पर मल्ल और लिच्छवि तो आसानी से एकत्रित हो गए परन्तु अजातशत्रु अनुपस्थित रहा। ऐसा स्थल मल्ल अथवा लिच्छवि प्रदेश मे ही सभव था अन्यत्र नही।

वस्तुत पावा की भौगोलिक स्थिति ऐसी होनी चाहिए जहा पर मल्ल, लिच्छवि एव काशी–कोशल के गणराजा भगवान महावीर के निर्वाण की सूचना पाते ही पहुच जाये। इन लिच्छवि गणराजाओ मे क्षत्रिय कुण्डपुर के भगवान महावीर स्वामी के कुछ स्वकुलीन ज्ञातृक गणराजा भी रहे होगे। उस समय काशी–कोशल मे कई छोटे–छोटे गणराज्य फल फूल रहे थे। स्वय पावा भी काशी–कोशल क्षेत्र मे ही था। अत भौगोलिक सामीप्यता, शासन पद्धति की समानता, मैत्री भावना एव भगवान महावीर के प्रति श्रद्धा के कारण काशी–कोशल एव बज्जि के 18 गणराजा तुरन्त आ गए। जैन ग्रन्थो से भी विहार के पावा की पुष्टि नही होती क्योकि डा0 गुलाबचद चौधरी के अनुसार[2]–''पावा विषयक जैन उल्लेखो का विश्लेषण करने से पता लगता है कि भगवान महावीर के निर्वाण स्थल के रूप मे पावा की अनुश्रुति, जैन ग्रन्थकारो के पास थी किन्तु वह कहा है? इसका ज्ञान उन्हे नही था । यदि उनका आशय नालदा जिले की वर्तमान पावापुरी से होता जो मगध की प्राचीन राजधानी राजगृह से 9–10 मील की दूरी पर ही है, पगडण्डी के रास्ते) तो मगध राज्य के उल्लेख के अन्तर्गत पावापुरी की चर्चा अवश्य रही होती । भगवान महावीर के निर्वाण का वर्णन करते समय राजगृह और पावा का साथ–साथ उल्लेख होना

---

[1] चतुर्वेदी शैलनाथ, *प्राचीन पावा,* श्रमण भगवान महावीर की वास्तविक निर्वाण भूमि पावा, गोरखपुर, 1973, पृ0 5–6।

[2] चौधरी, गुलाब चन्द, पुर्वोद्धृत, पृ0 62।

चाहिए था, पर ऐसा किसी ग्रन्थ मे नही किया गया है।" राजगृह का वर्णन आचरागसूत्र, भगवतीसूत्र, विविध तीर्थकल्प, हरवशपुराण आदि ग्रन्थो मे मिलता है। पर किसी भी ग्रन्थ मे राजगृह के निकटस्थ पावा या पावापुरी का उल्लेख नही है। जबकि राजगृह से 1 मील दूर स्थित नालदा का वर्णन राजगृह के साथ–साथ बहुत बार आया है।

बौद्ध ग्रन्थ महापरिनिर्वाण सुत्त के चतुर्थ भाणवार[1] के अध्याय सुमगल विलासिनी[2] के अनुसार कुशीनगर मे महापरिनिर्वाण के पूर्व बुद्ध ने पावा मे चुन्द कुमार पुत्र यहा सूकरमाद्दव का अपता अतिम भोजन ग्रहण किया था और अतिसार से पीडित हो गये थे।[1] वे पावा से कुशीनगर के शालवन मे 25 स्थानो पर बैठते हुए उसी दिन शाय काल तक पहुँच गये थे। मलल शेकर ने भी इस तथ्य की पुष्टि की है। रूगणता के अवस्था मे नालन्दा के पास स्थित पावापुरी से कुशीनगर तक (235 मील दूर) आने की कल्पना न केवल अतर्क सगत है वरन् असम्भव है।

योगेन्द्र मिश्र ने पावा की भौगोलिक स्थित के विषय मे गगा और गडक नदी के सन्दर्भ मे विचार किया है। भगवान बुद्ध राजगृह से चलकर गगा नदी पार करके वैशाली पहुँचे थे। वैशाली से पावा होकर कुशीनगर जाने मे पुन गगा नदी नही पडी थी। वैशाली से पावा जाने के लिए बुद्ध को गडक नदी पार करनी पडी थी। इससे सिद्ध होता है कि पावा वैशाली एव गडक से पश्चिम मे स्थित था।

चीनी यात्रियो फाह्यान (399–415 ई0) जो चन्द्रगुप्त द्वितीय के समय भारत आया था तथा ह्वेनसाग (629–645 ई0) जो हर्षवर्धन के समय भारत आया था, के विवरण से राजगिरी तथा नालदा पर विस्तृत प्रकाश पडता है, परन्तु पावा का उल्लेख नही आया है। इसके विपरित कुशीनगर यात्रा के सन्दर्भ मे उन्होने पावा का उल्लेख किया है। इत्सिग (673 ई0) ने भी नालदा मे काफी समय तक रहा परन्तु

---

[1] *राहुल साकृत्यायन, दीघनिकाय* (हिन्दी अनुवाद), महापरिनिर्वाण सुत्त, 2–3, पृ0 136–40।

[2] प्रो0 तिवारी, महेश, *सुमगल विलासिनी*, द्वितीय खण्ड, पटना 1974, पृष्ठ 282।

उसने भी पावा के सम्बन्ध मे कोई जानकारी नही दी। तिब्बती यात्री धर्मस्वामी (1264 ई0) ने भारत के धार्मिक स्थलो की यात्रा की थी। उन्होने भी पावापुरी का उल्लेख नही किया था। यदि इन विदेशी यात्रियो के यात्राकाल मे नालन्दा जनपद मे स्थित पावा का कोई आस्तित्व रहा होता अथवा इसकी धार्मिक महत्ता रही होती तो वे इसका उल्लेख अवश्य करते।

श्री भॅवर लाल नहटा[2] नालन्दा स्थित पावापुरी को भी महावीर की निर्वाण स्थली मानते है। वे नालन्दा स्थित इस पावा की दूरी कुशीनगर से 12 मील बताते है तथा जनपद कुशीनगर को बुद्ध की महापरिनिर्वाण स्थली नही मानते है। परन्तु उनकी यह मान्यता तथ्य से परे है। कुशीनगर को मगध साम्राज्य के अन्तर्गत मानने का कोई औचित्य नही है। कुशीनगर के भग्नावशेषो के उत्खनन से बुद्ध की परिनिर्वाण स्थली के रूप मे इसकी पुष्टि हो चुकी है, जो सर्वमान्य है।

बौद्ध ग्रन्थो मे भी मगध की राजधानी राजगृह या उसके उपनगर नालदा के समीपस्थ पावा का कोई उल्लेख नही है, जबकि निकटवर्ती अनेक ग्रामो व नगरो का है। परवर्ती बौद्ध लेखको ने भी उक्त पावा के आस्तित्व की कही चर्चा नही की है।

निष्कार्षत कहा जा सकता है कि पावापुरी से कोई ऐसा प्रमाण नही मिलता है जिसके आधार इसे तीर्थंकर महावीर के निर्वाणस्थली पावा के रूप मे स्वीकार किया जा सके। अस्तु यदि नालदा जनपद स्थित पावापुरी वास्तविक नालदा नही है, तो उस आधार का अनुसधान आवश्यक है जिससे वास्तविक पावा का अभिज्ञान प्राप्त हो सके।

8 पावा की पहचान फाजिलनगर–सठियॉव (कुशीनगर, उत्तर प्रदेश) से

कतिपय विद्वान मल्ल गणराज्य की उत्तरी राजधानी तथा महावीर की निर्वाण स्थली पावा की पहचान सठियॉव फाजिलनगर से करते है। जो कुशीनगर से लगभग 17 किमी0 दक्षिण पूर्व मे $26^0 - 80'$ अक्षाश उत्तर तथा $84^0 - 18'$ देशातर

---

[1] *दीघनिकाय,* 1–10।

[2] नहटा भॅवर लाल, पुर्वोद्धृत।

पूर्व लखनऊ–गुहावटी राजमार्ग सख्या 28 पर स्थित है। सठियॉव एव फाजिलनगर दो अलग–अलग ग्राम है। फाजिलनगर सठियॉव से उत्तर पूर्व मे लगभग 1 किमी की दूरी पर स्थित है। ए0सी0एल0 कार्लाइल पहले व्यक्ति है जिन्होने सठियॉव–फाजिलनगर को ही पावा के रूप मे मान्यता दी थी।[1] वे कुशीनगर से पावा की अन्वेषण यात्रा करते हुये दक्षिण–पूर्व मे सरेया, कुक्कुर पट्टी, नदवा, धनहॉ, चेतियॉव (सठियॉव), फाजिलनगर, उस्मानपुर, वनवीरा, मीरबिहार, पथरवा, झारमठिया (धारमठिया), करमैनी तथा गागी टीकर आदि स्थानो की यात्रा की थी।[2] कार्लाइल ने सठियॉव से 1 5 मील पश्चिम की ओर बहने वाली घाघी नदी की पुरानी पेटी को जिसे, आजकाल अन्हिया कहा जाता है, सस्कृत शब्द स्नान का अपभ्रश स्वीकार करते हुए यह सम्भवाना व्यक्त की है कि यह (अन्हिया) वही नदी हो सकती है जिसमे बुद्ध ने परिनिर्वाण के पूर्व स्नान किया था। अन्हिया वस्तुत घाघी नदी की एक वेणी है जो पडरौना से 10 मील उत्तर 'सिहा' ग्राम के निकट एक बडी झील से निकलती है। कार्लाइल ने इस तथ्य की ओर भी घ्यान आकृष्टि किया की पावा से कुशीनगर जाते समय बुद्ध ने जिस नदी मे स्नान किया था, उसी नदी को बौद्ध ग्रन्थो मे ककुत्था कहा गया है और घाघी तथा ककुत्था का एक ही अर्थ है। अत उनके मतानुसार ककुत्था आधुनिक घाघी नदी है। परन्तु बुद्ध के समय इसकी धारा वहॉ थी, जहॉ आज अन्हिया नाला बहता है। कार्लाइल ने अपने खोज विवरण मे सठियॉव तथा फाजिलनगर के प्राचीन डीह का विस्तृत विवरण दिया है। साथ ही साथ उन्होने एक स्तूप के घ्वसावशेष को भी स्वीकारा है।[3] उनके अनुसार सिलोनी बौद्ध साहित्य मे वर्णित कुशीनगर से पावा 12 मील पर गण्डक की ओर स्थित है।[4] कार्लाइल कुशीनारा के भग्नावेशेषो से दक्षिण–पूर्व मे सठियॉव के भग्नावशेषो की

---

[1] कार्लाइल, ए0सी0एल0, *ए0एस0आई0आर0*, भाग 18, पृ0 101–114।

[2] कार्लाइल, ए0सी0एल0, *रिपोर्ट ऑफ टूर्स इन गोरखपुर, सारण एण्ड गाजीपुर,* 1877–1878–79–80, वाल्यूम 22, पृ0 29, 30, 31, वाराणसी 1966।

[3] *ए0एस0आई0आर,* वाल्यूम 18, पृ0 101–114।

[4] तदैव, पृ0 29।

दूरी 10 मील मानते है।[1] राजबली पाण्डेय ने भी कार्लाइल के सिद्धात का अनुमोदन करते हुए सठियॉव–फाजिलनगर को ही पावा माना है।[2] इसी परम्परा का परिपालन भिक्षु धर्मरक्षित ने भी किया है और इसे ही पावा के रूप मे स्वीकार किया है।[3] कार्लाइल के तर्को से प्रभावित होकर डा0 एस0एन0 चतुर्वेदी ने भी इसी स्थल को प्राचीन पावा मानते है। डा0 योगेन्द्र मिश्र के अनुसार सठियॉव–फाजिलनगर ही महावीर की वास्तविक निर्वाण भूमि है।

कार्लाइल, डा0 राजबली पाण्डेय, धर्मरक्षित आदि विद्वान सठियॉव को चैत्य ग्राम का अपभ्रश मानते हुए इसे ही पावा समझते है। कार्लाइल ने चेतियॉव शब्द की व्युत्पत्ति चैत्य से माना है। उनके अनुसार यह शब्द चैत्य वन का बिगडा हुआ रूप है। परन्तु वहा के उत्खनन से यह निश्चित हो गया है कि सठियॉव चैत्यग्राम का अपभ्रश न होकर श्रेष्ठिग्राम का अपभ्रश है।

भाषा विज्ञान के आधार पर भी सठियॉव से पावा का सम्बन्ध जोडने का प्रयास किया गया। के0एल0 सरावगी[4] के अनुसार सठियॉव श्रीपावा का अपभ्रश है। 'श्री' का प्राकृत रूप सरि या सठि होता है। पावा का कालान्तर मे यॉवा हो गया। इस प्रकार श्री पावा सठियॉवा बन गया। बोलचाल मे सुविधा हेतु इसे सठियॉव कहने लगे। परन्तु डा0 नेमिचन्द्र शास्त्री[5] ने इसका खण्डन किया है। उनका कथन है कि पावा का अपभ्रश सठियॉव सिद्ध करने हेतु प्रस्तुत तर्क युक्ति सगत नही है। प्राकृत नियमानुसार श्री का सरि होना तो उचित है परन्तु र का ठ नही बनता है। इस प्रकार सठियॉवा को पावा का अपभ्रश मानना समीचीन नही है। पुरातातविक साक्ष्यो से सठियॉव का प्राचीन रूप श्रेष्ठिग्राम प्रमाणित हो जाने के पश्चात यहॉ कल्पना के लिए कोई स्थान नही रह जाता ।

---

[1] तदैव, पृ0 30।

[2] पाण्डेय, राजबली, पुर्वोद्धृत, पृ0 78।

[3] धर्मरक्षित, *कुशीनगर का इतिहास,* पृ0 24–26।

[4] के0एल0, सरावगी, *पावा समीक्षा,* छपरा, 1972, पृ0 42।

[5] शास्त्री, नेमचन्द्र, *तीर्थकर महावीर और उनकी देशना,* पृ0 301, सागर (म0प्र0), 1974

प्राचीन पावा का नाम परिर्वतित होकर फाजिलनगर हो जाने के विषय म आनन्द प्रसाद जैन का कथन है कि 'पावा' काल के प्रभाव मे स्मृति पटल से ओझल हो गया। सम्भवत किसी मुसलमान शासक ने पावा नगर नाम को फाजिलनगर के रूप मे परिवर्तित कर दिया। इस प्रकार पावा सदा के लिए भूला दिया गया। परन्तु यह कथन उचित नही प्रतीत होता क्योकि इतिहास से ज्ञात होता है कि मौर्य शासन काल के उत्तरार्द्ध मे पावा का लोप हो चुका था और मौर्य काल मे भारत मे मुसलिम सत्ता का आस्तित्व ही नही रहा है।

पावा के अन्वेषण मे सठियॉव–फाजिलनगर का उत्खनन कार्य गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास पुरातत्व एव सस्कृति विभाग तथा उत्तर प्रदेश राज्य पुरातत्व सगठन लखनऊ के सयुक्त तत्वाधान मे डा0 शैल नाथ चतुर्वेदी के निर्देशन मे सन् 1979–1980 ई0 मे हुआ। उत्खनन से महावीर की निर्वाण स्थली पावा का निश्चित अभिज्ञान तो नही हुआ, परन्तु सठियॉव की प्राचीनता प्रमाणित हुयी। फाजिलनगर टीले के उत्खनन से दो स्तर प्राप्त हुए। प्रथम स्तर गुप्तकालीन है तथा द्वितीय मध्यकालीन। सठियॉव से 'श्रेष्ठिग्रामाग्रहारस्य' अकित मिट्टी की एक मुद्रा प्राप्त हुयी थी[1] जिससे यह सकेत मिलता है कि सठियॉव का प्राचीन नाम श्रेष्ठिग्राम था और फाजिलनगर अग्रहार के रूप मे प्रतिष्ठित था। सठियॉव के गढे से मौर्ययुगीन ईटो से निर्मित दीवार के अवशेष, लाल रग के बर्तन के साथ काले लेपयुक्त तथा कृष्ण मार्जित भाण्ड (एन0बी0पी0) तथा धरातल से काले–लाल भाण्ड भी प्राप्त हुए थे। अत यह कहा जा सकता है कि फाजिलनगर सठियॉव क्षेत्र का निर्माण मौर्य काल एव गुप्त काल मे प्रारम्भ हुआ था। इसके पहले कोई आस्तित्व नही था। इस प्रकार सठियॉव का पावा से कोई सम्बन्ध नही है।

---

[1] फाजिलनगर–सठियॉव उत्खनन, सक्षिप्त परिचय, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एव सस्कृति विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1979।

'ए हिस्टारिकल एटलस ऑफ साउथ एशिया'[1] मे सठियॉव फाजिलनगर के निकट पावा अकित है जो इस नगर के पावा होने पर प्रश्न चिन्ह लगाता है।

सिहली बौद्ध ग्रन्थ दीपवश एव महावश मे पावा की स्थिती कुशीनगर से मही (गण्डक) नदी की ओर तीन गब्यूती (12मील) बतायी गई है जबकि फाजिलनगर–सठियॉव कुशीनगर से 10 मील दक्षिण–पूर्व मे स्थित है और इसका गण्डक नदी से कभी कोई सम्बन्ध नही रहा है।

फाजिलनगर सठियॉव को पावा स्वीकारने मे अधिकाश विद्वान सदेह प्रकट करते है। श्री भगवती प्रसाद खेतान[2] ने यह आपत्ति की है कि कार्लाइल ने कुशीनगर से सठियॉव की दूरी 10 मील माना है परन्तु दिशा निर्धारण के विषय मे गण्डक के सम्बन्ध मे श्री कार्लाइल मौन है। डा0 राजबली पाण्डेय[3] गण्डकी को पावा और कुशीनगर के बीच मान कर चलते है। श्री के0एल0 सरावगी[4] बुद्ध को वैशाली के निकट गण्डक को पार करने को निश्चित रूप से स्वीकारते है। जबकि वास्तविकता यह है कि फाजिलनगर–सठियॉव का गण्डक से न सम्बन्ध रहा है और न है। अत मात्र सम्भावनाओ के आधार पर सठियॉव को पावा स्वीकार नही किया जा सकता । गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग से सम्बद्ध सग्रहालय के सचालक एव फाजिलनगर–सठियॉव उत्खनन के निर्देशक प्रो0 एस0एन0 चतुर्वेदी के सहयोगी श्री कृष्णानन्द त्रिपाठी सठियॉव को पावा स्वीकारने मे सन्देह व्यक्त करते है उनका स्पष्ट विचार है कि गुप्तकालीन अग्रहार के पूर्व का वहा कोई अवशेष नही है। श्री त्रिपाठी की सम्भावना का उत्तर

---

[1] सम्पा0, पाल विटले, *ए हिस्टारिकल एटलस ऑफ साउथ एशिया,* शिकागो एण्ड लन्दन, 1978।

[2], *युग युगीन सरयूपार,* खेतान, भगवती प्रसाद, पावा की पहचान तथा वैशाली–पावा मार्ग की खोज, वाराणसी, 1987, पृ0 64।

[3] पाण्डेय, राजबली, पूर्वोद्धृत, पृ0 78।

[4] सरावगी, के0एल0, पूर्वोद्धृत, पृ0 20–21,।

विधिवत् पुरातातविक उत्खनन के पश्चात ही प्राप्त हो सकता है। अत पावा का अभिज्ञान अन्यत्र किया जा सकता है।

9 पावा की पहचान पडरौना (कुशीनगर, उ0 प्र0) से

पडरौना की प्राचीनता और पावा की स्थिति के विश्लेषण के आधार पर प्राचीन पावा की स्थिति पडरौना मे होने की सभावना व्यक्त की जाती है। कनिधम जैसे पुरातत्वविद पावा, पावन, पदरमन, पदरबन तथा पडरवन आदि विभिन्न नाम रूपो के परिवर्तन रूप मे पडरौना नाम के विकास को स्वीकारते है।[1] 1914 ई मे डा बुकानन के सर्वेक्षण के समय इसे परऔना (Parraona) सम्बोधित किया जाता था।[2] तत्पश्चात् कनिधम के सर्वेक्षण काल (1862 ई0) मे पडरओना (Padraona) नाम से इसका सम्बोधन होता था।[3] फ्यूहरर[4] के समय (1886–91) इसमे किचित परिवर्तन हुआ और यह परौना पुकारा जाने लगा।

आधुनिक पडरौना नगर पूर्वी उत्तर प्रदेश के कुशीनगर जनपद के उत्तरी– पूर्वी कोने पर 26°54’ उतरी अक्षाश तथा 83°59’ पूर्वी देशान्तर पर, हिमालय की तराई मे गण्डक नदी से 12 मील की दूरी पर प्रकृतिस्थ है। यहॉ से चम्पारन (बिहार प्रदेश) की सीमा पॉच मील की दूरी से प्रारभ हो जाती है। यह स्थल कुशीनगर से 12 मील उत्तर–पूर्व की दिशा मे बाणी (बॉसी) नदी के दक्षिणी छोर पर स्थित है।

सुत्तनिपात[5] के परायणवग्ग के अनुसार पावा उत्तर भारत मे श्रावस्ती से कुशीनगर और कुशीनगर से वैशाली जाने वाले मुख्य व्यापार मार्ग पर स्थित था।

---

[1] कनिघम ए, *द एन्शियट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया,* पृ0 365, वाराणसी, 1975।

[2] मार्टिन माण्टगोमरी, पुर्वोद्धृत, पृ0 354 ।

[3] कनिघम, ए0, *द एन्शियट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया,* पृ0 365, वाराणसी, 1975।

[4] फ्यूहरर, ए0, द मानुमेण्टल एण्टीक्विटीज एण्ड इन्स्क्रिप्शन इन नार्थ वेस्टर्न प्रॉविन्सेज, एण्ड अवध, पृ0 249।

[5] सुतनिपात, परायणवग्ग, पद 1011,1015, पृ0432

सुमगलविलासनी[1] से ज्ञात होता है कि पावा, कुशीनगर से 3 गव्यूति (12 मील) की दूरी पर स्थित था। अमरकोश[2] के अनुसार, एक गव्यूति चार मील के बराबर होती है। सिहली बौद्ध ग्रन्थ दीपवश एव महावश[3] के अनुसार कुशीनगर से 12 मील दूर गण्डकी नदी की दिशा मे पावा स्थित था। टर्नर[4] ने भी स्वीकार किया है कि कुशीनगर से पावा की दूरी 12 मील है। मललसेकर[5] ने भी इस तथ्य की पुष्टि की है।

बौद्ध ग्रन्थो मे विवृत्त दिशा एव दूरी के आधार पर डा बुकनन प्रथम व्यक्ति थे जिन्होने पडरौना को पावा होने का आधार अपने सर्वेक्षण द्वारा प्रदान किया। उन्होने 1814 मे इस क्षेत्र का सर्वेक्षण करके पडरौना के उपनगर छावनी के निकट कुबेर स्थान जाने वाली सडक के दक्षिण स्थित प्राचीन टीले का उत्खनन कराया था।[6] कनिधम ने 1861 मे इस क्षेत्र का सर्वेक्षण तथा उस टीले का उत्खनन करवा कर यह घोषित किया था कि पडरौना ही मल्लो की राजधानी पावा है,[7] जो प्राचीन काल मे गण्डक के किनारे स्थित था। उन्होने टीले के कुछ उपरी भाग की खुदाई भी करवाया जहॉ से गोल किनारे वाले बडे आकार के ईंटे मिले थे। उन्होने यहॉ पर दो स्तूपो एव 100 वर्ग फीट वर्गाकार आगन की सम्भावना व्यक्त की थी। वस्तुत पडरौना के नाम से भी पावा की एकात्मकता का बोध होता है। रोचक बात

---

[1] सुमगल विलासिनी, पूर्वोद्धृत, पृ0 282।

[2] गव्यूतिस्तुकोशयुगलम्, *अमरकोश,* मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1984।

[3] पाण्डेय, राजबली, पूर्वोद्धृत, पृ0 78

[4] टर्नर, जी, बुद्धिस्ट एनल्स, जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसाइटी न0 19 भाग–2, पृ0 7, कलकत्ता, 1838

[5] मललसेकर, जी0 पी0 डिक्शनरी ऑफ पालि प्रापर नेम्स, लदन, 1938 पृ0 193।

[6] मार्टिन माण्टगोमरी, पूर्वोद्धृत, पुर्नसस्करण, 1976, वाल्यूम 2, पृ 354–357।

[7] ए0 एस0 आई0 आर0, 1861–62, वाल्यूम I पृ0 74–76, कनिघम, ए0, एन्सियट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया, पृ0 366–67।

यह है कि कनिधम के इस पावा–अभिज्ञान को अन्य अनेक विद्वानो ने भी समय–समय पर समर्थन दिया है।

श्री नन्दलाल डे ने भी इस तथ्य को स्वीकारा है कि पडरौना गण्डक के किनारे स्थित था, जहॉ भगवान बुद्ध का निर्वाण से पूर्व पडाव था।[1] श्री राम प्रसाद पाण्डेय ने लिखा है कि पडरौना, प्राचीन पावापुरी है जहॉ वशिष्ट गोत्रीय मल्ल राजपूतो का एक प्रसिद्ध सघ राज्य था तथा कुशीनगर के मल्ल राज्य से पडरौना के मल्लो का महत्व अधिक था।[2] आधुनिक सशोधक डा कृपाशकर सिह ने भी इस तथ्य का अनुमोदन किया है।[3] डा सिह के अनुसार बाणी नदी प्रारभिक काल मे सुरक्षा की दृष्टि से अन्य जातियो के आक्रमण से पडरौना के रक्षापक्ति का कार्य करती थी। पडरौना की स्थिति के बारे मे डा0 सतीश चद्र सिह ने लिखा है कि वर्तमान वनी (बॉसी) नदी गण्डक की एक शाखा है जो पडरौना के पास से बहती है।[4]

गोरखपुर गजेटियर मे भी उल्लेख है, कि पडरौना के निकट एक पोखरे के उत्खनन के समय सन् 1878 ई मे एक बडी नाव के टुकडे मिले थे। इससे भी सूचित होता है कि गण्डक नदी की धारा कभी इस ओर से बहती रही है।

परन्तु कार्लाइल ने जो कनिधम के बाद 1876–77 मे इस क्षेत्र का सर्वेक्षण किया था, कनिधम के मत का खण्डन किया है। कार्लाइल का पडरौना को पावा न मानने का मूलभूत आधार यह था कि ''पडरौना की स्थिति वैशाली–कुशीनगर के सीधे मुख्य मार्ग पर नही है। यह वैशाली–कुशीनगर मार्ग से

---

[1] डे नन्दलाल, *दी ज्याग्राफीकल डिक्शनरी ऑफ एशिएण्ट एण्ड मेडिवल इण्डिया,* पृ0 250, लन्दन, 1927।

[2] पाण्डेय रामप्रसाद, *गोरखपुर जिले का इतिहास,* पृ0 36, प्रयाग, 1942।

[3] सिह, कृपाशकर, *लैड यूज एण्ड न्यूट्रिशन इन पडरौना तहसील,* देवरिया (अप्रकाशित), पृ0 127।

[4] सिह, सतीशचद्र ,*चेन्जेज इन द कोर्स ऑफ रिवर एड इट्स एफेक्ट्स ऑन द अर्बन सेटलमेट्स इन द मिडिल गगेज प्लेन,* वाराणसी, 1973, पृ0 76।

सीधे मुख्य मार्ग पर नही है तथा कुशीनगर की पडरौना की राही दूरी बौद्ध ग्रन्थो मे बतायी गई दूरी से अधिक है। यह वैशाली–कुशीनगर मार्ग से बिल्कुल हटकर बहुत उत्तर की ओर स्थित है। अत पडरौना को पावा मानने की कोई सभावना ही नही है। ये फाजिल नगर–सठियॉव को पावा मानते है और इसे वैशाली कुशीनगर मार्ग पर स्थित बताते है।[1]

अब मूल प्रश्न, मार्ग का है। वैशाली से कुशीनगर का प्राचीन मार्ग कौन सा था, इस तथ्य के निर्धारण के लिए इस क्षेत्र का बौद्धकालीन भौगोलिक अध्ययन अपेक्षित है।

बौद्ध साहित्य मे बुद्धकालीन राजमार्गों के विषय मे विस्तृत विवरण मिलता है। महापरिनिब्बाण सुत्त से पुक्कस मल द्वारा 500 गाडियो के साथ कुशीनगर से पावा की यात्रा करने का विवरण प्राप्त होता है।[2] सुत्तनिपात के परायण वग्ग मे पावा को उत्तर भारत मे श्रावस्ती, कुशीनगर, वैशाली के प्रमुख व्यापारिक मार्ग पर स्थित बताया गया है। राजगृह – श्रावस्ती तक का मार्ग प्रमुख राजमार्ग था, जिस पर अम्बलट्ठिका, नालन्दा, पाटलिग्राम (पाटलिपुत्र), कोटिग्राम, वैशाली, भण्डगाम, हत्थिगाम, अम्बगाम, जम्बुगाम, भोगनगर, पावा, कुशीनगर, पिप्पलीवन, रामगाम, कपिलवस्तु, सेतव्या इत्यादि नगर स्थित थे। बावरि ब्राह्मण के शिष्यगण, श्रावस्ती से राजगृह जाते समय, श्रावस्ती, सेतव्या, कपिलवस्तु, कुशीनगर, पावा, भोगनगर, वैशाली और मागधपुर (राजगृह) के विश्राम–स्थलो पर ठहरते हुए रमणीय पाषाण चैत्य मे पहुँचे थे।[3] इस प्रकार श्रावस्ती–राजगृह बुद्धकालीन भारत का एक प्रमुख मार्ग था जिस पर कुशीनगर स्थित था।

---

[1] कार्लाइल, ए0 सी0 एल0, *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, रिपोर्ट ऑफ टूर्स इन गोरखपुर, सारण एड गाजीपुर,*1877–78–79–80, वाराणसी, 1966, पृ 30 I0

[2] *साकृत्यायन राहुल एव कश्यप जगदीश दीघ निकाय* (हिन्दी), परिनिर्वाणसुत, 2/3, पृ0 138–39।

[3] सेतव्य कपिलवत्थु कुसीनार च मदिर।

पाव च भोगनगर वेसालि मगधपुर ।। *सुतनिपात, परायणवग्ग,* पद 1011, 1015, पृ0 432।

महापरिनिब्बाण सुत्त से राजगृह–कुशीनगर मार्ग के विषय मे विस्तृत सूचना मिलती है। साथ ही महापरिनिर्वाण के पूर्व बुद्ध ने वैशाली से कुशीनगर की यात्रा करते हुए जिन नगरो एव गॉवो मे बिहार किया था, उसका क्रमबद्ध अभिज्ञान प्रदान करता है।[1] इसमे ग्रामो का क्रम इस प्रकार दिया गया है– भण्डगाम, हत्थिगाम, अम्बुगाम, जम्बुगाम और भोगनगर।[2] इसके अनुसार वैशाली से चलकर सर्वप्रथम वे भण्डगाम मे विश्राम किये थे। अगुत्तर निकाय के अनुसार, भण्डगाम वज्जि जनपद मे था तथा इसकी स्थिति वैशाली और हत्थिगाम के मध्य थी। हत्थिगाम भी वज्जि जनपद मे था।[3] सयुक्तनिकाय वज्जिसुत मे इसे वज्जियो का ग्राम बताया गया है।[4] अम्बगाम, जम्बुगाम और भोगनगर किस जनपद मे स्थित थे, इसकी पालि साहित्य मे कोई सूचना नही मिलती है। बी सी लाहा[5] का मत है कि भोगनगर, मल्लराष्ट्र मे स्थित था। भरत सिह उपाध्याय[6] के अनुसार पावा के अधिक समीप होने के कारण इसे मल्ल राष्ट्र मे ही मानना उचित होगा। किन्तु राहुल सकृत्यायन[7], हेमचन्द्र राय चौधरी[8], और मल्ल शेकर[9] इसे वज्जिसघ का अग और नगर मानते है। वज्जि सघ और मल्ल राष्ट्र के भौगोलिक अध्ययन से भी यह स्पष्ट है कि गण्डक मल्लराष्ट्र' और वज्जि सघ की विभाजक रेखा थी।

इस प्रकार पावा–कुशीनगर मार्ग के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि बुद्ध काल मे कुशीनगर–पावा मार्ग वैशाली से श्रावस्ती तक जाने वाले मुख्य राजमार्ग पर स्थित था।

---

[1] *दीघनिकाय,* महापरिनिर्वाणसुत, 2/3, पृ0 122।

[2] तदैव पृ0 135।

[3] *अगुतर निकाय,* खण्ड 2, पृ0 1।

[4] *धर्मरक्षित सयुक्तनिकाय* (हिन्दी, खण्ड 2, सारनाथ, वाराणसी, 1954, पृ0 497)।

[5] लाहा विमलचरण, *ज्याग्राफी ऑफ अर्ली बुद्धिज्म वाराणसी, 1973,*, पृ0 2

[6] उपाध्याय भरत सिह, *बुद्ध कालीन भारतीय भुगोल,* प्रयाग, 1961, पृ0 327।

[7] *दीघनिकाय* (हिन्दी,) पृ0 325।

[8] राय चौधरी, हेमचद, *पालिटिकल हिस्ट्री ऑफ नार्दर्न इण्डिया,* पृ0 118–120।

[9] मलल शेकर, जी0पी0, *डिक्शनरी ऑफ पालि प्रापर नेम्स,* खण्ड 2, पृ0 93।

के0डी0 वाजपेयी ने पावा की पहचान, पडरौना के साथ करते हुए पडरौना को उक्त मार्ग पर स्थित बताया है। उनके अनुसार, यदि हम वैशाली और लुम्बनी के बीच अशोक द्वारा स्थापित स्तम्भो की स्थिति का अध्ययन करे तो हमे पता चलता है कि मौर्य सम्राटो ने पाषाण स्तम्भो की स्थापना मुख्य मार्ग पर ही करवायी थी।[1]

कनिधम और कार्लाइल ने स्तभो के आधार पर प्राचीन राजमार्गो का निर्धारण किया है। ये स्तभ बुद्ध के उपदेशो के प्रचार प्रसार के साथ–साथ राजाज्ञा एव मार्ग निर्देशन का कार्य करते थे। कनिधम[2] ने तो केवल इन मार्गो का सकेत ही किया है, परन्तु कार्लाइल[3] ने अशोक स्तभो के आधार पर दो मुख्य राजमार्गो का विस्तृत विवरण दिया है – एक पाटलिपुत्र से कौशाम्बी एव दूसरा पाटलिपुत्र से रामपुरवा जाता था। कार्लाइल ने रिपोर्ट मे लिखा है कि ''गगा के उस पार वैशाली से रामपुरवा के बीच चार अशोक स्तभ आज भी दृष्टिगोचर होते है। सम्राट अशोक ने इन स्तभो को गण्डक से एक निश्चित दूरी को ध्यान मे रखते हुए गण्डक के पूर्व दिशा मे वैशाली और उत्तर–पश्चिम की दिशा मे लौरिया नन्दनगढ की ओर स्थापित करवाये थे।''[4]

श्री कार्लाइल के अनुसार, प्रथम अशोक स्तभ वैशाली से थोडी ही दूर उत्तर मे बखरानामक स्थान पर निर्मित है। यह स्तभ वस्तुत बखरा के समीप कोल्हुआ ग्राम मे है। दूसरा अशोक स्तभ प्रसिद्ध ग्राम केसरिया से 20 मील उत्तर–पश्चिम तथा बेतिया से 19 मील दक्षिण–पूरब लौरिया – अरेराज नामक ग्राम मे स्थापित किया गया है। कनिधम ने लिखा है कि केसरिया वैशाली से 30 मील उत्तर–पश्चिम की ओर स्थित है।[5] कार्लाइल ने तीसरे अशोक स्तम्भ को बेतिया से

---

[1] वाजपेयी, के0डी0, *लोकेशन ऑफ पावा, युग युगीन सरयू पार,* वाराणसी, 1987, पृ0 56।

[2] कनिघम, ए0, *एनसियट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया,* वाराणसी, पृ0 497।

[3] कार्लाइल, ए0सी0एल0, *ए0एस0आई0आर0, टूर्स इन गोरखपुर सारन एण्ड गाजीपुर,* पृ0 54।

[4] कार्लाइल, ए0सी0एल0, *ए0एस0आई0आर0, टूर्स इन गोरखपुर सारन एण्ड गाजीपुर,* पृ0 54।

[5] कनिघम, ए0, *एनसियट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया,* वाराणसी, पृ0 376।

15 मील उत्तर–पश्चिम दिशा मे लोरिया नन्दनगढ ग्राम के निकट ही, उत्तर–पूरब मे स्थित बताया है। कनिधम ने लौरिया नन्दनगढ से गण्डक की दूरी 10 मील बताई है जो आज भी लगभग वही है। कनिधम ने इस मार्ग की ऐतिहासिकता एव वास्तविकता को ही ध्यान मे रख कर पडरौना को पावा माना है। उन्होने लिखा है कि पडरौना लोरिया नन्दनगढ से सीधी रेखा मे दक्षिण–पश्चिम के कोने पर 27 मील की दूरी पर स्थित है।

श्री भगवती प्रसाद खेतान जो पडरौना के ही निवासी थे, पडरौना की पहचान पावा से करने का प्रयास किया है।[1] श्री खेतान का कहना है कि श्री कार्लाइल, वैशाली–नेपाल मार्ग का अशोक स्तम्भ एव स्तूप के आधार पर तो विस्तृत से वर्णन करते है, लेकिन लौरिया नन्दगढ से पावा की दिशा और दूरी को पूरी तरह विस्मृत कर देते है। अशोक स्तभो के आधार पर, यही प्रतीत होता है कि वैशाली–कुशीनगर मार्ग पडरौना होकर जाता है। कार्लाइल वैशाली–कुशीनगर के सठियॉव फाजिलनगर होकर जाने वाले जिस मार्ग को प्रतिपादित करते हैं, उस पर एक भी अशोक स्तम्भ निर्मित नही है। श्री खेतान का मानना है कि इस क्षेत्र से प्राप्त पुरातात्विक सामग्रियॉ विशेष रूप से जैन तीर्थकरो की मूर्तिया एव अन्य कलाकृतियॉ शुग, गुप्त, पाल इत्यादि काल के इतिहास को प्रतिबिम्बित करती है तथा स्थल की प्राचीनता की पुष्टि करते हुए पावा की ओर सकेत करती है।[2] श्री कनिधम द्वारा सिद्धान्तत पडरौना को पावा के रूप मे प्रतिपादन एव अन्य विद्वानो द्वारा इसके समर्थन से मै इस निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ कि पडरौना ही पावा है।

परन्तु भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग, पटना सर्किल द्वारा डा0 अरूण कुमार सिह के नेतृत्व मे 1985 मे छावनी के टीले का उत्खनन कराया गया जिससे स्तूप की सभावना निर्मूल सिद्ध हुई और यह टीला मध्यकालीन भवन का

---

[1] खेतान, भगवती प्रसाद, *महावीर निर्वाण भूमि पावा एक विमर्श,* वारावणसी, 1992, पृ0 92–135।

[2] खेतान, भगवती प्रसाद, *पावा अनुशीलन, महावीर निर्वाण भूमि पावा एक विमर्श,* वाराणसी, 1992, पृ0 167।

अवशेष ठहरा। अत इसका पूर्ण उत्खनन तथा आस–पास के क्षेत्रो का सर्वेक्षण आवश्यक है। निश्चित पुरातात्विक प्रमाण के अभाव मे पडरौना को अतिम रूप से पावा घोषित नही किया जा सकता।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्राचीन पावा की पहचान अभी तक नही हो पायी है। प्रमाणिक साक्ष्य के अभाव और सशय की स्थिति मे लोग दो–दो पावा पुरी का परिदर्शन कर लेते है, जबकि पावापुरी एक नगरी थी जो मल्लो की दूसरी राजधानी कुशीनगर से बहुत दूर नही थी और इसी स्थान पर जैन धर्म के 24 वे तीर्थंकर महावीर स्वामी निर्वाण को प्राप्त हुए थे।

चूँकि मेरे शोध का विषय ही 'कुशीनगर जनपद का कला और पुरातत्व' है, इस दृष्टि से मैने सम्पूर्ण जनपद का पुरातात्विक सर्वेक्षण किया। सर्वेक्षण के दौरान मुझे फाजिल नगर – सठियॉव तथा उसके समीपवर्ती क्षेत्रो से लेकर तुर्कपट्टी मछुअवॉ तक ऐसे अनेक टीले, खण्डहर अथवा पुरातात्विक महत्व के स्थल मिले, जहॉ उत्खनन तो क्या ढग का पुरातात्विक सर्वेक्षण भी नही हुआ है। इन स्थलो मे छहूँ, उजारनाथ, सपहीखास, देवलवृत, गगलवॉ एव धारमठिया के अवशेष हमारा ध्यान बरबस ही आकृष्ट करते है। इनमे धारमठिया की चर्चा की जा चुकी है। देवलवृत और उससे जुडा हुआ ग्राम गगलवॉ के पुरावशेष हमारा ध्यान सर्वाधिक आकृष्ट करते है जहॉ गुप्त कालीन ईटो के भण्डार देखे जा सकते है। यहॉ से ब्राह्मण धर्म की अनेक मूर्तियॉ मिली है। यहॉ का एक प्राचीन विशाल भवन का अवशेष और इस स्थल की सुरक्षा प्राचीर के अवशेष हमे यह सोचने पर विवश करते है कि यह श्रावस्ती के समान कोई महत्वपूर्ण केन्द्र था। यह स्थल कुकुत्था नदी के पूर्व की ओर स्थित है। पावा से सम्बद्ध प्रमाण इन स्थलो के उत्खनन से ही प्रकाश मे आ सकते है। ऐसा न होने के कारण, वर्तमान परिस्थिति मे हम यही सभावना व्यक्त कर सकते है कि पावापुरी यही कही रही होगी।

कुशीनारा (कुशीनगर) के मल्ल

जैसा कि पूर्व मे उल्लेख किया जा चुका है, प्राचीन कुशावती व कुशीनारा ही आधुनिक कुशीनगर है[1] जिसकी ऐतिहासिकता पुरातात्विक सामाग्रियो के आधार पर प्रमाणित हो चुकी है। वैदिक साहित्य मे मल्लो अथवा उनकी राजधानी का कोई उल्लेख नही मिलता है। परन्तु परवर्ती साहित्य मे उनका वर्णन अनेक ग्रन्थो मे मिलता है। रामायण तथा रघुवश[2] के अनुसार कुशावती की स्थापना राम द्वारा अपने पुत्र कुश के लिए की गयी थी। कुश के अयोध्या चले जाने के बाद लक्ष्मण के पुत्र चन्द्रकेतु 'मल्ल' ने कुशावती को अपनी राजधानी बनाया और उसके द्वारा आवर्त भू–खड मल्ल राष्ट्र कहलाया। महाभारत पूर्व युग मे महासुदस्सन को कुशावती का राजा बताया गया है।[3] इससे सिद्ध होता है किसी समय मल्ल राज्य राजाओ द्वारा शासित था। महाभारत के भीष्म पर्व[4] मे कुशीनारा, मल्ल राष्ट्र के रूप मे वर्णित है जो अग, वग और कलिग के समान ही पूर्वी भारत मे एक प्रमुख राज्य था। महाभारत[5] का मल्लराष्ट्र (मल्ल रट्ठ) मुख्यत दो भागो मे बटा हुँआ था। इनमे से एक की राजधानी कुशावती या कुशीनारा तथा दूसरे भाग की पावा थी।[6] सम्भवत काकुत्था नदी जिसे आजकल कुकु (घीघी) कहते है, दोनो भागो को एक दूसरे से अलग करती थी। महाभारत मे मल्ल के दो भागो–मुख्य मल्ल तथा दक्षिण मल्ल का उल्लेख मिलता है।[7] दक्षिण मल्ल की राजधानी कुसीनारा थी।

गौतम बुद्ध के पूर्व, विदेह की भॉति मल्ल भी राजतत्रात्मक राज्य था। कुक जातक मे ओक्काक (इक्ष्वाकु) नाम से एक मल्ल राजा का उल्लेख मिलता है। इस नाम से यह सकेत मिलता है कि साक्यो की भॉति मल्ल राजकुमार भी अपने

---

[1] दत्त एन0 एण्ड बाजपेयी, के0डी0, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 345।

[2] कालीदास, *रघुवश,* 15/97।

[3] *महावश,* भाग 2, पृ0 1–6 , *दीघनिकाय,* भाग दो, पृ0 134।

[4] *महाभारत, भीष्म पर्व,* 10/45।

[5] *महाभारत* VI, 9/34।

[6] *महापरिनिब्बानसुत्तन्त,* भाग–2, पृ0 161–162।

[7] *महाभारत,* II, 30/3, 12।

को इक्ष्वाकु वश का ही कहते थे।[1] मल्ल राज्य के राजतत्र के काल मे कुसावती नगर इसकी राजधानी थी। वह कब और कैसे गणराज्यो मे परिवर्तिति हो गया यह कहना कठिन है, किन्तु बुद्ध के काल मे उसकी स्थिति निश्चित रूप से एक स्वतत्रत गणराज्य की थी। कुसीनारा के मल्लो के सथागार का उल्लेख अनेक स्थलो पर हुआ है। जहॉ एकत्र होकर वे विचार विमर्श करते थे। बुद्ध काल मे मल्लो की राजधानी कुसीनारा एक महत्वपूर्ण नगर के रूप मे प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी थी, जहॉ पर बुद्ध को महापरिनिर्वाण प्राप्त हुआ था।[2]

कुशीनगर के पुरातात्विक उत्खनन के पूर्व कुशीनगर की स्थिति के बारे मे विद्वानो मे मतैक्य नही था। महापरिनिब्बानसुत्त मे उल्लेख है कि कुसीनारा नगर का साल उपवन (उपवतन) हिरण्यती नदी के समीप था। फाह्यान ने भी कुशीनगर की स्थिति हिरण्य नदी के किनारे बताई है और उसके किनारे युगल शाल वृक्षो का भी विवरण दिया है।[3] विन्सेन्ट स्मिथ के अनुसार गण्डक का नाम ही हिरण्यवती था और कुसीनारा अथवा कुसीनगर छोटी राप्ती अथवा गण्डक के मिलन बिन्दु के समीप की पहाडियो के उस पार नेपाल मे था[4] तथापि उन्होने कालान्तर मे अपने मत मे सशोधन किया। रीज डेविड्स ने भी यह मत व्यक्त किया था कि चीनी तीर्थ यात्रियो के विवरण की दृष्टि से कुशीनगर शाक्य प्रदेश के पूर्व एव वज्जिगण के उत्तर मे पहाडी ढाल पर स्थित था।[5] परन्तु कनिधम के प्रमाणिक उत्खननो तथा कसया के समीप निर्वाण मन्दिर के पीछे स्थित विशाल स्तूप से "परिनिर्वाण चैत्ये ताम्रपट्ट इति"[6] शब्दो सहित प्राप्त एक ताम्रपत्र से विद्वानो ने

---

[1] *महापरिनिब्बानसुत्तन्त, डायलॉग ऑफ द बुद्धा,* पार्ट I, पृ0 114 / 115

[2] जातक, 1 292।

[3] गाइल्स, एच0ए0, *द ट्रेवेल्स ऑफ फा–ह्यान,* लन्दन, 1956, पृ0 40–41।

[4] स्मिथ, वी0, *ए अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया,* चतुर्थ सस्करण, लन्दन, 1924, पृ0 168,

[5] डेविड, रीज, *बुद्धिस्ट इण्डिया,* पृ0 26।

[6] *ए0एस0आई0आर,* खण्ड 1, 1861–62, पृ0 77–78 , *जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसाइटी,* 1913, पृ0 152।

निर्विवाद रूप से कसया के निकटवर्ती खण्डहर को मल्ल गणराज्य की दक्षिणी राजधानी कुशीनगर को स्वीकार कर लिया है। कनिधम ने कुशीनगर को समीपवर्ती नगर कसया से समीकृत किया है तथा इसे गोरखपुर से पूरब 35 मील दूर बताया है।[1]

वर्तमान कुशीनगर 26°45′ उत्तरी अक्षाश और 83°55′ पूर्वी देशान्तर के बीच स्थित है। यह गोरखपुर से 50 किमी पूरब, देवरिया से 33 किमी उत्तर और पडरौना से 18 किमी दक्षिण–पश्चिम मे स्थित है।

डा राजबली पाण्डेय ने कुशीनगर के आधुनिक कसया और अनरूधवा नामकरण के सम्बध मे लिखा है कि मल्लराष्ट्र के पतन के पश्चात कुशीनगर का राजनैतिक महत्व जाता रहा, इसकी धार्मिक प्रतिष्ठा ही केवल शेष रही। इसलिए बौद्ध सन्त महात्माओ के नाम के ऊपर इन स्थानो के नाम पडे। अट्ठकथा के अनुसार बुद्ध के निर्वाण के पश्चात् उनके शिष्य आनन्द राजगृह चले गये। किन्तु मल्लो को सान्तवना देने के लिए उनके दूसरे शिष्य अनिरूद्ध कुशीनगर मे कई दिनो तक रूके रहे। अत उन्ही के नाम पर कालान्तर मे कुशीनगर का नाम अनिरूधपुर पडा जो बिगडते –2 अनुरूधवॉ हो गया। कसया उस स्थान का नाम पडा जहॉ पर महाकश्यप ने पावा से कुशीनगर आते समय दोपहर को विश्राम किया था। काश्यप का ही विकृत रूप आधुनिक कसया नाम से प्रचलित है। अत मल्लो की राजधानी कुशीनगर विद्वानो द्वारा आधुनिक कसया को ही स्वीकारा जाता है।[2]

बौद्ध साहित्य मे वर्णित कुशीनगर

---

[1] कनिंघम, ए0, *एशियट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया,* पृ0 363, 493।

[2] पाण्डेय राजबली, पूर्वोद्धृत, पृ0 77।

बौद्ध साहित्य मे कुशीनगर का विशद वर्णन मिलता है। इसमे कुशीनगर के साथ कुसीनारा1 कुशीनगरी2 और कुशीग्राम3 प्रभृति अन्य नामो का भी उल्लेख है। बुद्ध पूर्व युग मे यह कुशावती के नाम से विख्यात थी। बुद्ध ने कुशीनारा को प्राचीन कुशावती से अभिर्हित किया था। विस्तार और समृद्धि की दृष्टि से उनका कहना था कि यह राजनधानी पूर्व से पश्चिम 12 योजन लम्बी एव उत्तर से दक्षिण 7 योजन चौड़ी थी।4 इसमे सात प्राकार, चार तोरण और खजूर वृक्षो के साथ निकुज थे। यह नगर हिरण्यवती नदी के पश्चिमी तट के समीप एक प्रमुख स्थलमार्ग पर स्थित था। इसी स्थल–मार्ग से बावरी ऋषि के शिष्यो के जाने का उल्लेख है।5 बुद्ध की मृत्यु के समय महाकश्यप भी राजगृह से कुशीनगर इसी मार्ग से गये थे।

इस नगर की स्थिति, रक्षा एव व्यापार की दृष्टि से सर्वथा अनुकूल थी। नगर के समीप ही उपवतन नामक शालवन था जिसके एक भाग को मल्लो ने प्राचीन उद्यान मे परिणत कर दिया था। यह हिरण्यवती के दूसरे किनारे पर स्थित था।[6] इस उपवतन शालवन मे ही भगवान् ने अन्तिम निवास किया था और यही युगल साल वृक्षो के नीचे उनका महापरिनिर्वाण हुआ था। उपवतन शालवन को कनिघम ने वर्तमान कसया को माथा कुँवर कोट से समीकृत किया है।[7] अन्तिम बार कुशीनारा मे आने से पूर्व भी भगवान बुद्ध यहा आये थे। अगुत्तरनिकाय के कुशीनारा सुत्त का उपदेश बुद्ध ने मल्लो को उपवतन शालवन मे ही दिया था।[8]

---

[1] *दीघनिकाय,* भाग 2, पृ0 109।

[2] *दिव्यावदान,* पृ0 152।

[3] तत्रैव, पृ0 108।

[4] साकृत्यायन, राहुल, *दीघनिकाय* (हिन्दी), वाराणसी, 1935, भाग 2, पृ0 146–152।

[5] *सुत्तनिपात,* 5, 10, 12।

[6] *सारत्थप्पकासिनी,* जिल्द 1, पृ0 222।

[7] *ए0एस0आई0ए0आर0,* 1861–1862, पृ0 77–83।

[8] *अगुतर निकाय,* जिल्द 2, पृ0 238।

बौद्ध ग्रन्थो मे कुशीनगर एव अन्य प्रमुख नगरो के बीच की दूरी उल्लिखित है जो इस नगर की स्थिति निश्चित करने मे सहायक है। कुशीनगर से पावा की दूरी तीन गव्यूत (लगभग 3/4 योजन, आधुनिक 6मील) थी। बुद्ध ने अपनी अन्तिम यात्रा मे इसी रास्ते से ककुथा नदी को पार किया था। राजगृह से इस नगर की दूरी 25 योजन एव सागल (स्यालकोट) से 100 योजन थी। ह्वेनसाग कुशीनगर से 700 ली चलकर वाराणसी पहुँचा था।[1]

कुशीनगर बहुत समृद्धिशाली नगर था। स्वय बुद्ध ने इसकी प्रशसा की है। बुद्ध–घोष ने उन विशिष्ट कारणो का उल्लेख किया है, जिनसे प्रेरित होकर बुद्ध ने कुशीनगर को परिनिर्वाणार्थ चुना था –

1 महासुदस्स्न सुतान्त का उपदेश वही किया गया था।

2 सुभद्र की प्रवज्या वही सम्भव थी।

3 अस्थि विभाजन की समस्या हल करने वाला व्यक्ति वहाँ उपस्थित था।[2]

दिग्विजयी चक्रवर्ती सम्राट महा सुदर्शन के राज्यकाल मे कुशावती (कुशीनगर) 84000 नगरियो मे प्रमुख थी।[3] यह समृद्ध, रमणीय, जनाकीर्ण एव धन–धान्य सम्पन्न थी। यह देवताओ की राजधानी अलकनन्दा की भॉति, दिन–रात दस शब्दो मे गुजायमान रहती थी। लेकिन यहॉ यह उल्लेखनीय है कि बुद्ध के काल मे यह नगर राजगृह, वैशाली और श्रावस्ती की तरह प्रथम कोटि का नगर नही था।[4] अत यह कहा जा सकता है कि इस नगर का क्रमश ह्रास हुआ था।

बुद्ध का कुशीनगर से विशेष लगाव था। पूर्व जन्मो मे भी यह नगरी उनकी क्रीडावस्थ्ली रह चुकी थी। एक उल्लेख के अनुसार, वे सात बार चक्रवर्ती

---

[1] वाटर्स, थामस, *आन् युवान् च्वाग्स, ट्रेवेल्स इन इण्डिया,* लन्दन, 1904, भाग 2, पृ0 46।

[2] सुमगल विलासिनी, टीका दीघनिकाय अट्ठकथा, महेश तिवारी, पटना 1974, भाग 2, पृ0 573।

[3] *दीघनिकाय* (हिन्दी अनुवाद), राहुल साकृत्यायन एव जगदीश काश्यप, महाबोधि सभा, सारनाथ, 1935), भाग 2, पृ0 159।

[4] *दीघनिकाय,* भाग 2, पृ0 152।

सम्राट बनकर कुशीनगर मे राज्य कर चुके थे।[1] एक बार जब बुद्ध यहॉ 1250 भिक्षुओ के साथ यहॉ आये तो मल्लो ने उनका स्वागत किया। स्वागत–सत्कार मे सम्मिलित न होने वाले व्यक्तियो के लिए 500 मुद्रा दण्ड का प्रावधान था। इस प्रकार हम देखते है कि कुशीनगर बुद्ध की शिक्षाओ से पूर्णरूपेण प्रभावित हुआ और वहॉ के अनेक सम्भ्रान्त व्यक्ति उनके समर्थक बने। अत ऐसे अनेक उद्धरणो से यह स्पष्ट है कि बौद्ध धर्म का स्वय बुद्ध के समय मे ही बहुविध विकास हो चुका था और अनेक सम्भ्रान्त व्यक्तियो ने इस धर्म की सदस्यता स्वीकार की थी।

ज्ञातव्य है कि कुशीनगर मे ही बुद्ध ने परिनिर्वाण प्राप्त किया था। यह भगवान बुद्ध की कुशीनगर की अन्तिम यात्रा थी। अपनी जीवन का अन्तिम समय जानकर भागवान बुद्ध ने आनन्द से कुशीनारा के मल्लो के पास, जा उस समय सथागार मे उपस्थिति थे, सदेश भिजवाया कि आज रात के अन्तिम पहर तथागत का परिनिर्वाण होगा। पीछे शोक मत करना कि हमारे ग्राम क्षेत्र मे तथागत का परिनिर्वाण हुआ, किन्तु हम अन्तिम काल मे तथागत का दर्शन न कर सके[2] अनेक धार्मिक विषयो पर उपदेश करते हुए वैशाख की पूर्णिमा को रात के अन्तिम पहर मे भगवान बुद्ध का परिनिर्वाण हुआ।[3] वहॉ के मल्लो ने भगवान के अन्तिम सस्कार का समुचित प्रबन्ध किया था। 6 दिनो तक वे लोग उनके निष्प्राण शरीर का नृत्य, गीत, वाद्य एव गन्ध पुष्पादि से सत्कार करते रहे। सातवे दिन वे उसे मुकुट बन्धन चैत्य ले गये। शालवन से चलकर वे नगर मे उत्तर द्वार से प्रविष्ट हुए और पूर्व द्वार से निकलकर चैत्य स्थान पर पहुॅचे। वही पर चक्रवर्ती राजोचित विधान के अनुसार दाह–सस्कार किया गया।[4] मुकुट बन्धन चैत्य को वर्तमान रामाभार तालाब के पश्चिमी तट पर स्थित एक विशाल स्तूप के खण्डहर से समीकृत किया जा सकता है, जो माथा कुवर के कोट से लगभग एक मील की दूरी

---

[1] *दीघनिकाय,* भाग 2, पृ0 198।

[2] *अगुतर निकाय,* भाग 2, पृ0 79।

[3] *दीघनिकाय,* भाग 2, पृ0 117।

[4] *दीघनिकाय,* भाग 2।

पर स्थित है।[1] यह चैत्य 'मुकुट बन्धन' नाम से इसलिए सम्बोधित किया जाता था कि यहाँ मल्ल राजाओ का अभिषेक होता था और उनके शीर्ष पर मुकुट बन्धन किया जाता था।[2] आजकल इसे रामाभार टीला कहा जाता है।दाह–सस्कार के पश्चात् अस्थि–विभाजन के सन्दर्भ मे विवाद उत्पन्न हो गया। इस अवसर पर उपस्थित लोगो मे वैशाली के लिच्छवि, कपिलवस्तु के शाक्य, अल्लकप के बुली, रामग्राम के कोलिय, पावा के मल्ल, मगधराज अजातशत्रु तथा वेठ–द्वीप (विष्णु द्वीप) के ब्राह्मण मुख्य थे।[3] कुशीनगर के मल्लो ने विभाजन का विरोध किया। प्रतिद्वन्द्वी राज्यो की सेनाओ ने उनके नगर को घेर लिया। युद्ध प्राय निश्चित था, किन्तु वेठद्वीप के द्रोण ब्राह्मण के आ जाने से अस्थि अवशेषो का आठ भागो मे विभाजन सम्भव हुआ।[4] द्रोण ने उन्हे समझाया कि "हमारे बुद्ध क्षमावादी थे। यह उचित नही कि उस शाति के पूजारी की अस्थियो के विभाजन मे रक्त–पात हो।[5] विभिन्न राज्यो के प्रतिनिधि प्राप्त अवशेषो को अपनी राजधानियो मे ले गये और वहाँ नवनिर्मित स्तूपो मे उन्हे स्थापित किया गया। इस जिले मे भी कुशीनगर और पावा मे मल्लो द्वारा दो स्तूप बनवाये गये।[6] सॉची के तोरण द्वार पर उत्कीर्ण चित्र इस घटना के ज्वलन्त उदाहरण है।[7] इसके अतिरिक्त तोरण के मध्य भाग मे नीचे की ओर नगर के परिखा तथा प्राकार का अकन मिलता है। प्रकार के भीतर नगर के कुछ विशिष्ट भवन भी दृष्टिगोचर होते है।[8]

---

[1] उपाध्याय, भरत सिह, *बुद्ध कालीन भारतीय भुगोल* (प्रथम सस्करण), पृ0 321।

[2] *दिव्यावदान*, पृष्ठ 201, मे मल्लो के एक मुकुट बन्धन नामक चैत्य का उल्लेख वैशाली के प्रसग मे भी किया गया है।

[3] *ए0एस0आई0ए0आर0*, 1906–07, पृ0 61।

[4] मलल शेकर, जी0पी0, *डिक्शनरी ऑफ पाली प्रापर नेम्स* (पालि टेक्स्ट्स सोसाइटी, 1974, पुर्नमुद्रित), भाग–1, पृ0 654।

[5] दत्त एण्ड वाजपेयी, पूर्वोद्धृत, पृ0 350, 351।

[6] तदैव, पृ0 352, 353।

[7] मार्शल, *गाइड टू सॉची*, पृ0 53, 54।

[8] राय उदयनारायण, *प्राचीन भारत मे नगर तथा नगर जीवन*, इलहाबाद, 1965, पृ0 362।

कुशीनगर के मल्लो का अपना सथागार था, जहॉ पर सार्वजनिक, राजनीतिक तथा धार्मिक विषयो पर विवाद होते थे। आनन्द जब बुद्ध की मृत्यु का समाचार लेकर कुशी नगर गये, उस समय मल्ल अपनी राज्य सभा (सस्थागार) मे थे। तत्पश्चात् उन्होने अपने सथागार मे ही तथागत के अन्तिम सस्कार के प्रारूप पर विचार–विमर्श किया था। दीघनिकाय के महापरिनिब्बान सुतन्त मे कुशीनारा के मल्लो मे, पुरिष नामक एक अधिकारी वर्ग का उल्लेख मिलता है जो रीज डेविड्स के मतानुसार अधीनस्थ कर्मचारियो का एक वर्ग था।[1]

चीनी यात्रियो का कुशीनगर

पॉचवी शताब्दी ई0 मे, जब फाह्यान ने भारत का भ्रमण किया तो कुशीनगर को उपेक्षित एव निर्जन पाया। केवल कुछ स्थानो पर स्तूप और सघाराम बने हुए थे। सातवी शताब्दी मे, जब ह्वेनसाग भारत आया तो उस समय भी यह स्थान निर्जन था। उसने यहॉ मात्र कुछ सघाराम देखे थे। इस सम्बन्ध मे चीनी यात्रियो का विवरण निम्नलिखित है –

फाह्यान

चीनी यात्री फाह्यान 399–414 ई के बीच कुशीनगर आया था। उसने कुशीनगर को पिप्पलिवन के अगार स्तूप के पूर्व मे 12 योजन और वैशाली से 25 योजन की दूरी पर स्थित बतलाया है।[2] उसने सम्पूर्ण जनपद को निर्जन एव उजाड पाया था। फाह्यान ने नगर के उत्तर निरजना नदी के किनारे शालवन मे दो वृक्षो के बीच बुद्ध के परिनिर्वाण प्राप्त करने के स्थान का उल्लेख किया है।[3] शालवन के बिहार मे उस समय भी कुछ भिक्षु निवास करते थे। फाह्यान लिखता है कि परिनिर्वाण स्तूप के अतिरिक्त वहॉ चार अन्य स्तूप थे जो क्रमश निम्नलिखित चार स्थानो पर बने थे–

---

[1] टी0डब्ल्यू0, रीज डेविड्स, *बुद्धिस्ट इण्डिया,* 1979 (पुर्नमुद्रित), इन्डोलाजिकल बुक हाउस, वाराणसी, पृ0 21।

[2] गाइल्स, *ट्रेवेल्स ऑफ फाह्यान,* पृ0 41।

[3] जेम्स लेगे, *द ट्रेवेल्स ऑफ फाह्यान,* 1972, दिल्ली, पृ0 70।

(1) जहाँ सुभ्रद ने अर्हत्व को प्राप्त किया था।

(2) जहाँ वज्रपाणि यक्ष की गदा गिरी थी।

(3) जहाँ मल्लो ने बुद्ध के निष्प्राण शरीर का सप्ताह पर्यन्त पूजन किया था।

(4) जहाँ बुद्ध के अस्थि अवशेषो को विभाजित किया गया था।

फाह्यान के भारत आगमन के समय, यहाँ गुप्तो का साम्राज्य था तथा तत्कालीन शासक चन्द्रगुप्त द्वितीय था। उस समय भारतवर्ष कला और सस्कृति के क्षेत्र मे अपनी पराकाष्ठा पर था। कुमारगुप्त के शासन काल मे हरिबल स्वामी ने कसया मे सुविख्यात परिनिर्वाण मन्दिर के निकटवर्ती स्तूप का जीर्णोद्धार किया।

फाह्यान यहाँ से 12 योजन चलकर उस स्थान पर पहुँचा था, जहाँ बुद्ध ने लिच्छवियो को वापस भेजा था, क्योकि वे लोग उनके साथ परिनिर्वाण स्थल तक जाना चाहते थे। यही एक पत्थर की लाट (स्तभ) थी जिस पर उनके परिनिर्वाण की घटना का अकन था।[1]

ह्वेनसाग का विवरण

सातवी शताब्दी (643 ई0) मे जब ह्वेनसाग कुशीनगर आया तो उस समय इस स्थान की स्थिति अच्छी नही थी। उन्होने लिखा है—अगार स्तूप से उत्तर पूर्व की ओर हम एक विकट जगल मे गये, जिसके मार्ग बडे ही बीहड और भयानक थे। जगली बैल, हाथियो के झुण्ड, शिकारी तथा डाकू लोगो के कारण यात्रियो को अनेक प्रकार के कष्ट होते है। इस जगल को पार कर के हम 'कि उ शि ना कि यी लो' (कुशीनगर) पहुँचे। इस राज्य की राजधानी बिल्कुल ध्वस्त हो गयी है। इसके नगर और गाँव प्राय जनशून्य और उजाड है। प्राचीन ईटो की दीवारे, जिनकी केवल नीव बाकी रह गयी है।[2] यह नगर 10 ली की परिधि मे फैला मात्र खण्डहर सदृश रह गया था। वहाँ की जनसख्या अत्यल्प थी। नगर के उत्तर—पश्चिम मे अशोक द्वारा बनवाया गया एक स्तूप था।

---

[1] जेम्स लेगे, *द ट्रेवेल्स ऑफ फाह्यान*, 1972, दिल्ली, पृ0 82।

[2] वाटर्स, थामस, *आन युवानच्वाग्स ट्रेवेल्स इन इण्डिया*, लन्दन, 1904 जिल्द 2, पृ0 55।

नगर के उत्तर–पश्चिम मे तीन–चार ली की दूरी पर स्थित अजितवती नदी के पश्चिमी किनारे पर ह्वेनसाग ने सालवन का उल्लेख किया है। इस सालवन मे विभिन्न घटनाओ के स्मारक स्वरूप अनेक स्तूप बने हुए थे। इनमे से दो का सम्बन्ध बुद्ध के पूर्व जन्म की कथाओ से था। वहॉ पर ईटो से निर्मित एक बडा चैत्य था जिसमे एक मूर्ति रखी थी। इसमे बुद्ध परिनिर्वाण को प्राप्त तथा उत्तर की ओर सिर किये हुए लेटी अवस्था मे दिखाये गये थे। इस चैत्य के समीप अशोक–निर्मित 200 फिट ऊँचा, एक भग्न स्तूप था। स्तूप के सामने मौर्यकालीन प्रस्तर–स्तम्भ था, जिस पर परिनिर्वाण का वृत्तान्त उत्कीर्ण था।

अन्य स्तूपो मे सुभद्र के मरण–स्थल से सम्बद्ध स्तूप का उल्लेख किया जा सकता है, जो बिहार से पश्चिम की ओर स्थित था। यह ब्राह्मण मतावलम्बी था। सुभद्र ने एक सौ बीस वर्ष की अवस्था मे गौतम बुद्ध से दीक्षा ली थी। इन स्तूपो के अतिरिक्त वज्रपाणि यक्ष के गदापतन, देवताओ द्वारा तथागत के शरीर पूजन एव माया देवी के विलाप आदि घटनाओ से सम्बद्ध स्थानो पर भी स्तूप निर्मित थे।[1]

नगर के उत्तर मे हिरण्यवती (अजितवती) नदी के दूसरे तट से 300 पग दूर, एक स्थल पर बुद्ध के दाहसस्कार का उल्लेख है।[2] इस स्थल पर भी एक स्तूप था जिसकी मिट्टी पवित्र मानी जाती थी। स्थल पर निर्मित एक ऐसे स्तूप का भी ह्वेनसाग ने उल्लेख किया है, जो महाकाव्य द्वारा बुद्ध की पादवदना से सम्बद्ध था एक दूसरे स्तूप को अशोक ने बनवाया था। वह उस स्थान पर था, जहॉ बुद्ध की अस्थियो का बॅटवारा आठ नरेशो के बीच हुआ था। उसके सामने एक स्तम्भ था जिस पर उपर्युक्त घटना का वृत्तान्त उत्कीर्ण था।[3]

---

[1] वाटर्स, थामस, *आन युवानच्वाग्स ट्रेवेल्स इन इण्डिया,* लन्दन, 1904 जिल्द 2, पृ0 39।

[2] सेमुअल बिल, *बुद्धिस्ट रिकार्ड्स आफ वेस्टर्न वर्ल्ड,* भाग 3, 1958, कलकत्ता, पृ0 287।

[3] वाटर्स, थामस *आन युवानच्वाग्स ट्रेवेल्स इन इण्डिया,* लन्दन, 1904, जिल्द 2, पृ0 42।

यद्यपि ह्वेनसाग ने यहॉ के विहारो के भिक्षुओ की सख्या का उल्लेख नही किया है, परन्तु उसके वर्णन से हमे तत्कालीन विहारो के और उनमे सन्निहित तत्वो का पूर्ण परिचय प्राप्त होता है।

इत्सिग

सातवी शताब्दी के अन्त मे इत्सिग नामक एक अन्य चीनी यात्री भी कुशीनगर आया था। उसके समय मे कुशीनगर की स्थिति अच्छी थी। इत्सिग ने लिखा है कि शालवन तथा मुकुट बन्धन (पग्–द–न) प्रसिद्ध चैत्य थे, जहॉ शरद तथा बसन्त ऋतु मे दूर–दूर से श्रद्धालु आया करते थे।[1] उस समय बिहार मे रहने वाले भिक्षुओ की सख्या सौ थी। वहा के भिक्षुओ के पास पर्याप्त साधन थे , अत यात्रियो के स्वागत–सत्कार मे उन्हे कठिनाई नही होती थी। एक बार अकस्मात् वहॉ 500 भिक्षुओ का समूह (जत्था) आ पहुॅचा, जिनका स्थानीय विहार मे भोजन आदि से स्वागत–सत्कार किया गया।

इत्सिग ने, समय की गणना के लिए प्रयुक्त, एक ऐसे विशिष्ट विधान का उल्लेख किया है जिसका इन विहारो मे प्रयोग किया जाता था।[2]

मल्ल अभिधान

'मल्ल' शब्द की व्युत्पति एव उसका अभिप्राय एक जटिल प्रश्न है। क्योकि मल्ल शब्द का प्रयोग वैदिक वाङ्मय मे अनुपलब्ध है। निघण्टु तथा निरूक्त मे यास्क ने इस शब्द का कोई व्युत्पत्तिक निर्वचन नही किया है। मल्ल शब्द का प्रथम उल्लेख रामायण मे लक्ष्मण के पुत्र चन्द्रकेतु के सन्दर्भ मे हुआ है।[3] परन्तु रामायण के भाष्यकारो ने मल्ल शब्द की व्युत्पत्ति नही दी है। महाभारत मे मल्ल शब्द एक स्थानवाचक राष्ट्र के रूप मे वर्णित है।[4] स्थानवाचक सबा के रूप मे मल्ल

---

[1] जे0 तकाकुसू., *ए रेकार्ड ऑफ द बुद्धिस्ट रिलिजन,* 1896, लन्दन, आक्सफोर्ड, पृ0 381 ।

[2] जे0 तकाकुसू., *ए रेकार्ड ऑफ द बुद्धिस्ट रिलिजन,* 1896, लन्दन, आक्सफोर्ड, पृ0 29–30 ।

[3] *रामायण* , उत्तरकाण्ड, सर्ग 102, श्लोक 91।

[4] *महाभारत,* सभापर्व, 30 3 ।

का प्रथम प्रयोग बौद्ध साहित्य अगुतर निकाय मे मिलता है।[1] मज्झिमनिकाय मे मल्लो का उल्लेख एक गण या सघ के रूप मे लिच्छवियो के साथ हुआ है। प्राकृत साहित्य मे इसे 'मल्लई' , 'मोलिय' तथा 'मल्लिक' कहा गया है।[2] पाणिनि ने सर्वप्रथम् मल्ल शब्द के निर्वचन को प्रस्तुत किया है। पाणिनी के धातुपाठ मे मल्लो को बाहुयोधी कहा गया है।[3] अष्टाध्यायी मे मल्ल की मुट्ठी या पकड को सग्राह कहा गया है।[4] जैन ग्रन्थ भगवती सूत्र मे मल्ल का अर्थ 'बल धारण करने वाला कहा गया है। अष्टध्यायी के भाष्यकार पतजलि ने भी 'मल्ल' तथा 'मुष्टिक' के सग्राह का उल्लेख किया है।[5] इन्होने दो मल्लो के आह्वान को कुश्ती के अर्थ मे प्रयोग किया है। अमरकोष मे मल्ल शब्द कुश्ती लडने वालो के लिए प्रयुक्त हुआ है।[6]

कालान्तर मे पाणिनी द्वारा प्रवर्तित अर्थ ही शारीरिक बल धारण करने वाले के अर्थ मे प्रयुक्त हुआ। ऐसा प्रतीत होता है कि मूल शब्द 'बल' था जिसका रूपान्तरण मल्ल शब्द मे हुआ। जैसे, महाबलिपुरम को ही मामल्लपुरम कहा जाता है। मोनियर बिलियम के अनुसार, मल्ल एक जाति वाचक सज्ञा है जो अपनी बलिष्ट शरीर तथा कुश्ती लडने मे निपुणता के कारण मल्ल अभिधान से अपनी पहचान बना ली। वे जिस क्षेत्र मे निवास करते थे वह क्षेत्र मल्लभूमि, मल्लराष्ट्र एव मल्लक्षेत्र आदि नामो से अभिहित किया जाने लगा। ब्रह्माण्ड[7], मार्कण्डेय,[8] वायु, वामन एव पद्मपुराण[9] मे भी मल्ल शब्द आया है।

---

[1] *अगुतरनिकाय,* भाग 1, पृ0 197।

[2] *कल्पसूत्र,* 118, पृ0 266।

[3] *अष्टाध्यायी,* पाणिनी, धातुपाठ समीक्षा, पृ0 315 (मल्लते=धरति बलय इति)

[4] *अष्टाध्यायी,* 3 3 36 (अहो मल्लस्य सग्राह)।

[5] पतजलि, *महाभाष्य,* 9 3 31।

[6] अमर सिह, *अमरकोष,* 3 5 21।

[7] *ब्रह्माण्ड पुराण* (5), प्रथम, 2 16 55।

[8] *मार्कण्डेय पुराण,* 16 44।

[9] *पद्मपुराण,* स्वर्गखण्ड, 61 39।

मल्ल जन

मल्ल जन मूलत स्वदेशी क्षत्रिय थे। महापरिनिब्बानसुत्त तथा दिव्यावदान के अनुसार इक्ष्वाकु से नौ क्षत्रिय कुल उत्पन्न हुए – मल्ल, जनक विदेह, कोलिय, मौर्य, लिच्छवि, ज्ञातृक, वज्जि और शाक्य।[1] यहाँ मल्लो को स्पष्टत इक्ष्वाकुवशीय (सूर्यवशी) कहा गया है। महापरिनिब्बान सुतन्त मे मल्लो को प्रसिद्ध आर्य गोत्रो मे से एक वशिष्ठ गोत्रीय कहा गया है।[2] रामायण मे वशिष्ठ को इक्ष्वाकु का पुरोहित कहा गया है। कौटिल्य ने उत्तरी भारत के क्षत्रियो के साथ मल्लो (मल्लक) की गणना की है।[3] इससे प्रमाणित होता है कि मल्ल अन्य क्षत्रियो के समान प्रतिष्ठित थे। मल्लो के समकालीन गणप्रमुखो ने क्षत्रिय होने के कारण, बुद्ध के धातु मे मल्लो के समान अपना अश माँगा था, क्योकि बुद्ध भी उसी क्षत्रिय वश के थे। मनु ने लिच्छवि और मल्ल गणराज्य के क्षत्रियो को व्रात्य क्षत्रिय कहा है।[4] इस प्रकार स्पष्ट है कि मल्ल अपने मूलरूप मे स्वदेशी क्षत्रिय थे।

मल्लो का समकालीन शक्तियो के साथ सम्बध एव पतन

गणराज्यो के राजनैतिक जीवन के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि इनमे साम्राज्यवादी प्रवृति न होने के कारण प्राय शान्ति रही। अपने गणजन की सुख–समृद्धि एव शान्ति के लिए ही गणराज्यो का सम्पूर्ण प्रयास रहा तथापि वे अपने समकालीन राजतत्रीय राजाओ के साम्राज्य विस्तारवादी प्रवृत्तियो से प्रभावित होकर अन्य राज्यो से राजनैतिक सम्बध भी स्थापित किये।

मल्ल गणराज्य के स्थापना काल को 750–650 ईसा पूर्व के मध्य माना जाता है। महाजनपद के रूप मे मल्ल जनगण एक शक्तिशाली राजनीतिक सत्ता के रूप मे प्रसिद्ध था। बुद्ध और महावीर के काल मे वज्जि की अपेक्षा मल्लो

---

[1] जैसवाल, के0पी0, *हिन्दू पालिटीबगलौर(पचम सस्करण),* 1978, पृ0 43।

[2] *महापरिनिब्बानसुतन्त,* डायलाग आफ द बुद्धा, भाग 2, पृ0 162।

[3] *अर्थशास्त्र स0,* शामशास्त्री, मैसूर, 1919, पृ0 407।

[4] झल्लोमल्लश्च राजन्याद् व्रात्यान्तिच्छिविरेव च।
नटश्च करणश्चैव खसौ द्रविड एव च।। *मनुस्मृति,* 10–20।

की राजनैतिक शक्ति अधिक महत्वपूर्ण थी।[1] वज्जियो के अष्टकुल के समान ही जेनग्रन्थो के अनुसार नवमल्लो का एक सघ रहा होगा। इन नवमल्लो मे से पावा और कुसीनारा के मल्लो का राजनैतिक अस्तित्व ही ज्ञात और प्रख्यात है।

मल्लो तथा लिच्छवियो का आपसी सम्बध कभी शत्रुतापूर्ण और कभी मैत्रीपूर्ण था। भद्दसाल जातक की एक कथा मे कोसल राज्य के मल्ल सेनापति बन्धुल तथा 500 लिच्छवियो के बीच सघर्ष की चर्चा की गई है[2] जिसमे बन्धुल मल्ल की हत्या हो जाती है। उस समय कोसल का राजा प्रसेनजीत था। इसके विपरीत जैन ग्रन्थ कल्पसूत्र मे नौ मल्ल शासको की चर्चा की गई है जिन्होने लिच्छवियो तथा काशी, कोसल के अधिपतियो से मिलकर कुणिक अजातशत्रु के विरूद्ध मोर्चाबन्दी की थी, क्योकि मैसीडोनिया के राजा फिलिप की तरह कुणिक अजातशत्रु भी पडोसी गणतत्रो को समाप्त कर उनको अपने राज्य मे मिलाने का प्रयास कर रहा था।[3]

मल्ल राष्ट्र का विस्तार

मल्ल राष्ट्र पश्चिम मे कोलिय गणतत्र से घिरा था तथा उत्तर पश्चिम मे शाक्य गणतत्र की सीमा इसको स्पर्श करती थी। दक्षिण मे इसका विस्तार मोरिय गणतत्र तक था तथा पूर्व मे लिच्छवि गणराजय तक विस्तृत था। लिच्छवि तथा मल्ल गणराज्य को सदानीरा नदी विभाजित करती थी।[4] मल्ल राष्ट मे कुशीनगर जनपद का सम्पूर्ण भाग तथा चम्पारन और सारन के पश्चिमी भाग सम्मिलित थे। दक्षिण मे सरयू के उत्तर का कुछ क्षेत्र भी इसमे शामिल था।[1] साम्राज्यिक विस्तार और राजनैतिक महत्व की दृष्टि से यह कोसल का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्वायत्त राज्य बन गया और बुद्ध की मृत्यु तक अपनी स्वतत्रता बरकरार रखी।

---

[1] जैसवाल, के0पी0, *हिन्दू पालिटी,* पृ0 43।

[2] जातक सख्या 465।

[3] राय चौधरी,एच0सी0, *प्राचीन भारत का राजनितिक इतिहास,* इलाहाबाद, 1971 पृ0 6।

[4] वरूण, डी0पी0, *गजेटियर्स ऑफ इण्डिया, उ0प्र0, डिस्ट्रीक्ट देवरिया,* इलाहाबाद, 1988 पृष्ठ 19।

छठी शताब्दी ईसापूर्व के उतरार्द्ध तक आते–आते उत्तर भारत मे चार शक्तिशाली राजतत्रो का प्रभुत्व दिखाई देता है। गौतम बुद्ध के समय इन्ही चारो का बोलबाला था। ये राज्य थे – 1 मगध, 2 कोसल 3 वत्स और 4 अवन्ति। इन राजतत्रो के साथ–साथ अनेक गणराज्यो का भी अस्तित्व था, जिनमे कुशीनगर जनपद के मल्ल भी थे। किन्तु वे राजतत्रो के विरूद्ध अपनी स्वतत्रता की रक्षा नही कर सके।

पॉचवी शताब्दी ईसा पूर्व के प्रारम्भ मे केन्द्रीकरण की प्रक्रिया पुन प्रारभ हुई और छोटे–छोटे राज्यो के स्थान पर बडे–बडे राज्य स्थापित होने लगे। जो साम्राज्यवादी नीति के पोषक थे। साम्राज्यवाद की दौड मे अन्तत मगध सफल हुआ और अन्य राज्य भी इसी मे मिला लिये गये। इस समय मगध मे हर्यक वशीय शासक अजातशत्रु का शासन था। इसके अधीन मगध की बढती हुई शक्ति ने जनपद के मल्लो के राजनीतिक महत्व को घटा दिया। वी एन पाठक के अनुसार मल्लो की स्वतत्रता केवल नाम के लिए बची थी और वे उस समय के दो शक्तिशाली राजतत्रो कोसल और मगध साम्राज्य के बीच मध्यस्थ का कार्य करते थे।[2] भण्डारकर ने लिंखा है कि स्वातत्र्यप्रिय मल्ल गणराज्य अपने पडोसी महत्वाकाक्षी, साम्राज्यवादी मगध सम्राट अजातशत्रु का अन्तत आहार बनकर सदा के लिए मगध साम्राज्य का अग बन गया।[3] इसके पश्चात मल्ल एक गणराज्य के रूप मे ज्ञात नही होते। इस प्रकार मल्ल गणराज्य अब भी मगध साम्राज्य के बाहर था।

लेकिन, कुशीनगर जनपद मल्लो के अधीन अधिक दिनो तक स्वतत्र नही रह सका। मगध मे नन्दवश का उदय जनपद के मल्लो के लिए अधिक घातक सिद्ध हुआ। ईसा पूर्व चौथी शताब्दी के मध्य नन्द शासक महापद्मनन्द द्वारा इस

---

[1] पाण्डेय राजबली, पुर्वोद्धृत, पृ0 79।
[2] पाठक, वी0एन0, पुर्वोद्धृत, पृ0 221–287।
[3] स्मिथ, बी0ए0, पुर्वोद्धृत, पृ0 37।

जनपद से घिरे हुए क्षेत्र को मगध राज्य मे मिला लिया गया।[1] मल्लो ने मगध की अधीनता स्वीकार कर अपना अस्तित्व बचाया, क्योकि मौर्य साम्राज्य के उदय के समय यह राज्य जीवित दिखाई पडता है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र मे इस प्रकार के गणतत्र को सघ के रूप मे वर्णित किया है।[2] कलयुग राज वृत्तान्त मे इक्ष्वाकुवशी (सूर्यवशी) राज्यो की गणना महापद्मनन्द द्वारा जीते हुए प्रदेशो मे की गई है। अन्तिम इक्ष्वाकु राजा सुमित्र, महापद्म द्वारा पराजित हुआ। कथासरितसागर मे, अयोध्या मे नन्द के कैम्प का उल्लेख मिलता है।[3] इक्ष्वाकुवशी राज्यो मे निश्चित ही कोसल का इक्ष्वाकुवश तथा कुशीनगर जनपद के मल्ल सम्मिलित थे।[4] इस प्रकार कोसल मगध के अधीन हो गया और कुशीनगर जनपद की राजनैतिक स्वतत्रता महापद्मनन्द के द्वारा नष्ट हुई।

प्रथम मौर्य शासक चन्द्रगुप्त मौर्य चाणक्य की मदद से अन्तिम नन्द शासक घननद को पराजित कर 321 ई0पू0 मे मगध की गद्दी पर बैठा। चाणक्य कृत अर्थशास्त्र[5] के अवलोकन से विदित होता है कि चन्द्रगुप्त मौर्य ने सभी एकतात्रिक राज्यो को समूल नष्ट किया क्योकि अर्थशास्त्र मे एक भी एकतात्रिक राज्य का उल्लेख नही मिलता है, परन्तु उत्तरभारत के गणराज्यो की सत्ता नष्ट नही की, अपितु उनको अपने अधीन करके छोड दिया। इनमे कुशीनगर जनपद का मल्लराष्ट्र मल्लक भी एक था।[6] चाणक्य ने अर्थशास्त्र मे चन्द्रगुप्त मौर्य को मल्लो से दोस्ती करने का निर्देश दिया है, क्योकि उसकी दृष्टि मे 'सघ की मदद से अर्जित सम्पत्ति, सेना अथवा दोस्त की मदद से अर्जित सम्पति से अच्छा होता है।'[7] ऐसा

---

[1] मजूमदार एण्ड पुसालकर, पुर्वोद्धृत, वाल्यूम II, पृ0 31।

[2] पाठक, वी0एन0, पुर्वोद्धृत, पृ0 287–288।

[3] *कथासरितसागर,* I , पृ0 21।

[4] पाण्डेय राजबली, पुर्वोद्धृत, पृष्ठ 117।

[5] *अर्थशास्त्र,* 11/1।

[6] *महावश,* 5 14 171।

[7] *अर्थशास्त्र,* 11 1 6।

लगता है कि मात्र इस जनपद के मल्ल गणतत्र ही स्वतत्रता और शक्ति मे क्षीण होने क साथ—साथ अपनी पहचान बचाये हुए था। चन्द्रगुप्त मौर्य के अधीन कुशीनगर का क्षेत्र मगध साम्राज्य मे सम्मिलित कर लिया गया।

चन्द्रगुप्त मौर्य का पुत्र एव उत्तराधिकारी बिन्दुसार के समय मे कुशीनगर जनपद या मल्ल राष्ट्र का कोई उल्लेख नही मिलता है। बिन्दुसार का पुत्र एव उत्तराधिकारी अशोक (273–236 ई पू) बौद्ध धर्म का प्रथम महान राजकीय सरक्षक है[1] जो भिक्षु उपगुप्त के साथ कुशीनगर की तीर्थयात्रा पर आया था। उस समय यह जनपद अशोक के साम्राज्य का भाग था। दिव्यावदान के अनुसार जब अशोक ने यह सुना कि इसी स्थान पर भगवान बुद्ध का परिनिर्वाण हुआ था तो वह मूर्क्षित होकर गिर गया था। उसने एक लाख मुद्रा देकर यहॉ चैत्य बनवाया था तथा कहा था "आज मेरा मनोरथ पूर्ण हो गया।"[2] ह्वेनसाग के विवरण के अनुसार इस स्थान पर अशोक द्वारा तीन स्तूप और दो स्तभ बनवाये गये।[3] एक स्तूप और उसके सामने प्रस्तर स्तभ परिनिर्वाण मदिर के पास बनवाया। प्रस्तर स्तम्भ पर बुद्ध के निर्वाण की घटना अकित थी।[4] दूसरा स्तूप बुद्ध के पवित्र अवशेष के विभाजन के स्थान को चिन्हित करता है तथा इसके सामने के प्रस्तर स्तम्भ पर अवशेषो के बटवारे की घटना लिपिबद्ध है।[5] लेकिन अभी तक यहा से कोई स्तम्भ—लेख नही मिला है। ह्वेनसाग ने कुशीनगर मे अशोक का बनवाया हुआ दो सौ फीट ऊॅचा स्तूप देखा था।[6] अशोक को अपने विशाल साम्राज्य के विभिन्न स्थानो पर बुद्ध के अवशेषो पर 84,000 स्तूप बनवाने का श्रेय दिया जाता है। भण्डारकर के अनुसार

---

[1] भण्डारकर, डी0आर0, *अशोक,* पृ0 236।

[2] दिव्यावदान, 1886, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ0 394।

[3] दत्त एण्ड वाजपेयी, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 253।

[4] वरूण, डी0पी0, *डिस्ट्रीक्ट गजेटियर देवरिया,* 1988, पृ0 22।

[5] पाटिल, डी0आर0, *कुशीनगर,* नई दिल्ली (प्र0स0), 1957पृ0 11–12।

[6] मित्राा, देबाला, *बुद्धिस्ट मानुमेन्ट्स,* कलकता, 1971, पृ0 69।

अशोक अपने कलिग विजय के एक वर्ष बाद बौद्ध हो गया।[1] अशोक के नाम का उल्लेख मास्की और गुर्जरा के लघु शिलालेखो मे हुआ है।[2] इस स्थान से उत्खनित बडे आकार की ईटे मौर्यकालीन विभिन्न भवनो के अवशेषो को सूचित करती है। डा वोगेल ने लिखा है "हमारा पूर्ण विश्वास है कि कुशीनगर मे कोई भी ऐसी इमारत नही है, जो मौर्य काल के बाद की हो।"[3]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अशोक के समय मे कुशीनगर की पर्याप्त समृद्धि हुई थी। यद्यपि मल्ल राष्ट्र मौर्य साम्राज्य मे सम्मिलित हो गया था, किन्तु उसकी आन्तरिक स्वतत्रता अभी बची हुई थी। उसकी यह परिस्थिति मौर्यो के बाद शुगो के आगमन तक बनी हुई थी। यह बात शुगकालीन मनुस्मृति में, मल्लो के व्रात्य क्षत्रिय के रूप मे उल्लेख से सिद्ध होती है। कुशीनगर मे मौर्यो के सीधे और पूर्ण अधिकार की सूचक कोई वस्तु अभी तक नही मिली है।

द्वितीय शाताब्दी ई पू मे शुगो ने मौर्यो को पद्च्युत कर स्वय मगध की गद्दी सभाल ली और कुशीनगर जनपद उनके अधीन हो गया। पुष्यमित्र शुग (184—148 ई0पू0) जो अतिम मौर्य शासक वृहद्रथ का सेनापति था, वृहद्रथ की हत्या कर पाटलिपुत्र के सिहासन पर बैठा।[4] बौद्ध ग्रन्थो मे उसे वैदिक धर्म को मानने वाला और बौद्ध धर्म का विरोधी बताया गया है।[5] उसके समय मे ही जनपद के मल्लगण का अन्त हुआ क्योकि शुगो के समकालीन पतजलि के महाभाष्य मे मल्लगण की कोई चर्चा नही मिलती है जबकि इस समय के अन्य गणराज्यो तथा राज्यो का उल्लेख हुआ है। राहुल सकृत्यायन ने कुशीनगर के मल्लो के प्रतिनिधि आजकल के सैथवार जाति को बतलाया है।[6] मल्लो के आधुनिक अवशेष बिहार,

---

[1] रैप्सन, ई0जे0, *कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया*, वाल्यूम II, नई दिल्ली, 1962, पृ0 24, 30।

[2] सरकार डी0सी0, *इन्स्किप्शन ऑफ अशोक*, पृ0 36।

[3] आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया एनुअल रिपोर्ट, 1905, पृष्ठ 38।

[4] *हर्षचरित* (बम्बई सस्करण), पृ0 199 ।

[5] दिव्यावदान, 1886, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ0 434 ।

[6] साकृत्यायन राहुल, *बुद्धचर्या*, सारनाथ, वाराणसी, 1952, पृ0 167 ।

नेपाल गोरखपुर देवरिया (विभाजन के पूर्व) तथा आजमगढ मे बिखरे हुए समुदायो के रूप मे विद्यमान है।

शुगो के बाद कण्ववश मगध मे स्थापित हुआ , किन्तु उनके साम्राज्य विस्तार के बारे मे कोई निश्चित जानकारी उपलब्ध नही है। कण्वो के सम्बध मे कुशीनगर से कोई भी ऐसी वस्तु नही मिली है, जिससे उनके राज्यकाल मे कुशीनगर की अवस्था पर प्रकाश पडे। केवल इतना ही कहा जा सकता है कि उनके राज्यकाल मे कुशीनगर जनपद मगध साम्राज्य के अधीन रहा।

कुषाणो के आगमन तक जनपद का इतिहास अस्पष्ट है। इस कालावधि मे न तो साहित्यिक और नही पुरातात्विक साक्ष्यो से इस क्षेत्र के राजनीतिक इतिहास पर प्रकाश पडता है। कनिष्क (ई0 सन् 78–100) कुषाणवश का सर्वाधिक योग्य शासक था। उसके राज्य की सीमा पेशावर से लेकर पाटलिपुत्र तक विस्तृत थी। इस क्षेत्र के विभिन्न स्थानो से बडी सख्या मे कुषाणो के सिक्के प्राप्त हुए है। ये सिक्के विमकडफिसस, कनिष्क और हुविष्क के है जो, यह सूचित करते है कि पहली और दूसरी शताब्दी ईस्वी के दौरान यह क्षेत्र कुषाणो के शासन के अधीन था।[1] कुशीनगर से कनिष्क के समय का एक अपूर्ण शिलालेख प्राप्त हुआ है।[2] उत्खनन के समय कुशीनगर से प्राप्त नक्काशीदार ईंट तथा बुद्ध की मण्मूर्तियॉ कुषाण काल से सम्बधित है।[3] स्वय मेरे द्वारा जिले के पुरातात्विक सर्वेक्षण के दौरान जो पुरास्थल प्रकाश मे आये तथा वहॉ से जो सामग्रियॉ प्राप्त हुई उनमे से अधिकाश कुषाण काल से सम्बधित है। कुशीनगर से प्राप्त एक लम्बी मूर्ति जो स्थानीय लोगो मे माथा कुवर के नाम से जानी जाती है, के निकटवर्ती एक बिहार की खुदाई मे एक सिक्का मिला है जिसे मुद्राशात्रियो द्वारा कुषाण काल से सम्बन्धित बताया जाता है। उनका अनुमान है कि कुषाण सिक्के क्षत्रपो के द्वारा पूर्वी प्रान्तो मे पहुँचे थे। इस अनुमान की पुष्टि गाजीपुर जिले के भित्तरी नामक स्थान से

---

[1] श्रीवास्तव, ए0के0, *फाइण्ड स्पॉट्स ऑफ कुषाण क्वायस इन यू0पी0,* लखनऊ, 1972 पृ0 39।

[2] *आर्कियोलॉजिकल सर्वे आफ इण्डिया, एनुअल रिपोर्ट,* 1906–07, पृ0 19।

[3] *ए0एस0आई0ए0आर0,* 1904–05, पृ0 33–35।

प्राप्त कुषाण सिक्के करते है।[1] महापरिनिर्वाण विहार के एक कक्ष से क्षत्रप शासको का एक सिक्का मिला है, जिसे हीरानन्द शास्त्री दामसेन का मानते है।[2]

कनिष्क ने अशोक की भॉति बौद्ध धर्म की उन्नति के लिए बहुत उद्योग किया। उसके समय मे ही महायान बौद्ध धर्म का उदय हुआ। कुशीनगर से प्राप्त मुर्तियॉ जनपद पर इसके प्रभाव को सूचित करती है। कुशीनगर मे माथा कुवर की मूर्ति सभवत इसी काल की है।[3] मूर्ति, अलकृत एकाश्मक पत्थर की है, जो गया क्षेत्र के नीले पत्थरो मे से एक है।[4] मूर्ति मे बुद्ध को भूमि स्पर्शमुद्रा मे बोधिवृक्ष के नीचे बैठा दिखाया गया है, जो प्रबोधन के समय के पूर्व इनके जीवन के श्रेष्ठ क्षण की ओर सकेत करता है।

इसी स्थान से प्राप्त एक काले पत्थर के ऊपर 'ॐ नमो बुद्धाय' लेख अकित है। बुद्ध के साथ ॐ का प्रयोग भी महायान के प्रभाव को सूचित करता है।

कुषाण अधिराज्य के पतन के बाद तथा गुप्त साम्राज्य के पूर्व का इस जनपद का इतिहास अस्पष्ट है। मुरूण्ड तथा नागवशी भारशिवो को इस क्षेत्र पर शासन करने की बात कही जाती है, परन्तु पर्याप्त स्रोतो के अभाव मे उनके साम्राज्य के तिथिक्रम एव ऐतिहासिकता का निर्धारण एक कठिन कार्य है। इलाहाबाद स्तम्भलेख की 23वी पक्ति मे शक–मुरूण्ड का साथ–साथ उल्लेख हुआ है।[5] पुराणो मे शको एव मुरूण्डो का अलग–अलग विर्णन मिलता है तथा मुरूण्डो को विदेशी जाति का बताया गया है।[6] टालमी के विवरण के अनुसार मुरूण्ड राजाओ का साम्राज्य विस्तार पश्चिमी उत्तर प्रदेश से बगाल तक फैला हुआ था,

---

[1] *एपिग्राफिका इण्डिका,* भाग 8, पृ0 82।

[2] *ए0एस0आई0ए0आर0,* 1910–11, पृ0 71।

[3] पाण्डेय राजबली, पुर्वोद्धृत, पृ0 164।

[4] पाटिल डी0आर0, *कुशीनगर,* नई दिल्ली, 1957 पृ0 29।

[5] *कारपस इन्सक्रिप्शनम इण्डिकारम,* III, पृ0 1।

[6] पार्जिटर एफ0ई0, पूर्वोद्धृत, पृ0 72।

जिसकी राजधानी पाटलिपुत्र थी।[1] बी.सी. सेन ने गोरखपुर से बगाल तक का क्षेत्र मुरूण्डो के अधीन माना है।[2] ऐसा प्रतीत होता है कि प्रारम्भ मे मुरूण्ड, कुषाणो के सामन्त थे जिन्होने कुषाणो के पतनोपरान्त एक स्वतत्र राज्य स्थापित कर लिया।

के.पी. जायसवाल के अनुसार, द्वितीय–तृतीय शताब्दी ईस्वी मे नाग–भारशिवो ने कुषाण साम्राज्य पर प्रहार कर उसे छिन्न–भिन्न कर दिया तथा मथुरा और पाटलिपुत्र के बीच सारे उत्तर भारत पर उनका प्रभाव स्थापित हो गया।[3] एक अभिलेख मे कहा गया है कि कुषाण साम्राज्य को नष्ट कर अपने पराक्रम से भारशिवो ने गगा के प्रदेश पर अधिकार कर लिया।[4] कुशीनगर जनपद तथा इसके समीपवर्ती जिलो मे आज भी भर पाये जाते है। राजबली पाण्डेय के अनुसार, जनश्रुति ने भारशिवो और भरो मे भ्रम पैदा कर लोगो मे यह धारणा उत्पन्न कर दी है कि इन क्षेत्रो मे भरो का राज्य था।

कुषाणो के अध पतन के कुछ वर्षों बाद, उत्तर भारत मे गुप्त साम्राज्य का अभ्युद्य हुआ और यह जनपद उनके आधिपत्य मे आ गया। गुप्त वश के सस्थापक श्रीगुप्त तथा उनके उत्तराधिकारी घटोत्कच तथा चन्द्रगुप्त प्रथम के समय (319–350 ई0) की, जनपद की राजनीतिक घटनाओ का कोई उल्लेख नही मिलता। चन्द्रगुप्त प्रथम का पुत्र तथा उत्तराधिकारी समुद्रगुप्त सम्पूर्ण उत्तर भारत (आर्यावर्त) पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर सीधा शासन करता था। उसके दिग्विजयो का वर्णन प्रयाग–प्रशस्ति मे मिलता है।[5] राजबली पाण्डेय के अनुसार गुप्तो की मूल राजधानी साकेत थी और कुशीनगर जनपद इस समय कोसल राज्य मे सम्मिलित

---

[1] मैकिडल, टालमी, पृ0 212–214।

[2] सेन, बी0सी0, *हिस्टारिकल आस्पेक्टस ऑफ बगाल इन्स्क्रिप्शन्स,* पृ0 198।

[3] जैसवाल के0पी0, *हिस्ट्री ऑफ इण्डिया,* पृ0 1–61।

[4] फ्लीट,जे0एफ0 इन्स्क्रिप्सन ऑफ द अर्ली गुप्ता किग्स एण्ड देयर सक्सेसर,कार्पस इस्क्रिप्सन इण्डिकारम, III, कलकता, 1888, पृष्ठ 245।

[5] फ्लीट, *गुप्त इन्स्क्रिप्शन्स,* III, सख्या 1, पृ0 1–17।

हो गया था। समुद्रगुप्त के समय से गुप्तो की राजधानी पाटलिपुत्र हो गयी और यह जनपद मगध साम्राज्य मे चला गया।

रामगुप्त की ऐतिहासिकता पर कतिपय विद्वानो ने प्रश्न चिन्ह लगाया है। चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य के शासनकाल के दौरान श्रावस्ती भुक्ति मगध साम्राज्य का प्रान्त था और कुशीनगर जनपद इसी मे पडता था। चन्द्रगुप्त द्वितीय के समय मे ही चीनी यात्री फाहियान कुशीनगर पहुँचा था। उसने अपने यात्रा विवरण मे कुशीनगर का विस्तृत उल्लेख किया है, जिसका विवेचन पूर्व मे किया जा चुका है।

कुशीनगर के कला और वास्तु के क्षेत्र मे गुप्तो का महत्वपूर्ण योगदान था। चन्द्रगुप्त द्वितीय से लेकर कुमारगुप्त प्रथम तक यहाँ बहुत से विहार, चैत्य एव मन्दिर बनवाये गये तथा जीर्ण विहारो की मरम्मत कराई गई। कुशीनगर के उत्खनन मे गुप्तकाल से सम्बन्धित अनेक सिक्के, अभिलेख तथा मुर्तियाँ प्राप्त हुई है। जनपद के गुप्तकालीन स्थलो मे फाजिलनगर, सठियॉव तथा तुर्कपट्टी सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। कुशीनगर से सटे देवरिया जनपद का रूद्रपुर तथा कहॉव गुप्तकालीन प्रमुख स्थल थे। रूद्रपुर से चतुर्भुजी विष्णु की एक बडी प्रतिमा, एक प्राचीन मदिर दुग्धेश्वर नाथ के ध्वशावशेषो से मिली है। यहाँ से चन्द्रगुप्त द्वितीय (375–415 ई0) का एक सोने का सिक्का तथा कुमार गुप्त (415–455 ई) का छ चॉदी का सिक्का प्राप्त हुआ है।[1]

महापरिनिर्वाण मन्दिर के पीछे स्थित स्तूप मे हीरानन्द शास्त्री के नेतृतव मे 1911–12 के दौरान खुदाई मे एक तॉबे का घडा मिला था, जो अभिलिखित ताम्रपत्र से ढका हुआ था। ताम्रपत्र पर हरिबल स्वामी का नाम अकित है। घडे मे कुमारगुप्त का एक चॉदी का सिक्का प्राप्त हुआ था। इससे निष्कर्ष निकलता है कि स्तूप की मरम्मत या जीर्णोद्धार कुमारगुप्त के शासनकाल के दौरान हरिबल नामक व्यक्ति द्वारा कराया गया था। बुद्ध की परिनिर्वाण प्रतिमा का दान भी

[1] *आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, एनुअल रिपोर्ट,* 1906–7, पृ0 20 , 1910–11, पृ0 63।

हरिबल द्वारा ही किया गया था और सभवत महापरिनिर्वाण चैत्य के अन्दर इसी समय स्थापित की गई थी।[1] परिनिर्वाण मूर्ति पर निम्न लेख उत्कीर्ण है –

देयधमोऽय महाविहारे स्वामिनो हरिबलस्य।

प्रतिमा चेय घटिता दिने मासु माथुरेण।।

कुमार गुप्त के पुत्र और उत्तराधिकारी स्कन्दगुप्त (455–467 ई) के शासन के दौरान गुप्त काल की शक्ति और समृद्धि हूण आक्रमणकारियो द्वारा भग कर दी गई। कुशीनगर जनपद से सटे देवरिया जनपद के कहाव गॉव, जो सलेमपुर से 7 5 किमी दक्षिण–पश्चिम मे स्थित है, से स्कन्दगुप्त के शासन काल का लेख मिला है जो 12 पक्तियो मे प्रस्तर स्तभ पर अकित है।[2] इससे प्रकट होता है कि देवरिया जनपद जिसमे पहले कुशीनगर भी शामिल था, 5वी शताब्दी के मध्य गुप्त साम्राजय के अन्तर्गत था।

मन्दसौर (म प्र) से प्राप्त स्तभलेखो मे, हमे दशपुर (मन्दसौर) के राजा यशोधर्मा के विषय मे जानकारी मिलती है, जिसका ह्रासोन्मुख गुप्त साम्राज्य के दौरान सम्पूर्ण उत्तर भारत पर थोडे समय के लिए अधिकार हो गया था।[3] उसके साम्राज्य की वास्तविक सीमा परिभाषित नही की जा सकती है, लेकिन ऐसा लगता है कि यह जनपद उसके साम्राज्य मे शामिल था। यशोधर्मा एक स्थायी साम्राज्य की स्थापना न कर सका और भारत वर्ष के राजनैतिक आकाश से जल्दी ही अर्न्तध्यान हो गया।

गुप्त साम्राज्य के पतन के पश्चात् उत्तर भारत कई प्रान्तीय राज्यो मे बट गया। उनमे मौखरि और उत्तर गुप्त (Later Gupta) सर्वाधिक महत्वपूर्ण थे। मगध मे उत्तर गुप्तो का शासन था जो अपने को गुप्तो का वशज मानते थे। कुशीनगर जनपद और वर्तमान सयुक्त प्रान्त का अधिकाश भाग, कन्नौज के मौखरियो के अधीन हो गया। नालदा से मौखरि मुहरे तथा जौनपुर की जामा मस्जिद मे मौखरि

---

[1] दत्त एण्ड वाजपेयी, पुर्वोद्धृत, पृ0 361।

[2] फ्लिट, *गुप्त इन्स्क्रिप्शन,* सख्या 15।

[3] त्रिपाठी, आर0एस0, पुर्वोद्धृत, पृ0 282।

लेख उत्कीर्ण मिले है।[1] डा0 रामाशकर त्रिपाठी के अनुसार मौखरि राज पूर्व मे नालन्दा तक फैला हुआ था।

मौखरि, प्रारम्भ मे गुप्त साम्राज्य के सामत थे लेकिन बाद मे उत्तर प्रदेश मे एक शक्ति के रूप मे उभरे और लगभग छठी शताब्दी ई0 के मध्य मे एक स्वतत्र राज्य स्थापित कर लिये।[2] अब कन्नौज राजनितिक शक्ति का नया केन्द्र बन गया। यह मौखरियो की राजधानी थी। मौखरि शासक ग्रहवर्मा की शादी थानेश्वर के प्रभाकर वर्धन की पुत्री राजश्री से हुयी। बगाल के गौड राजा शशाक तथा मालवा के राजा देवगुप्त ने आक्रमण कर ग्रहवर्मा को मार डाला। ग्रहवर्मा को राजश्री से कोई सन्तान नही थी। अत कन्नौज की मत्रीपरिषद ने राजश्री के भाई (थानेश्वर के राजा) हर्षवर्द्धन को ही कन्नौज का राजा चुना।[3] हर्ष जो पहले से ही थानेश्वर का राजा था, अपनी राजधानी कन्नौज मे स्थानान्तरित कर ली। इससे कन्नौज की शक्ति बहुत बढ गयी। कुशीनगर जनपद हर्ष के अधीन कन्नौज का भाग था। मधुबन (मऊ, उ0प्र0) दानपत्र सकेत करता है कि श्रावस्ती हर्ष के साम्राज्य का भुक्ति (प्रान्त) था। जिसमे यह जनपद भी शामिल था। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस समय से लेकर 12वी शताब्दी के अन्त तक कुशीनगर जनपद कन्नौज के ही आधिपत्य मे रहा। केवल शासक बदलते रहे।

हर्षवर्धन के शासनकाल मे चीनी यात्री ह्वेनसाग भारत वर्ष की यात्रा पर आया था। उसने अपने यात्रा वृत्तान्त मे कुशीनगर का एक खडहर के रूप मे उल्लेख किया है। इसका विस्तृत विवेचन पूर्व मे किया जा चुका है।

हर्षवर्धन के पश्चात् लगभग 7वी शताब्दी के मध्य भाग से लेकर 10 वी शताब्दी के अन्त तक कुशीनगर की राजनैतिक अवस्था मे क्रमश ह्रास हुआ।[4] इसके बाद 8वी शताब्दी मे, हम कन्नौज के राजसिहासन पर यशोवर्मन नामक एक

---

[1] *एपिग्राफिका इण्डिका,* जिल्द 21, पृ0 73–74।

[2] मजूमदार एण्ड पुसालकर, पुर्वोद्धृत, पृष्ठ 40।

[3] वाटर्स, थामस *ऑन युवान च्वाडग्स इन इण्डिया,* वाल्यूम I, पृ0 343।

[4] धर्मरक्षित, *कुशीनगर का इतिहास,* पृ0 112

महत्वाकाक्षी एव शक्तिशाली शासक को आसीन पाते है।[1] शताब्दी के प्रारम्भ मे उत्तरभारत मे कन्नौज एक बार फिर प्रबल शक्ति के रूप मे उभरा। गौडवहो के अनुसार यशोवर्मन चन्द्रवशी था।[2] उसने 725 ई0 से 752 ई0 तक शासन किया। कुछ विद्वान उसका शासनकाल 700 ई0 से 740 ई0 के बीच मानते है। उसके नाम के अन्त मे वर्मन शब्द जुडा देखकर कुछ विद्वान उसे मौखरि शासक मानते है, परन्तु इस विषय मे निश्चित रूप से कुछ नही कहा जा सकता। गौडवहो मे उसके द्वारा वग (बगाल) तथा मगध विजय की बात कही गई है। मगध तथा गौड पर उसके अधिकार की पुष्टि नालन्दा से प्राप्त एक लेख से भी होता है। अत कहा जा सकता है कि कुशीनगर जनपद का क्षेत्र, उसके शासन काल मे कन्नौज राज्य का भाग था। यशोवर्मन के उतराधिकारियो के विषय मे कोई निश्चित जानकारी नही मिलती। उसके पश्चात कन्नौज मे वज्रायुद्ध, चक्रायुद्ध, इन्द्रायुद्ध आदि आयुद्ध नामधारी निर्बल शासक हुए।

यशोवर्मन की मृत्यु के बाद 8 वी–9वी शताब्दी ई0 मे कन्नौज त्रिकोणात्मक सघर्ष का केन्द्र बन गया, जिनमे मालवा के गुर्जरप्रतिहार, बिहार व बगाल के पाल तथा दक्षिण के राष्ट्रकूटो ने भाग लिया। इस राजनैतिक दौड मे अन्ततोगत्वा प्रतिहारो की विजय हुई।

प्रतिहार राजा नागभट्ट द्वितीय के ग्वालियर लेख मे उसे आनर्त (उतरी कठियावाड) मालवा (मध्यभारत) मत्स्य देश (पूर्वी राजपूताना), किरात (हिमाचल प्रदेश) और वत्स देश (कौशाम्बी) का विजेता बताया गया है।[3] जनपद कुशीनगर का क्षेत्र, प्रतिहार शासक के अधीन रहा होगा। परन्तु नागभट्ट का कोई लेख इस क्षेत्र से नही मिला है। मिहिर भोज (836–885 ई) ने काठियावाड, पजाब, अवध आदि प्रदेशो की विजय कर एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की तथा कन्नौज को

---

[1] श्रीवास्तव के0सी0, *प्राचीन भारत का इतिहास*, भाग 2, इलाहाबाद 1996, पृ0 500।

[2] '*गौडवहो*' (सीताराम पडित का सस्करण), श्लोक सख्या 1064–65 , गौडवहो यशोवर्मन के राजकवि वाकपति द्वारा रचित एक प्राकृत काव्य है ।

[3] त्रिपाठी आर0एस0, पूर्वोद्धृत, पृ0 321 ।

अपनी राजधानी बनाई।[1] अवध पर इसके अधिपत्य से सिद्ध होता है कि कुशीनगर जनपद इस समय प्रतिहारो के अधीन था। इस क्षेत्र पर मिहिरभोज के शासन की पुष्टि कलचुरि शासक सोढदेव के विक्रम सवत् 1134 (1077 ई0) के कहला (गोरखपुर) अभिलेख[2] से भी होती है। इस लेख के अनुसार मिहिरभोज ने 1852 ई0 मे सोढदेव के 9 वे पूर्वज, कलचुरि वश मे उत्पन्न सामन्त गुणाम्बोधि देव को पालो के विरूद्ध अभियान मे उसकी सेवा के लिए कुछ भूमि दी थी।[3] भोज के पुत्र तथा उत्राधिकारी महेन्द्रपाल का एक ताम्रपत्र दिघवा–दुबौली (सीवान जिला, बिहार प्रदेश) से मिला है।[4] इससे पता चलता है कि प्रतिहारो का राज्य बिहार तक विस्तृत था। कुशीनगर गोरखपुर और सीवान के बीच स्थित है। इससे स्पष्ट है कि यह जनपद प्रतिहारो के आाधिपत्य मे था। इस ताम्रपत्र से यह भी पता चलता है कि श्रावस्ती मण्डल प्रतिहारो के अधीन था, जिसके अनतर्गत कुशीनगर जनपद भी आता था।

कहला (जनपद गोरखपुर) एव कसया (जनपद कुशीनगर) से प्राप्त अभिलेखो से यह विदित होता है कि यहॉ कलचुरि सामन्त शासन कर रहे थे, जो प्रतिहारो की अधिसत्ता स्वीकार करते थे। पत्थर पर उत्कीर्ण कसया से ज्ञात अभिलेख सर्वप्रथम 1875–76 मे ए सी एल कार्लाइल के माध्यम से प्रकाश मे आया था।[5] दयाराम साहनी, लिपि के आधार पर कसया अभिलेख को 11वी–12वी शती मे रखते है।[6] साथ ही साहनी महोदय ने अभिलेख के 18 वे श्लोक मे वर्णित 'कीर्ति' शब्द को व्यक्तिगत नाम माना है। एच0सी0 रे इसी तथ्य को स्वीकार करते हुए

---

[1] मजूमदार, आर0सी0, पुर्वोद्धृत, पृ0 287।

[2] मिराशी, वी0वी0, *कार्पस इन्सक्रिप्सनम् इण्डिकेरम्,* भाग 4, स0 74, श्लोक 30।

[3] पुरी, बी0एन0, *द हिस्ट्री ऑफ द गुर्जर प्रतिहार्स,* पृ0 56 , राय, एच0सी0, II, *डायनेस्टिक हिस्ट्री ऑफ नार्दर्न इण्डिया,* पृ0 746।

[4] *इण्डियन एटिक्वेरी,* जिल्द 15, पृ0 107, 112–113।

[5] *इपिग्राफिका इण्डिका,* 18, पृ0 121–137।

[6] तदैव, पृ0 128।

कीर्ति का तादात्म्य चन्देल शासक कीर्तिवर्मा से करते हुए कसया अभिलेख को 13 वी शती मे रखते हे, परन्तु लिपि विज्ञान की दृष्टि से इस अभिलेख को कुटील से नागरी लिपि के विकास काल (10वी शती या उससे पूर्व) मे ही रखा जा सकता है। अभिलेख की आरम्भिक कुछ पक्तियॉ वन्दना स्वरूप है, जिसमे शिव को मुख्य स्थान प्राप्त है। इससे जनपद के कलचुरी शासको के शैव मतावलम्बी होने की पुष्टि होती है। बौद्ध धर्म के प्रति भी उनका दृष्टिकोण उदार था। तारा, बुद्ध आदि अनेक बौद्ध देवी–देवताओ का वर्णन भी अभिलेख मे हुआ है। मध्य की कुछ पक्तियॉ पौराणिक तथा लौकिक वशावली का उल्लेख करती है, जो सक्षेप मे निम्नवत है[1]– अत्रि–सोम–बद्धु–पुरूरवस–नहुष–हैहय–कार्तवीर्य अर्जुन।

अभिलेख मे कलचुरि शासक अपने को चन्द्रमा से जोडते है, जो उस परम्परा को इगित करता है जिसके अन्तर्गत अधिकाश पूर्व–मध्ययुगीन राजवश अपने को सूर्यवश या चद्रवश से जोडने मे गौरव अनुभव करते थे।

कसया और कहला अभिलेखो के आरम्भिक उद्ववाचको–दयाराम साहनी और एफ0इ0 किलहार्न ने कसया के कलचुरियो तथा कहला के कलचुरियो को कलचुरि वश की दो भिन्न शाखाए माना है[2] जिसका समर्थन एच0सी0रे ने भी किया है। किन्तु दोनो तालिको मे वर्णित अनेक शासको के नामो तथा अधिकाश घटनाक्रमो की समानता एव दोनो स्थलो की दूरी (लगभग 60 किमी0) को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि दोनो अभिलेखो से ज्ञात कलचुरि एक ही शाखा के शासक थे। कसया अभिलेख से ज्ञात कलचुरि नरेशो का नाम इस प्रकार है – शकरगण– नन्नराज – लक्ष्मण प्रथम – शिवराज प्रथम – भीमट प्रथम – लक्ष्मण द्वितीय – शिवराज द्वितीय – लक्ष्मण तृतीय – कचना – भीमट द्वितीय – शकरगण द्वितीय – मुग्धतुग – विद्या – गुण सागर द्वितीय – राजवा – शिवराज द्वितीय – भामान द्वितीय – सुगल्ल देवी – शकर गण तृतीय – यशोलेखा – गुण सागर तृतीय – भीम – लावण्यवती – व्यास – मर्यादा सागर (1031 इ) – सोढदेव

---

[1] पार्जिटर, एफ0ई0ए, *एन्सिएन्ट इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडीशन*, दिल्ली, 1962, पृ0 144।

[2] *इपिग्राफिका इण्डिका*, 18, न0 10।

(1077 एव 1079 ई)।[1] रे महोदय ने सोढदेव का राज्य विस्तार गोरखपुर मण्डल और बिहार के सारन (वर्तमान सीवान) जिले मे माना है, जबकि आरके शर्मा ने सरयू और गण्डक नदियो के मध्य क्षेत्र मे माना है[2] जिसके अन्तर्गत बहराइच, गोण्डा, बस्ती, गोरखपुर कुशीनगर, देवरिया आदि जिलो का भू–भाग आता है। कहला अभिलेख मे सोढदेव के लिए 'परमभट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर सोढलदेव' उपाधि वर्णित है जो इसके स्वतत्र शासक होने का द्योतक है।

कसया अभिलेख के बुद्ध की एक विशालकाय प्रतिमा (माथा–कुँवर) के पास उत्कीर्ण होने के आधार पर यह अनुमानित है कि कलचुरि शासक द्वारा वहाँ पर कुछ निर्मार्ण कार्य (सम्भवत पूजा स्थल और सघाराम) करवाया गया था।[3]

राजनैतिक दृष्टि से 8 वी शताब्दी मे कुशीनगर जनपद ने कलचुरियो के प्रयास से जो अपनी एक अलग पहचान कायम कर ली थी, वह उस सत्ता के पराभव के उपरान्त 11 वी शताब्दी के अन्त मे पुन कन्नौज के गहडवालो के अधीनस्थ हो गई। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिहारो के पतनोपरान्त जनपद के कलचुरियो की शक्ति भी क्षीण हो गई तथा इस क्षेत्र पर गहडवालो का प्रभुत्व स्थापित हो गया। गहडवालो की मूल राजधानी वाराणसी थी।[4] इस तथ्य की पुष्टि गहडवाल शासक चन्द्रदेव के चन्द्रावती (वाराणसी) से प्राप्त 1090 ई तथा 1093 ई के ताम्रपत्रो से भी होती है।[5] 1093 का ताम्र पत्र तो इस क्षेत्र पर गाहडवाल सता की स्थापना का भी सकेत देता है। गहडवालो ने इस क्षेत्र को जनपद के अतिम कलचुरी शासक सोढलदेव से विजित किया था[6]।

---

[1] युगयुगीन सरयूपार, पूर्वो द्धृत, पृ0 6।

[2] शर्मा, आर0के0, *द कल्चुरि एण्ड देयर टाइम्स,* 1980, दिल्ली, पृ0 40।

[3] शास्त्री, हीरानन्द, एनुअल रिपोर्ट आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, 1910–11, पृ0 68–89।

[4] पाण्डेय, राजबली, पूर्वोद्धृत, पृ0 208।

[5] *इपिग्राफिका इण्डिका,* 9, न0 47।

[6] नियोगी, रोमा, द हिस्ट्री आफ द गहाडवाल डाइनेस्टी, पृ0 26–27।

एक उत्कीर्ण लेख के अनुसार चन्द्रदेव ने (1090–1103) कोसल, काशी, कान्यकुब्ज तथा इन्द्रप्रस्थ आदि पर भी आधिपत्य स्थापित किया था। कोसल इस समय श्रावस्ती मण्डल मे था जिसके अन्तर्ग कुशीनगर जनपद का क्षेत्र था। चन्द्रदेव का पोता गोविद चन्द्र इस वश का सर्वाधिक प्रतापी राजा हुआ। गोविन्दचन्द्र के लेख दोन बुजुर्ग (सीवान जिला, बिहार) तथा गोरखपुर मे गगहा तथा पाली गॉव से मिले है।[1] आर सी मजूमदार ने गोविन्द चन्द्र (1114–1154 ई0) के राज्य का विस्तार बिहार तक विस्तृत बताया है।[2] 1100 ई मे कुशीनगर के उत्तर सौम्या सिन्दु का कीर्तिपाल देव एक छोटे से क्षेत्र पर शासन किया था[3] और बिसेन सिह ने नवापुर (वर्तमान सलेमपुर) मे एक राज्य स्थापित किया।[4] किन्तु सम्पूर्ण जनपद गोविन्दचन्द्र (1114–1154 ई) द्वारा विजित कर लिया गया।[5] गहढवाल वश का अतिम शासक जयचन्द्र (1170–1194 ई) था। इसके समय मे भी जनपद कुशीनगर गहडवालो के अधीन था। जयचद्र शिहाबुद्दीन गोरी द्वारा 1194 ई मे चन्दावर (वर्तमान एटा जिला) के युद्ध मे पराजित कर मार डाला गया।[6] इस प्रकार कन्नौज के साथ ही जनपद मे गहडवाल शक्ति का अन्त हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि इस क्षेत्र के कुछ स्थानीय अधीन राजवश, जो पहले से चले आ रहे थे, उन्होने अपनी शक्ति और राज्य इस समय बढा लिया। कुशीनगर जनपद से सटे देवरिया जनपद मे मझौली (सलेमपुर) मे बिसेन क्षत्रियो ने अपनी स्वतत्रता धोषित कर दी तथा बाकी के अन्य क्षेत्रो मे भर प्रभावशाली हो गये।[7] यही कुशीनगर

---

[1] पाण्डेय, राजबली, पूर्वोद्धृत, पृ0 209।

[2] मजूमदार, आर0सी0, पूर्वोद्धृत, पृ0 316

[3] नियोगी, रोमा, पूर्वोद्धृत, पृ0 27।

[4] एलेक्जेडर, ई0बी0, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 439।

[5] मजूमदार एण्ड पुसालकर, पूर्वोद्धृत, वाल्यूम 5, पृ0 55।

[6] श्रीवास्तव, के0सी0, पूर्वोद्धृत, पृ0 532।

[7] वरूण, डी0पी0, *गजेटियर आफ इण्डिया, उत्तर प्रदेश,* देवरिया, डिस्ट्रिक्ट, इलाहाबाद, 1988, पृ0 26।

जनपद की 12 वी शताब्दी तक की राजनीतिक स्थिति है, जो मेरे अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत है।

अध्याय 3

कुशीनगर जनपद मे पूर्ववर्ती पुरातात्विक अनुसधानो का विवेचन

प्रस्तुत अध्याय मे कुशीनगर जनपद के पुरातात्विक अध्ययन का इतिहास प्रस्तुत करना अभीष्ट है। इस सन्दर्भ मे कतिपय साक्ष्य पार्श्ववर्ती जनपदो से भी सकलित किये गये। कुशीनगर जनपद मे कुशीनगर के अतिरिक्त पावा की पहचान के सन्दर्भ मे कतिपय अन्य टीलो का भी पुरातातविक उत्खनन किया गया है। पुरातात्विक उत्खनन, जैसा कि हम जानते है, एक शोधार्थी की शक्ति सीमा से परे है, इसलिए शोध सस्थानो, विश्वविद्यालयो और अन्य पुरातात्विक सस्थानो द्वारा किये गये उत्खननो से प्राप्त साक्ष्यो का विवेचन प्रस्तुत करना ही यहॉ अभीष्ट है।

आधुनिक युग मे भारतीय इतिहास एव सस्कृति का सूत्रपात 1784 ई0 मे हुआ, जब सर विलियम जोन्स ने कलकत्ता मे एशियाटिक सोसायटी की स्थापना की।[1] इस सस्था की स्थापना, के प्रमुख उद्देश्य थे एशिया महाद्वीप के पुरावशेषो (।दजपुनपजपमे), कलाओ, विज्ञानो तथा साहित्यो के इतिहास के सम्बन्ध मे अनुसधान करना। विलियम जोन्स से पूर्व वारेन हेस्टिग्स जो इस समय बगाल के गवर्नर जनरल थे तथा डा0 जानसन ने भारत मे पुरातात्विक अध्ययन की आवश्यकता पर बल दिया था।[2]

विलियम जोन्स की दृष्टि अत्यन्त व्यापक थी। वे एशिया के सास्कृतिक अस्मिता का सूक्ष्म अध्ययन करना चाहते थे। अनुसधित्सुओ की खोजो को प्रकाशित करने के लिए उन्होने 1788 ई0 मे 'एशियाटिक रिसर्चेज' नामक पत्रिका का प्रकाशन करवाने के साथ–साथ सग्रहालयो की स्थापना पर भी बल दिया।[3] फलत सन् 1814

---

[1] *क्वार्टली रिव्यू ऑफ हिस्टारिकल स्टडीज* (1963–64), वाल्यूम 3, न 1, खण्ड 2, पृष्ठ 23–24।

[2] दृष्टव्य–डा0 जानसन द्वारा हेस्टिगस को लिखे गये पत्र, दिनाक 30 मार्च 1774 (इस पत्र की माइक्रो फिल्म कॉपी भारत के राष्ट्रीय अभिलेखागार मे उपलब्ध है)।

[3] *ऐन्शियट इण्डिया,* न0 9, पृष्ठ 5।

ई0 में सोसाइटी के सदस्यों द्वारा संगृहीत सामग्री को सुरक्षित रखने के लिए एक संग्रहालय की स्थापना की गयी ।

ऐशियाटिक सोसाइटी का कार्य क्षेत्र अत्यन्त व्यापक था। जोन्स के सहयोगी चार्ल्स विल्किन्सन के द्वारा गुप्त एवं कुटील लिपियों का सफलता पूर्वक उद्वावचन किया गया और ताजमहल, कुतुबमीनार आदि उत्तरी भारत के मध्य कालीन स्मारकों , एलोरा, एलीफैन्टा तथा कन्हेरी आदि पश्चिम भारत में स्थित प्राचीन काल के स्मारकों का अत्यन्त कल्पनापूर्ण वर्णन भी प्रस्तुत किया गया।

उल्लेखनीय है कि उपर्युक्त सभी व्यक्तिगत प्रयास थे। 18 वीं शताब्दी के समाप्त होते–होते तत्कालीन सरकार ने भी पुरातत्व के सम्बन्ध में रूचि लेना प्रारम्भ कर दिया।

भारतवर्ष में पुरातात्विक अध्ययन का प्रांरम्भ डा0 फ्रांसिस बुकनन से होता है। यद्यपि उनकी नियुक्ति 1800 ई0 में मैसूर क्षेत्र के कृषि संम्बन्धी सर्वेक्षण के लिए की गयी थी। उन्होनें कृषि सम्बन्धी विवरणों के साथ–साथ पुरावशेषों के सम्बंध में आकर्षक सूचनाएँ प्रस्तुत की। 1807 ई0 में उन्हें बंगाल प्रेसिडेन्सी के सांख्यिकी सर्वेक्षण का कार्य–भार सौंप दिया गया और उन्हें निर्देश दिया गया कि इस सर्वेक्षण में भू–संरचना, इतिहास एवं पुरा–सम्पदाओं से सम्बंधित सामग्री को भी समाहित करे। डा0 बुकनन ने सात वर्षो में बिहार, शाहाबाद, भागलपुर, गोरखपुर, दीनाजपुर, पूर्णिया और रंगपुर का व्यापक सर्वेक्षण किया।[1] उनके द्वारा सर्वेक्षित प्रान्तों के श्रृंखला में गोरखपुर परिक्षेत्र एक था तथा जनपद कुशीनगर इसी परिक्षेत्र के अन्तर्गत था। बुकनन ने 1914 ई0 में कुशीनगर जनपद के पडरौना और कसया क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया था, जो मार्टिन माण्टगोमरी की पुस्तक इस्टर्न इण्डिया में प्रकाशित है। इस पुस्तक में कुशीनगर जनपद की भू–संरचना नदियों की प्रकृति, रीति–रीवाज, इतिहास, पुरा–सम्पदा आदि का विवरण सर्वप्रथम अधिकारिक रूप से प्रस्तुत किया गया है,[2]

---

[1] घोष, ए0, *इण्डियन आर्क्यालाजी,* पृष्ठ 1–2।

[2] माण्टगोमरी, मार्टिन, *द हिस्ट्री एन्टिक्विटीज, टोपोग्राफी एण्ड स्टैटिस्टिक्स ऑफ ईस्टर्न इण्डिया,* भागलपुर–गोरखपुर, वाल्यूम 2, दिल्ली, 1976, पृष्ठ 354–358।

साथ ही पडरौना के छावनी के टीले के पास से प्राप्त मूर्तियो का रेखाचित्र भी दिया गया है।

डा0 बुकनन के पश्चात कई दशको तक भारत वर्ष मे पुरातात्विक सर्वेक्षण एव अध्ययन की दिशा मे शासकीय स्तर पर कोई व्यवस्थित प्रयत्न नही हुआ। यद्यपि कि भारत के विभिन्न क्षेत्रो मे आशिक रूप से अध्ध्यन होते रहे। 1857 ई0 के क्रान्ति के परिणामस्वरूप उत्पन्न परिस्थितयो के कारण इस योजना पर किसी का विशेष घ्यान नही गया। सन् 1861 ई0 का वर्ष भारतीय पुरातत्व के इतिहास का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण वर्ष था, क्योकि इसी वर्ष शासकीय स्तर पर इस देश की पुरानिधियो एव पुरावशेषो की ओर ध्यान देने के लिए भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की स्थापना हुई थी। भारत मे पुरातत्व सबन्धी अनुसधान का शासकीय स्तर पर यह प्रथम प्रयास था। सन् 1861 ई0 मे कनिघम ने तत्कालीन गर्वनर जनरल कैनिग के समक्ष भारत की विपुल पुरातात्विक धरोहर के सुव्यवस्थित अध्ययन एव अनुसधान की आवश्यकता पर बल देते हुए एक स्मरण पत्र प्रस्तुत किया। गवर्नर जनरल ने महत्वपूर्ण स्मारको की रूपरेखा, रेखाचित्रो, छायाचित्रो, उनके इतिहास एव परम्पराओ के निरूपण तथा सकलन हेतु अपनी स्वीकृति दे दी और इस कार्य को सम्पन्न करने का दायित्व कनिघम को ही सौंपा गया। कनिघम को पुरातात्विक सर्वेयर नियुक्त किया गया, जिसने सन् 1861 ई0 से लेकर 1865 ई0 के मध्य, पूर्व मे गया जिले से लेकर पश्चिम मे सिधु तक तथा उत्तर मे कालसी (देहरादून) से लेकर दक्षिण मे नर्मदा नदी के मध्यवर्ती क्षेत्रो की प्राचीन स्थलो की यात्रा एवम स्मारको का सर्वेक्षण किया और ऐतिहासिक महत्व के स्थलो का विस्तृत आख्याएँ (त्मचवतजे) भी तैयार किया। दुर्भाग्यवश 1866 ई0 मे तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड लारेन्स ने पुरातत्व विभाग को समाप्त कर दिया। सन् 1870 ई0 मे ब्रिटिश शासन के निर्देश पर भारत सरकार ने 'भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण' नामक एक स्वतन्त्र विभाग की स्थापना की और कनिघम को उसका महानिदेशक नियुक्त किया गया।

मूलत भारत मे पुरातात्विक अध्ययन का व्यवस्थित क्रम सर एलेक्जेडर कनिघम से ही प्रारम्भ होता है। कनिघम ने पुरातत्व की प्रासगिकता एव उपादेयता को

इतिहास के स्रोत के रूप मे स्वीकार किया। उन्होने घनघोर जगलो, बीहड मार्गो और असहनीय कठिनाईयो को सहकर फाह्यान एव ह्वेनसाग के यात्रा विवरण को आधार बनाकर सम्पूर्ण भारत की यात्रा की तथा उन स्थलो को जो भूले बिसरे दम तोड रहे थे, उसे प्रकाश मे लाया। कनिघम के सर्वेक्षण यात्रा का मुख्य प्रयोजन प्राचीन स्थलो, स्मारको एव पुरावशेषो को प्रकाश मे लाना था।

कुशीनगर जनपद के अन्तस् मे छिपे पुरावशेषो को प्रकाश मे लाने का व्यवस्थित कार्य कनिघम द्वारा 1860–62 मे प्रारम्भ किया गया। कनिघम ने 1861 मे कुशीनगर क्षेत्र का सर्वेक्षण किया। उनके इस सर्वेक्षण योजना के मूलत दो प्रयोजन थे। प्रथम इस क्षेत्र के पुरावशेषो तथा पुरास्थलो का सर्वेक्षण एव सग्रह तथा द्वितीय भगवान बुद्ध से सम्बन्धित स्थलो की पहचान, जो वर्तमान समय मे उजाड हो गये थे। इस योजना को साकार करने के लिए उन्होने जनपद के पूरे क्षेत्र का परिभ्रमण किया। इस सर्वेक्षण कम मे अनेक उपेक्षित एव अज्ञात पुरास्थल प्रकाश मे आये। कनिघम[1] द्वारा कसया के समीप स्थित टीलो के सीमित उत्खनन से कुशीनगर के पहचान का विवाद समाप्त हो गया। कनिघम की भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (।तबीमवसवहपबस ैनतअमल वि्पदकप) नाम से 23 जिल्दो वाली विशाल रिपोर्ट प्रकाशित है।

कनिघम की रिपोर्ट के आधार पर उन्ही के सहायक ए0सी0एल0 कार्लाइल ने 1876–77 ई0 मे कुशीनगर का उत्खनन कराया और उन्हे महान ऐतिहासिक सफलता मिली। इतना ही नही कनिघम एव कार्लाइल की दृष्टि मल्लो के दूसरी शाखा की राजधानी पावा की ओर गयी और उन्होने इसकी पहचान अलग–अलग की। कनिघम ने पडरौना के निकट छावनी नामक टीले को पावा होने की सम्भावना व्यक्त की।[2] जबकि उनके सहयोगी कार्लाइल ने सठियॉव डीह को, जो आधुनिक फाजिलनगर से लगभग 1 किमी0 दक्षिण पश्चिम दिशा मे स्थित है, पावा

---

[1] कनिघम, ए0, *आर्क्यालाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट,* (ए0एस0आई0आर0) 1861–62, पृष्ठ 77–83 यकनिघम, ए0 *एशिएट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया,* वाराणसी, 1979, पृष्ठ 494।

[2] *ए0एस0आई0आर0,* 1862–63, वाल्यूम ९ पृष्ठ 74–75 य कनिघम, ए0, *एशिएट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया,* पृष्ठ 366–67 (पुनर्मुद्रित), वाराणसी, 1963 ।

होने की सम्भावना व्यक्त की।[1] कनिघम एव कार्लाइल ने जिले के कतिपय अन्य पुरातात्विक स्थलो का सर्वेक्षण एव निरीक्षण किया। कनिघम ने जनपद के पुरातात्विक स्थलो के साथ–साथ ऐतिहासिक भूगोल को भी ध्यान मे रखा, जिसका विवरण इनकी पुस्तक 'एन्शियट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया' मे दिया गया है।[2] कार्लाइल द्वारा सर्वेक्षित जिले के अन्य स्थलो के नाम इस प्रकार है सरया, कुकुरपट्टी, नदवा, धनहा, ऊस्मानपुर डीह, बनवीरा, मीर बिहार, पथरवा, झारमठियॉ (धारमठिया), करमैनी और गागीटीकर।[3]

कनिघम की परम्परा का अनुसरण करते हुए, कार्लाइल के बाद फ्यूहरर ने 1896 ई0 मे कुशीनगर जनपद के पुरावशेषो को प्रकाश मे लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया। उन्होने जिले के कुछ स्थलो का सर्वेक्षण भी किया जिसका विवरण उनकी पुस्तक[4] मे प्रकाशित है। इन्होने धारमठिया के पुरातात्विक महत्व पर विस्तृत प्रकाश डाला है।

कनिघम एव कार्लाइल के सर्वेक्षणो का प्रतिफल यह हुआ कि सम्पूर्ण पूर्वी उत्तर प्रदेश मे पुरातात्विक अध्ययन का मार्ग प्रशस्त हुआ और साथ ही पुरातत्व मे प्रशासनिक अधिकारियो के साथ–साथ सामान्य जन भी रूचि लेने लगे। सन् 1899 ई0 मे लार्ड कर्जन वायसराय बन कर भारत आये। उन्होने अपने एक कार्यवृत्त–विवरण मे भारत मे पुरातत्व के क्षेत्र मे व्याप्त अव्यवस्था एव विसगतियो के सन्दर्भ मे अपनी तीव्र प्रतिकिया व्यक्त की। उन्होने पूरातत्व से सम्बन्धित सभी कार्यो की देख–रेख और नियत्रण के लिए सुयोग्य और प्रशिक्षित महानिदेशक की आवश्यकता पर बल दिया।

---

[1] कार्लाइल, ए0सी0एल0, *ए0एस0आई0आर0 रिपोर्ट ऑफ टूर्स इन गोरखपुर, सारन एण्ड गाजीपुर,* 1877–80, वाल्यूम 22, पृष्ठ 29–31, वाराणसी, 1966 ।

[2] कनिघम, ए0, *दि एन्शियट ज्याग्राफी ऑफ इण्डिया,* पृष्ठ 363–67।

[3] कार्लाइल, ए0सी0एल0, *ए0एस0आई0आर0, टूर्स इन गोरखपुर डिसट्रिक्ट,* 1875–76 एण्ड 1876–77, वाल्यूम 18, दिल्ली 1869, पृष्ठ 102।

[4] फ्यूहरर, ए0, *द मानुमेण्टल एन्टीक्विटीज एण्ड इस्क्रिप्शन्स इन नार्थ वेस्टर्न प्रॉविन्सेज एण्ड अवध,* पृष्ठ 240, इण्डोलाजिकल बुक हाउस, वाराणसी, 1969।

उन्होने तत्कालीन शासन के पुरातत्व सम्बन्धित दायित्व को इस प्रकार स्पष्ट किया, श्उत्खनन और खोज करना, वर्गीकरण, प्रतिलिपि एव विवरण तैयार करना, प्राचीन लिपियो की अनुकृति बनाना, पढना तथा इन सबकी यादगार बनाये रखने के लिए उन्हे सुरक्षित रखना हमार दायित्व है।श[1] सन् 1902 ई0 मे सर जॉन मार्शल भारतीय पुरातत्व विभाग के महानिदेशक बने। 1904 ई0 मे ष्प्राचीन स्मारक परिरक्षण अधिनियमष बना[2] और 1906 ई0 मे भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग को एक स्थायी विभाग बना दिया गया। मार्शल के कार्यकाल मे सन् 1904 ई0 से सन् 1912 ई के बीच कुशीनगर का उत्खनन हुआ। इन उत्खननो से कुशीनारा के पहचान के सम्बन्ध मे सारे भ्रम समाप्त हो गये। इन उत्खननो का श्रेय पुरातत्ववेत्ता दयाराम साहनी, वोगेल और हीरानन्द शास्त्री को दिया जा सकता है।

भारतीय पुरातत्व के अध्ययन मे सन् 1944 ई0 बहुत महत्वपूर्ण है। इसी वर्ष आर0 आई0 मार्टीमर व्हीलर ने भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के महानिदेशक का पद सम्भाला। ये उत्खनन कार्य मे वैज्ञानिक विधियो के प्रबल पक्षधर थे। उन्होने भारत मे पुरातत्व सम्बन्धित महत्वपूर्ण परिवर्तनो तथा उसके सर्वांगीण प्रगति के लिए अनेक कार्य किये। उन्होंने सन् 1945 ई0 मे ष्केन्द्रीय पुरातत्व सलाहकार परिषदष का गठन किया, जिसके सदस्य विश्वविद्यालयो, शोध सस्थानो, शैक्षिक समितियो तथा केन्द्र एव प्रदेश शासन के प्रतिनिधि थे। व्हीलर उत्खनन मे स्तर–विन्यास एव ज्यामितीय नाप–जोख पद्वति के प्रबल हिमायती थे। व्हीलर के इन प्रयत्नो का प्रतिफल यह हुआ कि भारत वर्ष के विश्वविद्यालय भी पुरातात्विक अध्ययन मे रूचि लेने लगे।

स्वतत्रता के बाद पूर्वी उत्तर प्रदेश मे प्रथम वैज्ञानिक उत्खनन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग के प्रो0 कृष्ण कुमार सिन्हा ने सन् 1959 ई0 मे श्रावस्ती मे करवाया ।[3] इसी कम मे गोरखपुर

---

[1] पाण्डेय, जे0, एन0, *पुरातत्व विमर्श,* इलाहाबाद, 1997, पृष्ठ 48।

[2] ग्रोवर, बी0एल0 एण्ड यशपाल, *आधुनिक भारत का इतिहास एक नवीन मूल्याकन,* नई दिल्ली, 1990, पृष्ठ 287।

[3] सिन्हा, के0 के0, *एक्सकेवेशन एट श्रावस्ती,* 1959, प्रीफेस ।

विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग ने सन् 1961–62 ई0 मे सोहगौरा (गोरखपुर जनपद) नामक पुरातात्विक स्थल का वैज्ञानिक पद्धति से सीमित पैमाने पर उत्खनन कराया। इस उत्खनन के बाद पहली बार पूर्वी उत्तर प्रदेश मे ताम्राश्म सस्कृति (बिसबवसपजीपब) के अवशेष प्राप्त हुए।[1] पुन इस विश्वविद्यालय ने सन् 1975–76 ई0 मे सोहगौरा का उत्खनन किया जिसके प्रथम स्तर से नवपाषाणिक (छमवसपजीपब) अवशेष प्रकाश मे आये।

सन् 1962–63 ई0 मे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रो0 ए0 के0 नारायण अपने सहयोगी श्री पी0 सी0 पत के साथ बस्ती, देवरिया एव गोण्डा के अनेक स्थलो का सर्वेक्षण किया। उल्लेखनीय है कि उस समय कुशीनगर जनपद देवरिया का ही अग था। जनपद के सर्वेक्षित स्थलो मे मरचैयाडीह, पपउरडीह, वनमोर्चा, उस्मानपुरडीह तथा फाजिलनगर शामिल थे।[2] सन् 1963–64 ई0 मे गोरखपुर विश्वविद्यालय के डा0 आर0 बी0 सिह द्वारा बस्ती,देवरिया (वर्तमान कुशीनगर भी सम्मिलित) एव गोरखपुर के कुछ तहसीलो का सर्वेक्षण किया गया जिससे महत्वपूर्ण सामग्री प्रकाश मे आई।[3]

सन् 1973–74 ई0 मे भारतीय पुरातत्व विभाग के श्री के0 एम0 श्रीवास्तव ने कुशीनगर जनपद के उस्मानपुर (वीरभारी) टीले का सीमित पैमाने पर उत्खनन कराया था,[4] परन्तु दुर्भाग्यवश इसका विवरण प्रकाशित न हो सका। उनके द्वारा लगाए गए ट्रेन्च मे पकी ईटो के दीवारो के प्रमाण आज भी देखे जा सकते है। वर्ष 1979–80 ई0 मे गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, पुरातत्व, एव सस्कृति विभाग के प्रो0 शैल नाथ चतुर्वेदी ने अपने सहयोगियो के साथ, इस क्षेत्र का सर्वेक्षण

---

[1] चतुर्वेदी, एस0एन0, *एडवास ऑफ द विन्ध्यन नियोलिथिक एण्ड चाल्कोलिथिक कल्चर्स टू द हिमालयन तराई एक्सकेवेशन एण्ड एक्सप्लोरेशन्स इन द सरयू पार रीजन ऑफ उत्तरप्रदेश, मैन एण्ड इनवायरमेण्ट,* वाल्यूम 10, 1985, पृ0 101–103।

[2] *इण्डियन आर्कियोलाजी, ए रिव्यू,* 1962–63, पृ0 33।

[3] तदेव, 1963–64, पृ0 45

[4] तदैव, 1973–74 पृ0 30

किया तथा उनके निर्देशन मे फाजिलनगर एव सठियॉव टीले का सीमित पैमाने पर उत्खनन कार्य सम्पन्न हुआ।[1] सन् 1981–82 ई0 मे भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग (मध्य पूर्वी क्षेत्र) के एच0 के0 नारायण एव बी0 नाथ ने इस क्षेत्र का सर्वेक्षण किया तथा जनपद मे स्थित तुर्कपट्टी के टीले से दो सूर्य की प्रतिमाएँ जिनमे से एक गुप्तकाल तथा एक पालयुगीन है, खोज निकाला।[2] सन् 1984–85 ई0 मे मध्य पूर्वी परिक्षेत्र के ही अरूण कुमार ने पडरौना के उपनगर छावनी के टीले का उत्खनन कराया था।[3] 1997 ई0 मे गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्रो0 दयानाथ त्रिपाठी के निर्देशन मे पुन उस्मानपुर (वीरभारी) टीले का सीमित उत्खनन कराया गया तथा साथ ही साथ उसके समीपवर्ती क्षेत्रो का सर्वेक्षण भी किया गया।[4] इसके अतिरिक्त समय–समय पर कतिपय अन्य विद्वानो द्वारा भी जनपद कुशीनगर के पुरातात्विक स्थलो का सर्वेक्षण एव निरीक्षण किया जाता रहा, जिनमे गोरागगोपाल सेनगुप्त[5] तथा राहुल साकृत्यायन[6] का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है। कुशीनगर जनपद मे अद्यतन उत्खनित स्थलो का विस्तृत विवरण इस पकार है–

1 कुशीनगर

कुशीनगर प्राचीन भारत के तत्कालीन षोड्श महाजनपदो मे से एक एव मल्ल राज्य की राजधानी थी।[7] यह नगर $26^{0}45'$ उत्तरी अक्षाश और $83^{0}55'$ पूर्वी देशान्तर के बीच स्थित है। वर्तमान समय मे यह गोरखपुर से 50 किमी0 पूर्व, देवरिया से 33 किमी0 उत्तर तथा पडरौना से 18 किमी0 दक्षिण पश्चिम मे स्थित है।

---

[1] चतुर्वेदी, एस0 एन0, *एक्सकेवेशन एट सठियॉव–फाजिलनगर, डिस्ट्रिक्ट देवरिया (सप्रति कुशीनगर) एण्ड एक्सकेवेशन इन द डिस्ट्रिक्ट ऑफ गोरखपुर एण्ड बस्ती ऑफ उत्तर प्रदेश,* हिस्ट्री एण्ड आर्कियोलाजी, 1980 , वाल्यूम 1, न0 1–2, पृ 333–340

[2] *इण्डियन आर्कियोलाजी, ए रिव्यु,* 1981–82, पृ0 101

[3] *इण्डियन आर्कियोलाजी, ए रिव्यु,* 1984–85, पृ0 88

[4] त्रिपाठी, डी0 एन0, *वीरभारी (उस्मानपुरडीह) टीले का उत्खनन,* अप्रकाशित रिपोर्ट।

[5] सेनगुप्त, गोराग गोपाल, *डेली लैण्ड रूट्स इन ऐशियेट इण्डिया,* पटना 1968, पृ0 1–4।

[6] साकृत्यायन, राहुल, *बुद्धचर्या,* सारनाथ, 1952, पृ0 352

[7] *पअगुतरनिकाय,* भाग 1, पृ0 213,तदैव, भाग 4, पृ0 252, *महावस्तु,* भाग 1, पृ0 34

कुशीनगर का पुरातत्व

कसया के अवशेषो को सर्वप्रथम प्रकाश मे लाने का श्रेय बुकानन[1] और लिस्टन[2] को है। कुशीनगर को कसया से समीकृत करते हुए भी ये विद्वान इस स्थान के ऐतिहासिक महत्व से अवगत नही थे। 1854 ई0 मे एच0 एच0 विल्सन ने भी कसया को कुशीनगर से समीकृत किया,[3] परन्तु कुशीनगर की ओर इतिहास प्रेमियो का ध्यान कनिघम द्वारा 1860–61 ई0 मे इस क्षेत्र की खुदाई के बाद ही आकृष्ट हुआ। उत्खनन के परिणामो के आधार पर कनिघम ने आधुनिक कसया को कुशीनगर से समीकृत किया।[4] कनिघम के उत्खनन के समय यहाँ पर 'माथा–कुँवर का कोट' एव 'रामाभार' नामक दो बडे तथा कुछ अन्य छोटे टीले मात्र अवशिष्ट थे। यह समस्त भूभाग वनाच्छादित एव दुर्गम्य था। निकटवर्ती ग्रामो के निवासी इन टीलो की ईटे निकाला करते थे, जिससे प्राचीन स्मारको का दुरूपयोग हो रहा था। मुकुट बन्धन चैत्य के ऊपर रामाभार भवानी की मठिया और एक अन्य स्तूप के ऊपर किसी नट की समाधि बन चुकी थी।[5]

कनिघम के पश्चात् उनके सहायक अधिकारी कार्लाइल ने 1875 से 1877 ई0 तक कसया मे महत्वपूर्ण सर्वेक्षण किया और कई टीलो की खुदाई करवाई। कसया की सुप्रसिद्ध परिनिर्वाण प्रतिमा मन्दिर एव निकटस्थ स्तूप के अनुसन्धान का श्रेय कार्लाइल को ही प्राप्त है।[6] सन् 1893 ई0 मे भारत सरकार ने इस क्षेत्र का अधिग्रहण किया। इस अवसर पर अनेक व्यक्तियो ने यहाँ उत्खनन किया, परन्तु

---

[1]मार्टिन, मान्टगोमरी, *ईस्टर्न इण्डिया,* भाग दो, पृ 357

[2] *जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसायटी ऑफ बगाल,* 1837, पृ 417

[3] *जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसायटी,* 1856, पृ 246, यहा इसका नाम कुसिया दिया गया है।

[4]कनिघम ए0, *आक्यालाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट,* अक 1, पृ 76–85

[5] नलिनाथ दत्त और कृष्णदत्त बाजपेयी, *डेवलपमेट ऑफ बुद्धिज्म इन उत्तर प्रदेश* (पब्लिकेशन ब्यूरो, लखनऊ, 1956), प्रथम सस्करण, पृ 357

[6] *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया वार्षिक रिपोर्ट* ,अक 18, कलकत्ता, 1883, पृ 62 और आगे, अक 22 (कलकत्ता, 1885), पृ 16 और आगे।

उनका विवरण उपलब्ध नही है। 1896 ई0 मे प्रान्तीय सरकार की ओर से विसेण्ट स्मिथ ने कसया का सर्वेक्षण किया।[1]

पुन पुरातत्व विभाग द्वारा वोगेल के निर्देशन मे 1904 ई0 से 1907 ई0 तक तथा हीरानन्द शास्त्री की देख–रेख मे 1910–12 ई0 तक उत्खनन किया गया।उत्खनित स्थलो का रेखाचित्र शोध प्रबध मे सलग्न है(रेखाचित्र स0–2) इसके परिणामस्वरूप बहुत से स्तूप, चैत्य तथा बिहार प्रकाश मे आए। ये स्मारक एक दूसरे के सान्निध्य मे ही नही थे, अपितु इनका निर्माण विभिन्न तत्वो से हुआ था। तिथि तथा सवत्युक्त अभिलेखो के अभाव मे इन स्मारको का तिथि–निर्धारण दुष्कर है। यद्यपि इन स्मारको मे प्रयुक्त ईटो की नाप से तिथि निर्धारण किया जा सकता है, परन्तु स्मारको के परवर्ती निर्माताओ द्वारा पूर्वकालीन ईटो के तिथि–निर्धारण के सन्दर्भ मे इनकी माप का प्रयोग सर्वथा निरापद नही कहा जा सकता।

प्राचीन कुशीनगर के पुरावशेष

कुशीनगर के बौद्ध स्मारक वस्तुत दो स्थानो मे केन्द्रित है। शालवन, जहॉ बुद्ध को परिनिर्वाण प्राप्त हुआ था और मुकुट बन्धन चैत्य, जहॉ उनका दाह–सस्कार हुआ था। परिनिर्वाण स्थल को अब 'माथा कुॅवर का कोट' नाम से जाना जाता है, जबकि मुकुट बन्धन चैत्य का प्रतिनिधित्व आधुनिक रामाभार का टीला करता है। 'माथा कुॅवर का कोट' के गर्भ मे परिनिर्वाण मन्दिर एव मुख्य स्तूप छिपे हुए थे। ये दोनो स्तूप कुशीनगर के सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्मारक थे। इनके चारो ओर समय समय पर अनेक स्तूपो, चैत्यो तथा विहारो का निर्माण होता रहा।

मुख्य स्तूप·

इस स्तूप (फलक पर A) की खुदाई सर्वप्रथम कार्लाइल ने 1876ई0 मे की थी। उस समय यह बहुत जीर्ण–शीर्ण दशा मे था। इस स्तूप के शिखर तथा खण्ड

[1] *जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसायटी,* 1902, पृ 139,
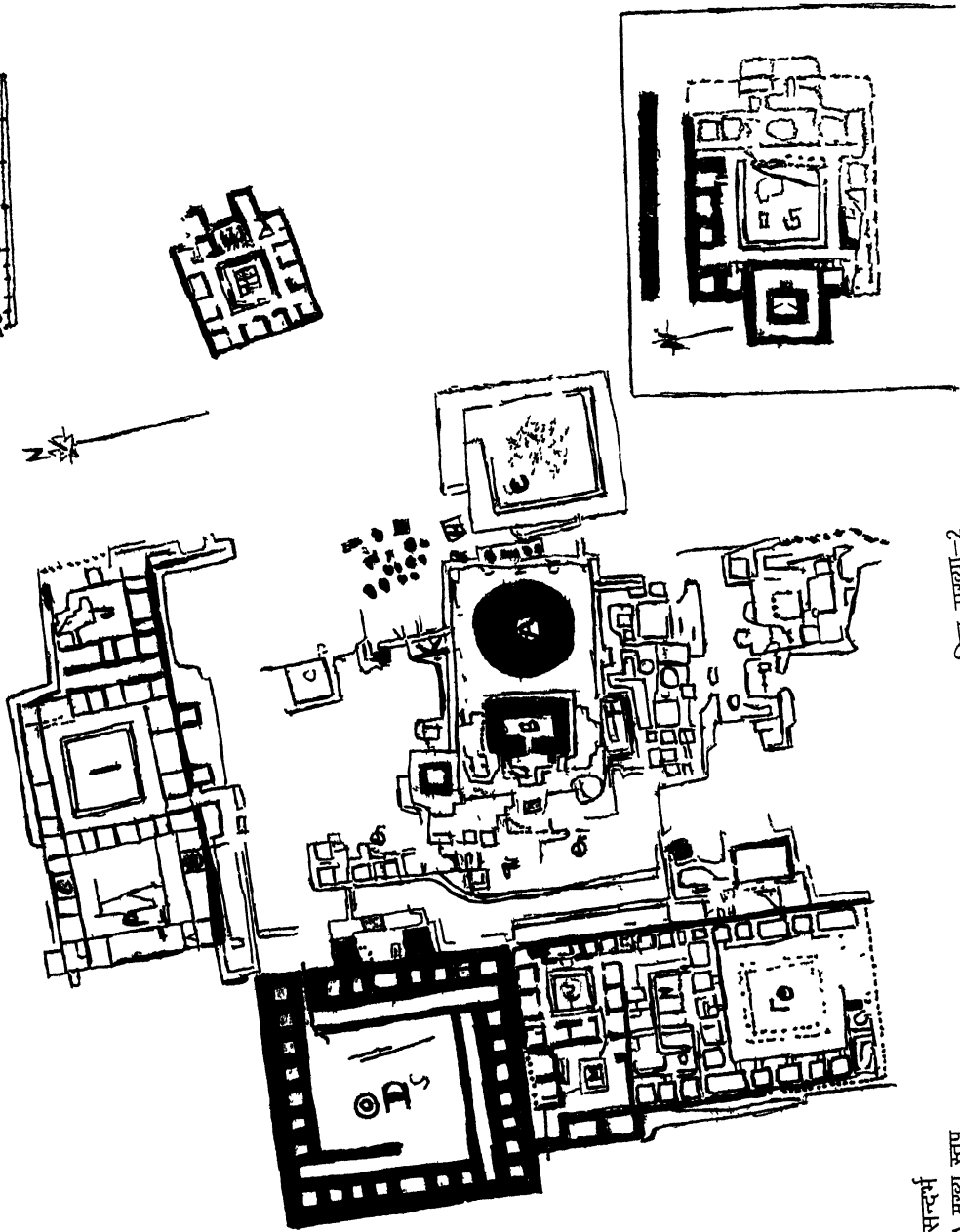
कुशीनगर साइट प्लान
पैमाना
50 0 50 100 फीट
N
A
B
C
E
G
I
J
K
N
सन्दर्भ
A-मुख्य स्तूप
B-निर्वाण मन्दिर
D, E, I, J, M, N, O, Q, Q1-प्रमुख विहारे
G-माथा कुँवर मन्दिर
H-प्रारम्भिक मौर्य कालीन सरचना
C, F, K-अन्य सरचनाएँ

रेखा चित्र सख्या–2

भाग पूर्णत नष्ट हो चुके थे।[1] केवल अधोभाग ही अवशिष्ट था। ह्वेनसाग ने इस स्तूप की ऊँचाई 200 फुट बतायी है और इसके निर्माण का श्रेय अशोक को दिया है,[2] परन्तु कार्लाइल ने शिखर सहित इसकी ऊँचाई 150 फुट बतायी है। इसकी नीव जिस पर स्तूप और मन्दिर निर्मित हुए थे, पृथ्वी की सतह से 2 74 मी0 ऊँचाई पर थी। इस स्तूप मे प्रयुक्त ईटे विभिन्न आकार की थी। कार्लाइल के अनुसार इस स्तूप के नीचे अन्य प्राचीन स्तूपो के ध्वसावशेष दबे हुए थे।

1910 ई0 मे हीरनद शास्त्री के निर्देशन मे इस स्तूप की खुदाई पुन आरम्भ हुई। ऊपर से गुम्बद को हटाने पर गोलाकार भित्ति मे सबसे ऊपर कुछ नक्काशीदार ईंटे तथा जयगुप्त नामक राजा का एक तॉबे का सिक्का मिला। ऐसा प्रतीत होता है कि इन नक्काशीदार ईटो को अन्य प्राचीन स्मारको से लिया गया था।[3] खुदाई करने पर 14 फुट (2 74 मी0) नीचे ईटो का एक वृत्ताकार कक्ष मिला।[4] स्तूपो के ध्वसावशेष दबे हुए थे। इसकी ऊँचाई और व्यास 0 64 मीटर (2 फुट 1 ईच) था। इसके अन्दर ताम्रपत्र द्वारा बद एक ताम्रघट रखा था। इस ताम्रघट मे बालू, लकडी के कोयले, कीमती पत्थर, कौडियॉ और दो ताम्रनलियॉ मिली है। इसके अतिरिक्त कुमारगुप्त प्रथम के कुछ रजत सिक्के तथा एक छोटी स्वर्ण एव रजत नली भी मिली है। स्वर्ण नली मे भूरे रग का कोई पदार्थ तथा किसी तरल पदार्थ की दो बूदे रखी हुई थी। मुखाच्छादन के रूप मे प्रयुक्त ताम्रपत्र पर सस्कृत भाषा मे 'निदानसूत्र' लिखा गया है। परिनिर्वाण चैत्य मे हरिबल स्वामी ने इसे स्थापित किया था।[5] फ्लीट ने प्रतिमा पर अकित लिपि को 5 वी शताब्दी का माना है।[6] कुमारगुप्त प्रथम के सिक्को

---

[1] कार्लाइल के समय अण्ड के नीचे का गोलाकार भाग 25 फुट ऊँचा था और उसकी परिधि 5 फुट थी।

[2] थामस वाटर्स, *आन युवान च्वाग्स इन इण्डिया,* जिल्द दो, पृ 28

[3] *आकियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया* (वार्षिक रिपोर्ट) ,1910—11, पृ 64

[4] देवला मित्रा, *बुद्धिस्ट मानुमेण्टस* (कलकत्ता, 1917), पृ 70

[5] यह हरिबल स्वामी वही था जिसने परिनिर्वाण प्रतिमा को स्थापित किया था।

[6] *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया* (वार्षिक रिपोर्ट) ,1910—11, पृ 64

की प्राप्ति से यह निश्चित हो जाता है कि ऊपरी स्तूप की सरचना भी इसी शताब्दी मे हुई थी।

इस स्तूप के 10 36 मीटर नीचे खोदने पर 2 82 मी0 ऊँचे एक छोटे स्तूप का अवशेष मिला। इसके पश्चिमी पार्श्व मे प्रथम शताब्दी मे निर्मित बुद्ध की एक ध्यानावस्थित मृण्मूर्ति स्थापित की गयी थी।[1] स्तूप के भीतर एक मिट्टी के पात्र मे कुछ जला हुआ कोयला रखा था। सम्भवत यह कोयला किसी भिक्षु की चिता का था, जिसे इसमे रख दिया गया था। यह स्तूप अच्छी दशा मे था, अत हीरानद शास्त्री ने इस स्तूप को मुख्य स्तूप से बहुत पूर्व का माना है।[2]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि इस स्तूप का कई बार परिवर्धन एव जीर्णोद्धार किया गया। वहॉ सर्वप्रथम एक छोटे से स्तूप का निर्माण हुआ और कालान्तर मे उसके आकार मे निरनतर अभिवृद्धि होती रही। पॉचवी शताब्दी मे हरिबल स्वामी ने इसका जीर्णोद्धार करवाया और परवर्ती काल मे भी उसकी आवश्यक मरम्मत होती रही। 75 फुट ऊँचा स्तूप का वर्तमान कलेवर (छायाचित्र सख्या – 1) 1927 मे भक्तो के किए गए कार्य का सुफल है।

परिनिर्वाण मन्दिर

यह मन्दिर (जिसे फलक पर B से दिखाया गया है), मुख्य स्तूप के पश्चिम मे स्थित था। सर्वप्रथम कार्लाइल ने 1876 ई0 मे इस मन्दिर और परिनिर्वाण प्रतिमा को खोज निकाला था। कार्लाइल को ऊँची दीवाले तो मिली थी, परन्तु छत के अवशेष नही मिले थे। इसमे केवल गर्भगृह और उसके आगे एक प्रवेश कक्ष था। इस टीले के गर्भगृह मे खुदाई करते समय कार्लाइल को एक ऊँचे सिहासन पर तथागत की 20 फुट (6 1 मी0) लम्बी परिनिर्वाण मुद्रा की प्रतिमा मिली थी। इसका निमार्ण एक ही शिलाखण्ड पर किया गया है। यह प्रतिमा चित्तीदार बलुआ पत्थर की है। इसमे बुद्ध को पश्चिम की तरफ मुख करके लेटे हुए दिखाया गया है। इसका सिर

---

[1] देवला मित्रा, *बुद्धिस्ट मानुमेण्टस* (कलकत्ता, 1917), पृ 70

[2] *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया* (वार्षिक रिपोर्ट) ,1910–11, पृ 64–65

उत्तराभिमुख है, दाहिना हाथ सिर के नीचे और बायॉ हाथ जधे पर स्थित है। पैर एक दूसरे के ऊपर है।[1] यह मूर्ति एक लम्बे पषाण पर आधारित है। इसके चारो कोने पर छोटे–छोटे पाषाण स्तम्भ बने हुए है। यह सिहासन 24 फुट लम्बा तथा 5 फुट 6 ईंच चौडा तथा दो फिट ऊँचा है। सिहासन के ऊपर पत्थर की पट्टियॉ जडी हुई है। सिहासन के अग्र भाग मे छोटे–छोटे पत्थर की मूर्तियॉ बनी हुई है जिनमे तीन शोक सन्तप्त मूर्तियॉ प्रमुख है।[2] कलाविद इन्हे आनन्द, सुभद्र तथा वज्रपाणि की प्रतिमा मानते है। ये सारी मूर्तियॉ पत्थर निर्मित छोटे–छोटे ताखे मे प्रतिष्ठित है। बॉयी ओर एक स्त्री की मूर्ति है और इसे दु खद मुद्रा मे दर्शाया गया है। दायी ओर भी ठीक इसी प्रकार की मूर्ति मिलती है। बीच वाली मूर्ति एक पुरूष की है जो पद्मासन मे बैठा हुआ है(रेखचित्र स0–3)। इसके नीचे पाचवी शताब्दी का ब्राह्मी लिपि मे एक लेख

---

[1] कार्लाइल की यह मूर्ति 1877 ई0 मे खुदाई करते समय ऊपरी सतह से 10 फुट नीचे मिली थी। उस समय यह मूर्ति कई खण्डो मे विभक्त थी। इस मूर्ति की पहले भी मरम्मत की गयी थी। देखे आ स रि, भाग 18, पृ 57–58 और भाग 22, पृ 17। ऐसा लगता है कि इस प्रकार की प्रतिमाओ का कुशीनगर मे प्राधान्य था और इनकी पूजा की जाती थी। परिनिर्वाण से सम्बधित अन्य छोटी प्रतिमाएँ भी मिली है। इसी प्रकार की एक विशाल प्रतिमा अजन्ता की गुफा न0 26 से भी उपलब्ध है। देखे, नलिनाथ दत्त और कृष्णदत्त बाजपेयी, डेवलपमेट ऑफ बुद्धिज्म इन उत्तर प्रदेश, पृ 360 (पाद टिप्पणी)

[2] इन मूर्तियो की पहचान कठिन है। बायी तरफ एक नारी की प्रतिमा है, जो दोनो हाथ जमीन पर रखकर शोकसन्तप्त मुद्रा मे झुकी हुई है। दायी ओर की मूर्ति स्त्री की है या पुरूष की यह तो स्पष्ट नही पर यह मूर्ति भी शोकसन्तप्त मुद्रा मे दाएँ हाथ से सिर को पकडे हुए है। बीच की मूर्ति बैठी हुई है। ये मूर्तिया आनन्द, सुभद्र, और मल्लिका की हो सकती है। बीच की मूर्ति हरिबल की भी हो सकती है।
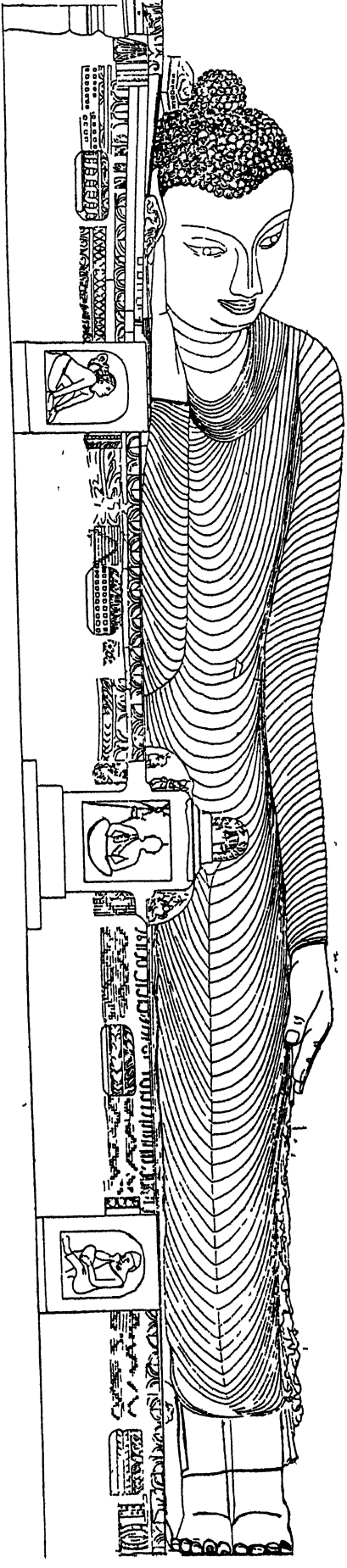
रेखा चित्र सख्या–3 बुद्ध की महापरिनिर्वाण प्रतिमा

उत्कीर्ण है।[1] इस लेख से यह स्पष्ट हो जाता है कि परिनिर्वाण मूर्ति का प्रतिष्ठापक हरिबल[2] नामक व्यक्ति था और इसका शिल्पी मथुरा का दिन्न था।

मूर्ति से निर्वाण कालीन शान्ति स्फूटित हो रही है। इसकी विशिष्ट मुद्रा और इसका प्रतिमाशास्त्रीय स्वरूप भी ध्यान देने योग्य है। भारतीय प्रतिमाओ (हिन्दू, बौद्ध एव जैन) की तीन मुद्राये मिलती है – स्थानक, आसन और शयन। महापरिनिर्वाण प्रतिमा शयन मुद्रा मे है। शयन मूर्तियॉ अधिकाश हिन्दू परम्परा विशेषत वैष्णव धारा की रही है। इस मुद्रा वाली शाक्त और शैव मूर्तियॉ भी कुछ मिली है। डा0जे0 एन0 बनर्जी का यह कथन समीचीन है कि शयन परम्परा मे विष्णु की शेषशयन मूर्ति और बुद्ध की महापरिनिर्वाण मूर्ति की तुलना की जा सकती है[3]। अन्तत यही कहना अभिष्ट होगा कि यह प्रतिमा युग–युगो तक अखिल जगत को सद्धर्म का सदेश देने वाली है।

मलवे की सफाई के पश्चात् कार्लाइल को निर्वाण मन्दिर का पता चला। मन्दिर की दीवाल की मोटाई 3 05 मीटर और गर्भगृह की लम्बाई चौडाई 9 35×3 66 मीटर थी। प्रवेश कक्ष की लम्बाई 10 92 मीटर तथा चौडाई 4 57 मीटर थी। सफाई के समय कार्लाइ्ल को अल्प मात्रा मे चौरस ईटे और टेढी दीवाल के अवशेष मिले थे, जिसके आधार पर कार्लाइल ने यह मत व्यक्त किया था कि इस मन्दिर की छत मेहराब गुम्बद से युक्त थी। इसका प्रवेश द्वार पश्चिम की ओर था। उत्तर और दक्षिण की दीवालो मे एक–एक खिडकियॉ थी। यहॉ यह उल्लेखनीय है कि मूर्ति की दृष्टि से इस मन्दिर का गर्भगृह छोटा है और प्रदक्षिणा के लिए पर्याप्त स्थान नही है। इसमे कोई सन्देह नही है कि परिनिर्वाण प्रतिमा की स्थापना 5 वी शताब्दी मे हुई थी, परन्तु यह मन्दिर इतना प्राचीन नही प्रतीत होता। मूर्ति पर प्रयुक्त परवर्ती प्लास्टर इस बात का सूचक है कि यह मन्दिर कई शताब्दियो तक परिवर्तित होता रहा। उत्तरी

---

[1] देयधर्म्मोय महावीरस्वामिनो हरिबलस्य।
प्रतिमा चेय घटिता दिन्नेन माथुरेण।।

[2] यह हरिबल स्वामी सम्भवत वही है जिसने मुख्य स्तूप मे ताम्रपत्र को स्थापित किया था।

[3] बनर्जी, जे0एन0, *डेवलपमेट ऑफ हिन्दू आइक्नोग्राफी*, कलकत्ता, 1956, पुष्ठ – 274।

और दक्षिणी दीवालो के नीचे, मूर्ति से युक्त पूर्ववर्ती मन्दिर के अवशेष उस स्थान से मिले थे, जहॉ से कार्लाइल को परिनिर्वाण मन्दिर के अवशेष मिले थे।[1] लेकिन यह कहना कठिन है कि यह वही प्राचीन मन्दिर था, जिसमे परिनिर्वाण प्रतिमा सर्वप्रथम स्थापित की गयी थी और जिसका उल्लेख ह्वेनसाग ने किया था।[2] कार्लाइल द्वारा अन्वेषित इस परिनिर्वाण मन्दिर का निर्माण 11वी–12 वी शताब्दी मे हुआ होगा, जबकि कुशीनगर अवनति की ओर अग्रसर था। कार्लाइल ने इस मूर्ति की मरम्मत और मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया।[3] आधुनिक काल मे भी इसका कई बार जीर्णोद्धार होता रहा।[4] इसके वर्तमान स्वरूप का निर्माण 1956 ई0 मे हुआ था(छायाचित्र सख्या–2)।
मन्दिर के चारो तरफ विहार बने हुए थे। जिन्हे अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से कई वर्गो मे विभाजित किया जा सकता है–

पश्चिमी वर्ग

स्तूप और निर्वाण मन्दिर के चारो ओर ईटो से निर्मित कई स्थापत्य है जिनका समय समय पर एक धार्मिक मठ के रूप मे विकास होता रहा। यहॉ से दो मठो (क्यू और क्यू1) का पता चला है। यहॉ उत्खनन से बडी मात्रा मे लिपियुक्त और तिथि परक वस्तुऍ प्रकाश मे आयी है। यही से प्राप्त मिट्टी की एक मुहर पर बने दो साल वृक्षो के नीचे बुद्ध की समाधि और दो पॅक्तियो मे 'महा परिनिर्वाण भिक्षु सघ'

---

[1] देखे, फोगल, *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया* (वार्षिक रिपोर्ट) ,1904–5, पृ 48–49

[2] सेमुअल बील, *बुद्धिस्ट रिकार्डस् ऑफ दि वेस्टर्न वर्ल्ड,* भाग 3 (कलकत्ता सस्करण,1958) ,पृ 283

[3] परिनिर्वाण प्रतिमा अपनी कलात्मकता के लिए प्रसिद्ध है। इसकी विशेषता यह है कि मूर्ति को तीन और से देखने पर शान्त, बीच से देखने पर शोकसन्तप्त, तथा सिर की ओर से देखने पर प्रसन्न मुद्रा मे प्रतीत होती है।

[4] मई 1955 मे भारत सरकार द्वारा एक समिति गठित की गयी जिसका प्रमुख उददेश्य बुद्धके जीवन से सम्बधित स्थलो का पुनरूद्धार करना था। परिणामत इस स्थान पर भी आधुनिक मन्दिर का निर्माण 1956 मे हुआ।

लेख लिखा हुआ है।[1] इन लेखो की तिथि चौथी शताब्दी प्रतीत होती है। चॉदी का एक सिक्का मिला है जिसे क्षत्रप नरेश दामसेन का माना जा सकता है। इसके अतिरिक्त कुछ टूटी हुई मृण्मूर्तियॉ और बडी मात्रा मे मृद्भाण्ड भी मिले है। इन समस्त वस्तुओ का निचली सतह से मिलना यह सिद्ध करता है कि ये दोनो मठ चौथी शताब्दी के पहले निर्मित हुए होगे। उत्खनन से पश्चिम मन्दिर के सामने कई भवनो के खण्डहर (छाया चित्र सख्या–3) प्रकाश मे आए है जिनका प्रसार 107 93 मीटर लम्बाई मे था। इन्हे फलक मे–डी, एल, एम, एन, तथा ओ– से दिखाया गया है।

इन भवनो मे 45 72 मीटर वर्गाकार घेरे मे फैला सबसे बडा एक मठ (डी) था। इस मठ के चारो ओर 3 05 मीटर चौडा गलियारा बना था। इसमे भिक्षुओ के निवास के लिए छोटे–छोटे कई कमरे बने थे। कमरो और गलियारो की फर्श ककरीट की बनी थी। मठ की दीवारे बहुत बडी और मोटी थी जिससे इस मठ के कई मजिला होने का अनुमान किया जाता है। उत्खनन मे एक कुऍ से 900 ई0 की एक अभिलिखित मुहर भी मिली है जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस भवन का निर्माण 8 वी शताब्दी मे हो चुका था और विनाश 900 ई0 के आस पास हुआ।[2] ऐसा लगता है कि इस भवन निर्माण के एक शताब्दी बाद प्राचीन भवन के स्थान पर एक नए भवन का निर्माण हुआ और परवर्ती भवन के निर्माताओ ने पुराने भवन के पुरावशेषो का भरपूर उपयोग किया।

मुख्य भवन के दक्षिण एक दूसरे से सम्बधित चार अन्य भवनो के अवशेष प्रकाश मे आए है। उल्लेखनीय है कि एक दूसरे से सम्बधित होते हुए भी ये सभी भवन योजना और आकार मे परस्पर भिन्न है। मन्दिर के उत्तर पूर्व मे एक चौकोर बिहार (एल) था। इस विहार के बीच मे ऑगन मे एक ऐसा मठ मिला है जिसके ऑगन मे एक तालाब था। इन दोनो विहारो की खुदाई से गुप्तकाल (चौथी–पाचवी शताब्दी) की लिखित मुहरे, धातु, पाषाण पात्र एव अन्य उपयोगी वस्तुऍ मिली है।

---

[1] *आकियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया* (वार्षिक रिपोर्ट) ,1906–7, पृ 63

[2] *आकियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया* (वार्षिक रिपोर्ट) ,1905–6,

एक अन्य विहार का भी अवशेष मिला है, जिसे फलक पर (एन) से अभिहित किया गया है। विहार का केन्द्रीय भाग आयताकार और उसकी दीवारे नीची थी। पूर्व मे एक समान दूरी पर गडढे निर्मित थे। ऐसी म्भवना है कि इन गडढो मे लकडी के खम्भे रहे होगे, जिनके सहारे लकडी की छत टिकी रही होगी। इन्हे स्तम्भ–गर्त कह सकते है। सम्भवत इस भवन का उपयोग विचार–विमर्श के निमित्त सभा– भवन के रूप मे किया जाता था। इस विहार के नीचे अन्य अवशेष विद्यमान थे, परन्तु यह स्पष्ट नही है कि ये अवशेष मूल विहार की नीव है या किसी अन्य विहार के खण्डहर। ऊपरी सतह से कुछ मृण्भाण्ड और लोहे का एक चम्मच मिला है।[1]

उपर्युक्त विहार के दक्षिण 34 53 मीटर वर्गाकार घेरे मे विस्तृत एक अन्य विहार (ओ) का अवशेष मिला है। इस विहार के बीच मे ऑगन और इसके चारो तरफ गलियारे युक्त 20 कमरे थे। यह विहार आकार मे मेजर किटोई द्वारा उत्खनित सारनाथ के विहार से पर्याप्त समानता रखता है।[2] इसकी बाहरी दीवाल की मोटाई 5 फुट तथा ऑगन के चारो तरफ के दीवाल की मोटाई 4 फुट 2 इच है। इस विहार मे प्रयुक्त ईटो की माप 14 इच×8 5 इच से 9 इच×2 इच–2 5 इच है।

उत्खनन करने पर इन विहारो से बडी मात्रा मे मुहरे तथा चद्रगुप्त द्वितीय (400 ई0) का एक सोने का सिक्का मिला है। इसके अतिरिक्त एक कमरे से कुषाण काल (प्रथम शताब्दी ई0) का एक अभिलेख भी प्राप्त हुआ है। ऑगन की खुदाई से मथुरा मे निर्मित लाल पत्थर की कुछ मूर्तियॉ मिली है।[3] अत यह निश्चित

---

[1] *आकियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया* (वार्षिक रिपोर्ट) ,1906–7, पृ 44

[2] *ए एस आई आर*, भाग–1 पृ 127, प्लेट 32

[3] *आकियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया* (वार्षिक रिपोर्ट) ,1906–7, पृ 50, उल्लेखनीय है कि लाल पत्थर की मूर्तियो का प्रचलन उस समय मथुरा मे था तथा इन मूर्तियो की माग सर्वत्र रहती थी। अत सम्भव है यही से लाकर इन मूर्तियो को यहा स्थापित किया गया होगा।

होता है कि इस वर्ग के सभी विहारों का निर्माण प्रथम शताब्दी में और इनका विनाश 5 वीं–6 वीं शताब्दी अर्थात गुप्त काल में हुआ।[1]

दक्षिणी वर्ग

इस वर्ग के स्मारकों में अधिकांश छोटे–छोटे स्तूप थे जिनकी स्थापना श्रद्धालु भक्तों एवं तीर्थयात्रियों द्वारा की गयी थी। ये स्मारक दक्षिण ओर से एक निश्चित लम्बाई की दीवाल से आवृत्त थे। स्मारकों के मध्य में दो ऐसे स्तूप थे जिनमें प्रयुक्त ईटें अनिश्चित आकार की थी और नीचे की कार्निसेज और अलंकृत स्तम्भ मुख्य स्तूप के समान थे। इससे यह स्पष्ट होता है कि इसका निर्माण मुख्य स्तूप के साथ ही हुआ होगा।

इसके उत्तर एक आयताकार विहार (एफ) था जिसका अधिष्ठान मुख्य स्तूप के समान था। इसके भीतर ईंट की कब्रनुमा एक ठोस संरचना थी। यह निर्माण पूर्ववर्ती प्रतीत होता है, क्योकि इसकी नींव एक पंक्ति में नहीं है। पश्चिमाभिमुख इसका प्रवेश द्वार 1.57 मीटर चौड़ा था। इसके दोनों किनारों पर बुद्ध की ध्यानावस्थित मृण्मूर्ति स्थापित थी।

पूर्वी भाग

पूर्वी वर्ग के अवशेषों में सबसे रोचक तथा महत्वपूर्ण अवशेष था, एक चबूतरेनुमा बड़ा स्थापत्य। यह संरचना पक्की ईटों की बनी थी तथा मुख्य संरचना के तिरछे थी। इसे फलक पर 'सी' नाम दिया गया है। यह दो चबूतरों से युक्त था। निचला चबूतरा चौकोर और सीढ़ियों से युक्त था। ऊपरी चबूतरा अपेक्षाकृत छोटा था और उसके चारो तरफ 3.66 मीटर ईटों का बना एक प्रदक्षिणा–पथ था। यह प्रदक्षिणा पथ चारों तरफ समान नहीं है। क्योंकि दोनो चबूतरे एक दूसरे के समानान्तर नहीं थे। निचले चबूतरे की दीवालें सादी थी, जबकि ऊपरी चबूतरे में अलंकृत साँचे में ढली

---

[1] उल्लेखनीय है कि हूणों ने 5 वीं और 6 वीं शताब्दी में गुप्तों को आक्रांत किया था। सम्भव है कि यह विनाश उन्हीं के द्वारा हुआ हो।

ईटो एव कार्निसेज का प्रयोग किया गया था। यह (7 वी शती मे) निर्मित स्तूपो से घिरा हुआ था।

2 54×2 52 मीटर परिधि मे विस्तृत इस चबूतरे–युक्त भवन के उत्तर–पश्चिम एक छोटे भवन 'एच' का अवशेष मिला है। इस भवन मे प्रयुक्त बडे आकार की ईटो की माप 48 26×25 4×7 62 सेमी0 और 46 20×25 4×6 98 सेमी0 थी। इस प्रकार की ईटे मौर्यकाल मे प्रयुक्त होती थी। अत यह भवन मौर्यकाल का प्रतीत होता है। यहाँ से कुषाणो के ताँबे के सिक्के मिले है। इन कुषाण सिक्को मे 8 कनिष्क के और 4 कैडफिसेस द्वितीय के है। इसके आसपास परन्तु नीचे दबे पडे अनेक छोटे स्तूप मिले है जिसके आधार पर इन स्तूपो के भवन से पूर्व के होने का अनुमान किया जाता है।

उत्तरी वर्ग

इस वर्ग के बने भवन मौर्यकालीन थे जो समय समय पर श्रद्धालू तीर्थयात्रियो द्वारा बनवाये गए थे। निचली सतह से दो चौकोर मकानो के अवशेष मिले है।[1] पश्चिम की ओर दीवालो मे प्रयुक्त ईटे मौर्ययुगीन प्रतीत होती है। सतह से नीचे खोदने पर एक पकाई मिट्टी की पहली शताब्दी ई0 पू0 की नारी प्रतिमा और 5 वी शताब्दी का एक खण्डित प्रस्तर–अभिलेख मिला है। इनके उत्तर मे दो अन्य भवनो के अवशेष मिले है जिन्हे क्रमश 'आई' तथा 'जे' कहा गया है। 'आई' भवन आयताकार है जो 103 फुट लम्बा और 97 फुट चौडा है। इसमे चारो ओर कमरे बने थे और बीच मे 67' 7''×66' 6' नाप का खाली स्थान था जिसमे 44 फुट चौकोर और 2 फुट गहरा जलकुण्ड बना था। यह जलकुण्ड 2 फुट चौडी दीवाल से आवृत था जिसके ऊपर 1 फुट 2 इच चौडी नीची दीवाल उठी हुई थी । इस दीवाल के ऊपरी भाग से बडी आकार की ईटे मिली है जिनकी माप 16 इच×10 इच×2 5 इच थी।[2] ऐसा आभास

---

[1] सम्भवत ये प्रारम्भिक मन्दिरो के अवशेष हो सकते है।

[2] *आकियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया (वार्षिक रिपोर्ट)*, 1906–7, पृ 53,

होता है कि इस दीवाल के सामने लकडी के खम्भे के सहारे बरामदा था। यह बरामदा पूर्व ओर 9 फुट 5 इच चौडा था। इसकी फर्श ककरीट की थी जो भूमि से 3 फुट नीचे थी।

इस भवन का प्रवेश कक्ष आयताकार था। यह कक्ष ईंटो से निर्मित एक चबूतरे से युक्त था। यह चबूतरा लम्बाई×चौडाई मे कमश 4 फुट 3 इच×5 फुट 6 इच विस्तृत था। इसकी ऊँचाई 9 इच थी। इसी प्रकार के एक स्थापत्य का अवशेष सारनाथ मे भी मिला था।[1]

इस भवन से सटा हुआ एक अन्य भवन (जे) भी था। पर उसकी पूर्ण खुदाई नही हो पायी है। लेकिन एक अश की खुदाई से यह निश्चित हो गया है कि यह एक कमरो से युक्त विहार था और इसमे बीच मे 30 फुट चौकोर ऑगन था।[2] इन मठो के बौद्ध विहार होने के सन्दर्भ मे सन्देह है। सम्भवत ये मठ तीर्थयात्रियो के आवास रहे होगे। इस भवन से कुछ लेखयुक्त मुहरे मिली है जो 'डी' मठ से प्राप्त मुहरो के समान है। इनमे से एक मुहर 900 ई0 की है। इससे इस मठ के परवर्ती होने की सूचना मिलती है। सम्भवत इस मठ का निर्माण 10वी–11वी शताब्दी मे कभी हुआ था।

माथा कुँवर का मन्दिर

परिनिर्वाण मन्दिर से दक्षिण–पश्चिम दिशा मे लगभग 300 मीटर की दूरी पर माथा कुँवर का मन्दिर स्थित है। इसका उत्खनन कार्लाइल ने किया था। यही बुद्ध ने निर्वाण प्राप्त किया था जिसके खण्डहरो को आजकल 'माथा कुँवर कोट' के नाम

---

[1] मेजर किटोई को सारनाथ के एक मठ मे इसी तरह के अवशेष मिले थे। इस चबूतरे पर बुद्ध की प्रतिमा रहती थी। हालाकि किटोई द्वारा उत्खनित मठ दक्षिणाभिमुख था जबकि कुशीनगर कायह मठ उत्तराभिमुख था लेकिन दोनो मठ मे यह चबूतरा दीवाल से सटा था। अत यह निश्चित होता है कि इस चबूतरे पर बुद्ध की प्रतिमा स्थापित रही होगी।

[2] *आकियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया (वार्षिक रिपोर्ट)* ,1906–7, पृ 54।

से जाना जाता है।[1] इस मन्दिर मे भूमि स्पर्श मुद्रा मे बुद्ध की 3 05 मीटर ऊँची विशाल प्रतिमा स्थापित है (छायाचित्र स0–4)। यह गया के काले पत्थर से निर्मित थी। इस मूर्ति के पादपीठिका पर 11वी शताब्दी का एक लेख है। लेख के अनुसार मूर्ति तथा मन्दिर की रचना ग्यारहवी–बारहवी शताब्दी मे किसी स्थानीय कलचुरि नरेश के समय मे हुई थी। कालान्तर मे 1875 ई0 मे कार्लाइल ने इस मन्दिर का उत्खनन कराया।[2] पुन 1911 की खुदाई मे इसका प्राचीन सिहासन भी मिल गया। इस मूर्ति की मरम्मत कराने के बाद उसे पुन पुराने स्थान पर स्थापित कर दिया गया और 1927 ई0 मे इसी स्थान पर वर्तमान मन्दिर का निर्माण किया गया। यह प्रतिमा पत्थर की एक ही शिला पर उत्कीर्ण है। पीठिका के दोनो ओर शेर अकित है तथा बीच मे उपासिकाये उत्कीर्ण है। वेदी पर उल्टे मे कमल पुष्प है जिस पर तथागत गौतम बुद्ध भूमि स्पर्श मुद्रा मे एक हाथ नीचे भूमि को छूते बैठे है। प्रतिमा प्रभामण्डल से युक्त है। इसके ऊपरी भाग पर बोधिछाया अकित है तथा अगल–बगल देवी–देवता उत्कीर्ण है जैसे– सूर्य, चन्द्र, इन्द्र, यक्ष आदि। यह प्रतिमा उच्च–भावना से प्रेरित होकर बनाई गई हैं जो कठोर निश्चय की प्रतीक प्रतीत होती है।

परवर्ती उत्खननो से अब यह प्राय निश्चित हो गया है कि उपर्युक्त मन्दिर एक स्वतत्र रचना न होकर एक बडे विहार का अग था। यह विहार 114 फुट (34 75 मीटर) चौकोर क्षेत्र मे विस्तृत था। इसमे 13 41 मीटर वर्गाकार ऑगन और 2 59 मीटर चौडे गलियारे बने थे। इस पूर्वाभिमुख विहार मे ऑगन के चारो ओर कमरे बने हुए थे। पश्चिम किनारे पर बीच मे बने एक कमरे मे उपर्युक्त मूर्ति स्थापित थी।

उत्खनन से बुद्ध के जीवन की घटनाओ से सम्बद्ध 10वी–11वी शताब्दी की मिट्टी की मुहरे मिली है। कार्लाइल को इसी काल का एक शिलापट्ट[3] भी मिला

---

[1] ए कनिघम , *दि ऐश्येण्ट ज्योग्राफी ऑफ इण्डिया,* (इण्डोलाजिकल बुक हाउस,वाराणसी, 1963) पृ 364

[2] देवला मित्रा, *बुद्धिस्ट मानुमेण्टस* , पृ 71।

[3] उद्धृत , अभिलेख , वी वी मिराशी, इन्सक्रिपशन्स ऑफ दी कलचुरि एरा',प्लेट दो, *कार्पस इन्सक्रिप्सनम् इण्डिकेरम,* भाग4 (उटकसण्ड, 1955) पृ 375 और आगे।

था जिससे इसको कलचुरि वश के किसी स्थानीय शासक (सम्भवत भीमत द्वितीय) द्वारा बनवाये जाने की पुष्टि होती है।

उत्खनन मे मुख्य स्तूप और निर्वाण मन्दिर के चारो ओर फैले अनेक सहायक मठ मिले है। इस वर्ग के चारो ओर बनी एक दीवाल से इसकी पुष्टि होती है। टूटी ईटो से निर्मित 14 56 हेक्टेयर असमान चतुर्भुज क्षेत्रफल मे विस्तृत यह दीवाल पूर्णत भूमि के अदर छिपी हुई थी। इसकी प्रत्येक भुजा 381 मीटर लम्बी थी।[1]

आधुनिक युग मे माथा कुँवर नाम से एक नवीन मन्दिर का निर्माण हुआ। इस समय अन्य प्राचीन अवशेषो के अतिरिक्त यह मन्दिर तथा स्तूप ही कुशीनगर के मुख्य दर्शनीय स्थल है। 1956 ई0 मे भगवान बुद्ध की 2500वी जयन्ती के अवसर पर कार्लाइल द्वारा निर्मित परिनिर्वाण मन्दिर को तोडकर विस्तृत और भव्य नए मन्दिर का निर्माण किया गया।

रामाभार का टीला

कुशीनगर–देवरिया मार्ग पर माथा कुँवर मन्दिर से 1 61 किमी0 की दूरी पर रामाभार नाम से प्रसिद्ध एक टीला है जिसे वर्तमान मे रामाभार स्तूप के नाम से जाना जाता है (छायाचित्र स0–5)। इसी के पास रामाभार झील या ताल भी स्थित है। सम्भव है इस टीले का नामकरण उक्त झील के नाम पर ही किया गया हो। इस स्थान पर मल्लो की अभिषेकशाला थी और वही पर बुद्ध का अन्तिम सस्कार किया गया था। इसे उस समय मुकुटबन्धन चैत्य के नाम से जाना जाता था।[2]

कनिघम के प्रथम सर्वेक्षण के समय रामाभार 'भवानी की मठिया' बन चुकी थी। समस्त भूभाग वनाच्छादित एव दुर्गम्य था। निकटवर्ती ग्रामवासियो द्वारा इन टीलो की ईटे निकाल लिए जाने के कारण यह मात्र खण्डहर के रूप मे अवशिष्ट था।

---

[1] स्मरणीय है कि इस विहार का निर्माण परवर्ती होने के कारण इनसे भी निश्चित होताहै कि चीनी यात्रियो के यात्रा विवरणो मे इसका कोई उल्लेख नही मिलता।

[2] *दीधनिकाय,* भाग दो, पृ 141, 161 चीनी यात्री हेनसाग ने भी इसका उल्लेख किया है। देखे, सेमुअल बील, *बुद्धिस्ट रिकार्डस् ऑफ दि वेस्टर्न वर्ल्ड,* भाग–3, पृ 287।

प्रथम बार इसकी खुदाई एक राजकीय कर्मचारी ने कराई थी।[1] उत्खनन का द्वितीय चरण 1910 ई0 मे हीरानन्द शास्त्री के निर्देशन मे प्रारम्भ हुआ जिससे इसके वास्तविक स्वरूप का पता चला। 115 फुट व्यास मे इसकी नीव थी और ऊपर 112 फुट व्यास का स्तूप बना था।[2] शास्त्री जी को 1 52 मीटर नीचे खोदने पर ईटो की एक दीवाल का पता चला। परन्तु इस भवन की तिथि के बारे मे कुछ कह पाना आज सम्भव नही है।

श्री हीरानन्द शास्त्री को टीले के पूर्वी भाग के उत्खनन से एक बडे स्तूप का अवशेष मिला था। उत्खनन से प्राप्त मौर्यकालीन ईटे इस स्तूप की प्राचीनता की परिचायक है। स्मरणीय है कि यह स्तूप भी कई बार बनाया गया। स्तूप के अवशिष्ट भाग से यह स्पष्ट होता है कि मुकुट बन्धन स्तूप शालवन के परिनिर्वाण स्तूप से अधिक विस्तृत था। इस स्तूप के चारो ओर अन्य छोटे स्तूप, मन्दिर तथा विहारो के अवशेष मिले है।

मुख्य स्तूप की भॉति यह चैत्य भी अपनी पवित्रता के लिए प्रसिद्ध था। सभवत इसीलिए इस चैत्य के चारो ओर सहायक स्मारक बने हुए थे।

कुशीनगर से प्राप्त वस्तुएँ

यहा के खण्डहरो से प्राप्त बडी मात्रा मे पत्थर, मिट्टी और धातु की मूर्तियॉ, सिक्के, मुहरे, विभिन्न प्रकार के पात्र, चित्रित प्रस्तर खण्ड, काष्ठ स्तम्भ, नक्काशीदार ईटे आदि प्राचीन कुशीनगर के महत्व के परिचायक है। यहॉ से प्राप्त मूर्तियो मे अधिकाश मिट्टी तथा पाषाण की बनी हुई है। विभिन्न मूर्तियो मे बुद्ध तथा बोधिसत्व की प्रतिमाएँ प्रमुख है। एक मूर्ति माया देवी की और एक सारिपुत्र की है। इसके अतिरिक्त पौराणिक देवताओ, विष्णु, गरूड, और गणेश आदि की भी प्रतिमाएँ मिली है लेकिन इनकी सख्या अपेक्षाकृत कम है। इन मूर्तियो मे सर्वाधिक महत्वपूर्ण

---

[1] *ए एस आई आर*,भाग–18 पृ 75, इन्होने उल्लेख किया है कि इस उत्खनन मे मृण्मूर्तियो के अलावा कुछ नही मिला था।

[2] देवला मित्रा, *बुद्धिस्ट मानुमेण्टस* (कलकत्ता, 1917), पृ 71।

बुद्ध की परिनिर्वाण प्रतिमा है। इसके अतिरिक्त श्याम रग की प्रस्तर प्रतिमा भी मिली है जिसे अब 'माथा कुँवर' के नाम से जाना जाता है। यहा से प्राप्त मूर्तियो मे कुछ लाल पत्थर की बनी है। सम्भवत ये मूर्तियाँ मथुरा से लाकर यहाँ स्थापित की गई थी।

धातु तथा पाषाण के कुछ पात्र एव अन्य उपयोगी वस्तुएँ भी मिली है। परिनिर्वाण स्तूप से स्वर्ण, रजत, तथा ताम्र नलिकाएँ भी मिली है। जिसमे धातु खण्ड रखे गए थे। प्राप्त धातु पात्रो मे लोटा, चम्मच, घण्टा, धूपदान आदि का मुख्य रूप से उल्लेख किया जा सकता है। एक 2 15 सेमी0 लम्बा चम्मच मिला है।[1] एक लोहे की कुल्हाडी भी मिली है। पत्थर की बनी वस्तुओ मे चक्की तथा तश्तरी मुख्य है। मिट्टी की बनी हुई वस्तुओ की सख्या सर्वाधिक है। इनमे विभिन्न प्रकार के बर्तन (मनुष्य और पशु आकृतियो से चित्रित), दीपक, मिट्टी की गोलियाँ तथा मकराकृति वाला धूपदान उल्लेखनीय है।[2]

कुशीनगर से 995 मिट्टी की मुहरे भी मिली है। इनमे 314 अखण्डित तथा 581 खण्डित है। इनमे से अधिकाश मुहरे प्रमुख सघो की है। अन्य मुहरो का सम्बध एरण्ड, विष्णुद्वीप तथा सारनाथ के विहारो से है। महापरिनिर्वाण तथा मुकुटबधन विहारो की प्रारम्भिक मुद्राओ पर भिन्न भिन्न लेख तथा चित्र अकित है । इन मुहरो मे 250 मुहरे 720 ई0 की और 540 मुहरे 900 ई0 की है। इसके अतिरिक्त एक मुहर, जिस पर बुद्ध को दो साल वृक्षो के नीचे परिनिर्वाणावस्था मे प्रदर्शित किया गया है, 400 ई0 की है।[3] इन विहारो से प्राप्त परवर्ती मुहरे जिस पर धर्मचक्र एव हिरण के चिह्न अलकृत है, सारनाथ से प्राप्त मुहरो से समानता लिए है। वस्तुत यह सारनाथ का चिह्न था जिसे कालान्तर मे अन्य सघारामो ने भी अपना लिया। एक अन्य मुहर पर

---

[1] *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया* (वार्षिक रिपोर्ट) ,1906–7, पृ0 55।

[2] नलिनाथ दत्त और कृष्णदत्त बाजपेयी, *डेवलपमेट ऑफ बुद्धिज्म इन उत्तर प्रदेश* (पब्लिकेशन ब्यूरो, लखनऊ, 1956), प्रथम सस्करण, पृ 364।

[3] *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ् इण्डिया,* वार्षिक रिपोर्ट, 1906–7, पृ0 58।

'आर्याष्ट वुव्हे' नामक लेख अकित है। सम्भवत यह उन आठ स्तूपो की तरफ सकेत करता है जिनमे बुद्ध के अस्थि अवशेष समाधिस्थ किए गए थे।[1]

कुशीनगर के अवशेषो मे कुछ सिक्के भी उपलब्ध हुए है, परन्तु इनकी सख्या अपेक्षाकृत कम है। पूर्ववर्ती सिक्को मे कुषाण शासक विम कडफिसेस के चार और कनिष्क प्रथम के आठ तॉबे के सिक्के मिले है। चद्रगुप्त द्वितीय (400 ई0) का एक स्वर्ण सिक्का[2] क्षत्रप नरेश दामसेन और कुमारगुप्त प्रथम (मोर प्रकार) के रजत और जयगुप्त के तॉबे के सिक्को का उल्लेख प्रमुख रूप से किया जा सकता है। सिक्को की अपेक्षा अभिलेखो की सख्या अधिक है। यद्यपि इन लेखो मे तिथि–सवत् तो अकित नही है, लेकिन लिपि वैभिन्य के आधार पर इन्हे विभिन्न कालो का माना जा सकता है। ये लेख मुद्राओ, मृण्मूर्तियो और ताम्रपत्रो पर अकित है। बुद्ध के परिनिर्वाण प्रतिमा के लेख का वर्णन ऊपर किया जा चुका है। इस प्रतिमा के निर्माता शिल्पी दिन्न का नाम एक अन्य मूर्ति के पादपीठ पर अकित है। इसमे प्रतिमा का प्रतिष्ठापक सुवीर था।[3] जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि ये मूर्तियॉ मथुरा शिल्प से समानता लिए हुए है।

यहॉ से प्राप्त अन्य वस्तुओ मे कीमती पत्थर (मूगा, मोती, माणिक, पन्ना) मनके, कौडियॉ तथा हाथी दॉत की मुहरे भी है, लेकिन इनकी सख्या अत्यल्प है। इस नगर के लम्बे इतिहास एव महत्व को देखते हुए यहॉ से प्राप्त पुरातात्विक सामग्री अत्यत कम है। सम्भवत इसका मुख्य कारण यह है कि कुशीनगर के बौद्ध अवशेष किसी दुर्घटना के कारण आकस्मिक विनाश को नही प्राप्त हुए, बल्कि उनका धीरे–धीरे

---

[1] *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ् इण्डिया,* वार्षिक रिपोर्ट, 1906–7, पृ0 90य देबला मित्रा, *बुद्धिस्ट् मानुमेण्ट्स,* पादटिप्पणी, पृ 69।

[2] यह सिक्का धनुर्धारी प्रकार का है जिसका वजन 120 5 ग्रेन है। देखे, बी0 ए0 स्मिथ, जे आर ए सी (1889), पृ0 80 और 1893, पृ0 104।

[3] लेख इस प्रकार है – 'देयधर्मोय शाक्यभिक्षोभदन्त सुवीरस्य कृतिर्दिनस्य' देखे, आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ् इण्डिया, 1906–7, पृ0 49 यनलिनाक्ष दत्त एव कृष्णदत्त बाजपेयी, *डेवलपमेण्ट् ऑफ बुद्धिज्म इन उत्तरप्रदेश,* पृ 366।

विनाश हुआ और इस प्रकिया मे यहा जो भी महत्वपूर्ण पुरावस्तुएँ रही वे अन्य लोगो द्वारा पहले ही हटा ली गयी और कालान्तर मे यहाँ के अवशेष वनो से आच्छादित हो गए।[1]

कुशीनगर परिक्षेत्र से प्राप्त कुछ कलाकृतियाँ राजकीय बौद्ध सग्रहालय, कुशीनगर मे सुरक्षित है। इनमे से कुषाणकालीन तीन स्तूप युक्त मिट्टी की मोहर (छायाचित्र सख्या–6), डिजाइनदार ठप्पा (छायाचित्र सख्या–7), ध्यानी बुद्ध से अकित मुहर (छायाचित्र सख्या–8), तीन ईटो से निर्मित ध्यानी उपासक (छायाचित्र सख्या–9), काले पत्थर की सिररहित भूमि स्पर्श मुद्रा मे बुद्ध की प्रतिमा (छाया चित्र सख्या–10), हस्ति एव अश्व की मृण मूर्ति (छाया चित्र सख्या–11) तथा हारीति की मृण मूर्ति (छायाचित्र सख्या–12) प्रमुख है।

हारीती प्रधानतया बौद्ध देवी है, यद्यपि हिन्दू ग्रथो मे षष्ठी या भद्रा के रूप मे प्रतिष्ठित है। हारीती से सम्बन्धित कथानक रत्नकूट मे मिलता है। यक्षी के रूप मे जन्म लेने से पूर्व वह राजगृह मे एक चरवाहे की पत्नी थी। एक बार गर्भावस्था के समय उसे बलपूर्वक एक उत्सव मे नृत्य करने को कहा गया जिससे उसका गर्भपात हो गया। फलत उसने ये प्रतिज्ञा ली कि वह राजगृह के समस्त बच्चो का भक्षण करेगी।

विनयपिटक (सर्वास्तिवाद शाखा) के चीनी अनुवाद के अनुसार उसने राजगृह मे हुआशी (सस्कृत नन्दा या नन्दिनी) के नाम से पुनर्जन्म लिया तथा 500 बच्चो की माँ बनी। किन्तु पूर्वजन्म मे ली गई प्रतिज्ञा के अनुसार उसने राजगृह के बच्चो को चुराना एव खाना प्रारम्भ किया। बच्चो को हरण करने, चुराने के कारण उसका नाम ष्हारीतीष पडा। राजगृह के निवासी भगवान बुद्ध की शरण मे गये। भगवान बुद्ध ने उसके सबसे छोटे सर्वप्रिय पुत्र जिसका नाम सयुक्तरत्न सूत्र मे पिगल तथा क्षेमेन्द्र कृत बोधिसत्वावदानकल्पलता मे प्रियकर मिलता है, को छिपा दिया। हारीती

[1] *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया,* (वार्षिक रिपोर्ट), 1904–5, पृ 45 य तत्रैव, 1910–11, पृ0 68–69।

अपने शिशु को ढूँढती हुई बुद्ध के पास गयी। बुद्ध ने उसे अहिसा एव प्रेम की शिक्षा दी। इससे प्रभावित होकर हारीती बच्चो से प्रेम करने लगी। अब वह बौद्ध धर्म के सॉचे मे ढलकर वह शिवात्मक बन गई और मगध से गधार तक बच्चो की रक्षक देवी के रूप मे वह सर्वत्र फैल गयी। इसी कथानक के आधार को लेकर चीनी यात्री ईत्सिग ने हारीती की प्रतिमा राजगृह के भोजनालय तथा मठ मे देखी थी, ऐसा वर्णन मिलता है। कौशाम्बी, मथुरा, सॉची एव अमरावती से हारीती की अतीव सुन्दर मूर्तियॉ उपलब्ध हुई है।

कुशीनगर के कुछ दुर्लभ कलाकृतियो की छाया प्रति भिक्षु बुद्धमित्र जो वहॉ के स्थानीय निवासी है, से प्राप्त हुई है इनमे महापरिनिर्वाण विहार अभिलिखित मुहर जिसमे दो हिरणो के बीच धम्म चक अकित है (छायाचित्र सख्या–13), मुकुट बन्धन विहार अभिलिखित मुॅहर जिसमे शीर्ष पर बुद्ध की चिता को जलते हुए तथा बीच मे महाकश्यप को प्रार्थना करते हुए दिखाया गया है (छायाचित्र सख्या–14), तथा एक मृण्मूर्ति फलक जिसमे दासियो को देवी की सेवा करते दिखाया गया है (छायाचित्र सख्या–15) प्रमुख है।

कुशीनगर जनपद की कुछ कलाकृतियॉ उत्तर प्रदेश राज्य सग्रहालय, लखनऊ मे सुरक्षित है जिसमे मिट्टी के एक फलक पर बुद्ध के जन्म का दृश्य अत्यन्त मनोहारी है जो गुप्तकाल से सम्बन्धित है (छायाचित्र सख्या–16)।

2 फाजिलगर–सठियाव[1]

कसया से दक्षिण पूर्व 18 किमी0 पूर्व कसया तमकुही मार्ग के किनारे स्थित फाजिलनगर–सठियॉव के टीले उन्नीसवी शती से पुरातत्वज्ञो एव इतिहासकारो

---

[1] फाजिलनगर सठियॅाव के उत्खनन तथा उनसे प्राप्त पुरा सामग्रियो की समस्त जानकारी–*हिस्ट्री एड अर्कियोलॉजी,* 1980, डिपार्टमेट ऑफ ऐश्येण्ट हिस्ट्री कल्चर एड आर्कियोलाजी, इलाहाबाद युनिवर्सिटी, वाल्यूम 1, न0 1–2, पृ0 333–37, *पूर्वान्चल की पुरा सम्पदा,* उत्तर प्रदेश राज्य, पुरातत्व सगठन, लखनऊ, 1979 (पुरातात्विक सामग्रियो पर कुशीनगर मे आयोजित प्रदर्शनी के अवसर पर प्रकाशित पत्र), *फाजिलनगर –सठियॉव, उत्खनन (सक्षिप्त परिचय)* प्राचीन इतिहास पुरातत्व एव संस्कृति विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर पर आधारित है।

को आकृष्ट करते रहे है। जैन तथा बौद्ध वाग्मय के साक्ष्यो से पूर्णया ज्ञात है कि 'पावा' महावीर और बुद्ध दोनो से ही सम्बद्ध रही है। बौद्ध ग्रन्थ परिनिर्वाण सूत्र मे लिखा है कि अपने निर्वाण के पूर्व वर्तमान वैशाली जिले के बसाढ (विहार) से कुशीनगर आते समय भगवन बुद्ध का अतिम पडाव पावा मे हुआ था और यहॉ चुन्द कर्मारपुत्र के यहॉ उन्होने अतिम भोजन किया था।[1] चौबीसवे तीर्थकर भगवान महावीर का निर्वाण मल्लो की राजधानी पावा मे ही हुआ था।[2] अपनी गणतात्रिक प्रशासनिक पद्धति, कला सस्कृति एव आर्थिक समृद्धि की दृष्टि से भारतीय इतिहास एव सस्कृति मे पावा का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। पावा की प्राचीनता, भौगोलिक स्थिति तथा महावीर के निर्वाण भूमि आदि के विषय मे अद्यावधि इतिहासकार एव पुरातत्वविद् सर्वसमत निर्णय पर नही पहुँच सके है। प्राचीन भारत के षोड्श महाजनपदो मे मल्ल महाजनपद की दो राजधानियॉ कुशीनगर एव पावा का साहित्यिक विवरण प्राप्त होते है।[3] कुशीनगर का अभिज्ञान पुरातत्वविदो के द्वारा कर ली गई है। किन्तु पावा के पुरातात्विक अभिज्ञान की समस्या का समाधान शेष है।

सर्वप्रथम ए0 सी0 एल0 कार्लाइल ने 1876 ई0 मे फाजिलनगर–सठियॉव के टीले के साथ–साथ दूसरे समीपवर्ती प्राचीन स्थलो का निरीक्षण किया तथा वे इस निष्कर्ष पर पहुचे कि फाजिलनगर–सठियॉव के टीले ही प्राचीन पावा के अवशेष है।[4] डा0 राजबली पाण्डेय[5] विमल चरणलाहा, भिक्षु धर्मरक्षित[6], प्रो0 योगेन्द्र मिश्र[7], विजयेन्द्र सूरी आदि इतिहासकारो ने इसका समर्थन किया है। यद्यपि कि बौद्ध ग्रन्थो मे उल्लिखित कुशीनगर से पावा की दूरी और दिशा से कार्लाइल के मत की पुष्टि अवश्य

---

[1] *महापरिनिब्बानसुत्त* ।

[2] भद्रबाहु, *कल्पसूत्र,* सूत्र सख्या 121,122,123।

[3] *अगुतर निकाय,* भाग 1, पृ0 213।

[4] कार्लाइल, ए0 सी0 एल0, *ए0 एस0 आई0 आर0,* 1877–78–79–80 वालयूम 22, पृ0 30–31,वाराणसी, 1966।

[5] पाण्डेय, राजबली, *गोरखपुर जनपद और उसकी क्षत्रिय जातियो का इतिहास,* 1946, पृ0 78।

[6] भिक्षु धर्मरक्षित, *कुशीनगर का इतिहास,* पृ0 24–26।

[7] मिश्र, योगेन्द्र, *प्राचीन पावा,* पृ0 17,45, गोरखपुर 1973।

होती है परन्तु इस सम्बध मे अतिम निर्णय हेतु पुरातात्विक साक्ष्यो का अन्वेषण आवश्यक है। इसी उद्देश्य से फाजिलनगर–सठियॉव के टीले मे दबे अवशेषो का ज्ञान प्राप्त करने के लिए वर्ष 1979–80 मे उत्तर प्रदेश राज्य पुरातत्व सगठन तथा गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग के सयुक्त तत्वाधान मे फाजिलनगर–सठियॉव का उत्खनन किया गया।[1]

कार्लाइल के मतानुसार सठियॉव का टीला पावा के एक नगर को सूचित करता है, जबकि फाजिलनगर जो इससे उत्तर पूर्व मे अधिकतम आधा किमी0 की दूरी पर स्थित है स्तूप का स्थल था, जो मल्लो द्वारा बुद्ध के अस्थि अवशेष के एक भाग पर बनवाया गया था।[2] सठियॉव टीले के थोडे से दक्षिणी–पूर्वी भाग को छोडकर शेष सम्पूर्ण भाग पर गॉव बसा है। गॉव के चतुर्दिक बडी सख्या मे वलय कूप है। गॉव के सम्पूर्ण धरातल पर पक्की ईटो की दीवरे मिलती है। गॉव के चतुर्दिक नीची भूमि सूचित करती है कि यह स्थल चारो ओर से तालाब से घिरा हुआ था। वर्तमान मे दो बारहमासी बडे तालाब अस्तित्व मे है। एक उत्तर–पश्चिम तथा दूसरा दक्षिण मे है।

फाजिलनगर का टीला सभवत प्राचीन सठियॉव के स्थल का एक भाग है। टीले की ऊँचाई घिरे हुए सतह से लगभग 9 मीटर तथा पूरब पश्चिम एव उत्तर दक्षिण दिशा मे प्रसार कमश 120 मीटर एव 80 मैटर है। वस्तुत यहॉ एक दूसरे से जुडे दो टीले स्थित है जिनमे से एक नीचा और दूसरा ऊँचा है। उत्तर पूर्व मे स्थित नीचले टीले पर एक मजार निर्मित है, जिसे लोग 'सइदन' बाबा का मजार कहते है। दूसरा ऊँचा टीला पश्चिम मे स्थित है। प्रकृति और मनुष्य दोनो के हाथो इसका क्षरण हो रहा है। टीले से मिट्टी खोदने के अतिरिक्त इसका उपयोग खलिहान के रूप मे किया जा रहा है। टीले का उत्तरी भाग प्रतिवर्ष खलिहान बनाने के लिए काटा जाता

---

[1] चतुर्वेदी, एस0 एन0, *एक्सकेवेशन एट सठियाव फाजिलनगर, डिस्ट्रिक्ट देवरिया (सम्प्रति कुशीनगर) हिस्ट्री एड आर्कियोलाजी,* 1980, वाल्यूम 1, न0 1–2 पृ0 333–337।

[2] कार्लाइल, ए0 सी0 एल0, *आर्कियोलाजी सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट,* 1875–76 एड 76–77, वाल्यूम 18, पृ0 102।

है। पश्चिमी भाग मिट्टी निकाले जाने के कारण सीधी दीवार की तरह खडा है। दक्षिणी भाग आवास गृहो के नीचे दब गया है। वर्षा का जल दूसरे किनारो को काटता रहा है, किन्तु अभी इसका मुख्य भाग सुरक्षित है। सम्पूर्ण टीला ईटो से पटा है जिसके ऊपर घास उग आए है।

सठियॉव

उत्खनन मुख्यत फाजिलनगर टीले का ही किया गया, साथ ही सास्कृतिक रूप के अध्ययन हेतु सठियॉव ग्राम मे एक खाद के गढे की सफाई भी की गयी। इसमे मौर्य युग की पक्की ईटो से निर्मित दीवारो के अवशेष प्रकाश मे आए है। ईटो की माप 40×26×6 सेमी0 थी। इस गढे के स्तरो मे लाल रग के बर्तन, कृष्ण लेपित, मृदभाण्ड के कुछ टुकडे तथा उत्तरीकाले चमकदार पालिश वाले मृदभाण्ड (एन0 बी0 पी0 वेयर) के अवशेष भी प्राप्त हुए। इतना ही नही सठियॉव से प्राप्त काले और लाल रग के मृदभाण्डो (ब्लैक एड रेड वेयर) के टुकडो से यह स्पष्ट हो जाता है कि मौर्य काल से पूर्व भी यहॉ आबादी थी। यहॉ से प्राप्त अन्य पुरावशेषो मे मिट्टी की एक मूर्ति (छायाचित्र सख्या–17), मनके, एक टूटी, हुई सीलिग, तथा कुछ लौह वस्तुऍ शामिल है। नारी के धड के ऊपर का हिस्सा ही अवशेष बचा है मृण्मूर्ति अत्यत मनमोहक है । केश राशि तथा भौहो को उत्कीर्ण करके सजाया गया है। सभी पुरासामग्रियॉ गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एव सस्कृति विभाग के सग्रहालय मे सुरक्षित है।

फाजिलनगर

फाजिलनगर के ऊॅचे टीले के शीर्ष भाग तथा उसके उत्तरी ढाल के उत्खनन मे धरातल से कुछ ही सेमी नीचे अनेक प्राचीन वास्तु–अवशेष की सरचनाए प्रकाश मे आयी है। सीमित उत्खनन के कारण भवन सरचना की पूर्ण रूपेण योजना स्पष्ट नही हो सकी है तथापि सरचनाओ को दो कालो मे बॉटा जा सकता है जिनमे प्रासगिक सरचनाऍ गुप्तकाल से तथा बाद की सरचना मध्यकालीन है।

गुप्तकालीन सरचना एव उनसे प्राप्त पुरावशेष

टीले के उत्खनन से विदित होता है कि प्राय 1500 वर्ष पूर्व यहा लगभग 4 मीटर ऊँचा बालू का टीला था जिसके उपर सर्वप्रथम गुप्तकाल मे विशेष प्रकार की बस्ती का निर्माण हुआ जिसे 'अग्रहार' कहा जाता था। इसकी पुष्टि यहा से प्राप्त एक मुहर पर अकित है, 'श्रेष्ठिग्रामाग्रहारस्य' लेख से होती है।

उत्खनन मे अग्रहार के उत्तरी सुरक्षा दीवार के खण्डित अवशेष प्राप्त हुए है जिसकी लम्बाई 40 मीटर से अधिक थी। इसके उत्तर की ओर लगभग 1 50 मीटर चौडा प्रवेश द्वार था। टीले के शीर्ष भाग पे पुर्वी किनारे उत्तर से दक्षिण एक विशाल दीवार मिली है, जिसके उपरी रद्दो मे गढी हुयी ईटो (मोल्डेड ब्रीक) का उपयोग किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह स्थल के प्रमुख गुप्त कालीन भवन की मुख्य दीवार है जो लगभग वर्गाकार था। इस भवन की पश्चिमी, उत्तरी तथा दक्षिणी दीवारो के अवशेष भी मिले है, जिनसे लगभग 1 मीटर बाहर की ओर उसे घेरती हुयी एक अन्य दीवार है। इस सरचना के उत्तर–पश्चिमी कोने पर इससे पूर्व स्थित एक भवन का स्तम्भ मात्र मिला है जिसमे गढी हुयी ईटो का प्रयोग हुआ है। स्तम्भ से सटी हुयी ईटो की सीढी पश्चिम की ओर जाती है। सीढी मे ऊपर से नीचे तक दरार है। सम्भवत भूकम्प के कारण इस बस्ती का विनाश हुआ।

उत्खनित क्षेत्र की सरचनाओ मे सर्वाधिक महत्वपूर्ण टीले के शीर्ष भाग पर एक बडे आयताकार चबूतरे का अवशेष है जिसके निचले आधार की माप 14 40 × 17 80 मीटर है। चबूतरे से अन्य आश्रित दीवारे (रिटेनिग वाल्स) भी सम्बद्ध है। चबुतरे का पूर्वी दीवार जिसकी चौडाई एक मीटर है, पूरी तरह सुरक्षित है।

टीले के उत्तरी ढाल पर गुप्त कालीन भवनो के अनेक अवशेष प्राप्त हुए है जिनमे से अधिकश क्षतिग्रस्त हो चुके है। इनमे से ढाल के पूर्वी सिरे पर स्थित एक आयाताकर सरचना विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिसकी लम्बाई उत्तर–दक्षिण दिशा मे 5 10 मीटर तथा पूर्व–पश्चिम दिशा मे 3 5 मीटर है। दीवार की चौडाई 75 सेमी है। इस सरचना की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता इसके पश्चिमी दीवार की अन्दर की ओर एक छोटा चबुतरा (90 सेमी × 65 सेमी) है। यह चारो ओर से एक दीवार से घिरा

हुआ है, जो इसके चतुर्दिक एक मार्ग बनाते है। सम्पूर्ण सरचना मदिर के आकार की प्रतीत होती है। उत्तरी ढाल के नीचले भाग मे पूर्व–पश्चिम की ओर 19 मी लम्बी ईटो की दीवार के अवशेष भी मिले है। ढाल के पश्चिमी सिरे पर दीवार से सटा हुआ ईटो का फर्श है जिस पर गुप्त कालीन मिट्टी की मुद्राए मिली है।

उत्तरी ढाल पर एक अन्य विलक्षण सरचना भी प्रकाश मे आयी है। यहॉ एक विशाल वृत्ताकार चबूतरे का अवशेष दिखाई देता है। इसके मध्य भाग मे ईटो से निर्मित वर्गाकार (2 ×2 मी0) कुड जैसी सरचना है। कुड की चारो दीवारे अन्दर की ओर उन्नत्तोदर है, जिसके कारण वे कोनो पर समकोण नही बनाती है। इसकी खुदाई 3 मीटर नीचे तक की गयी थी जिसमे राख एव मिट्टी भरी हुयी थी। वर्तमान अवस्था मे इस सरचना के प्रयोजन के विषय मे निश्चयात्मक रूप से कुछ भी कहना उचित नही होगा। सम्भव है यह यज्ञ–कुड रहा हो। इस कुडाकार सरचना मे मिट्टी के बर्तन के अतिरिक्त अनेक उल्लेखनीय पुरावशेष यथा – लोहे के उपकरण, मिट्टी एव हाथी दॉत की बनी चुडियॉ, मृण्मूर्तियॉ, मिट्टी की गोलियॉ, शीशे एव पत्थर के मनके तथा मिट्टी की मुद्राऍ एव मुद्रा छाप भी प्राप्त हुए है।

यहॉ से अधिकाश पुरा सामग्रियॉ ईटो से घिरी सरचनाओ से मिली है। थोडी बहुत उपरी सतह से भी मिली है। वे सभी गुप्त काल से सम्बन्धित है। यहॉ से प्राप्त पुरा समाग्रियो मे सर्वाधिक महत्वपूर्ण मृण्मूर्तियॉ, मुद्रा एव मुद्राछाप है।

यहॉ से बडी सख्या मे मृण्मूर्तियॉ मिली है, जिसमे पुरूष, स्त्री एव जानवरो की मूर्तियॉ शामिल है। ये सॉचे मे ढाल कर बनायी गयी है। मूर्तियॉ आकार मे छोटी है, परन्तु इनमे गुप्तकालीन शैली का सौन्दर्य पूर्ण रूप से उपस्थित है। स्त्री मूर्तियो के सुपुष्ट अग आदर्श अनुपात मे बनाये गये है। उनके शरीर पर अल्प किन्तु सुरूचि पूर्ण आभूषण है। आधिकाश मूर्तियो की बायी भुजा कटि पर स्थित है और दाहिनी भुजा लटकती हुयी दिखायी गयी है। उनकी केश सज्जा मे विविधता दिखाई पडती है (छायचित्र सख्या–18)। यहा से प्राप्त जानवर मूर्तियो मे सवार के साथ घोडे की मूर्ति का उल्लेख किया जा सकता है। घोडे को गत्यावस्था मे दिखाया गया है।

इस स्थल से मिट्टी की दश मुद्राएँ प्राप्त हुयी है। इन सभी पर पॉचवी शताब्दी ई0 की गुप्तकालीन ब्राह्मी लिपि मे लेख अकित है। एक मुहर पर 'श्रेष्ठिग्रामाग्रहाररस्य' लेख अकित है (छायाचित्र सख्या–19)। इस लेख के ठीक उपर सर्प की आकृति बनी हुयी है । सम्भवत एक ओर मुहर को निर्गत करने वाले व्यक्ति का नाम भी अकित है। इस लेख से दो महत्वपूर्ण तथ्यो पर प्रकाश पडता है। पहला यह कि पॉचवी शताब्दी ई0 मे फाजिलनगर से लगे ग्राम सठियॉव का नाम श्रेष्ठिग्राम था। दूसरा वर्तमान फाजिलनगर स्वय श्रेष्ठिग्राम के एक अग्रहार के रूप मे प्रतिष्ठित था। अग्रहार एक विशेष प्रकार का सन्निवेश था, जो राज्य की ओर से विद्वान ब्राह्मणो को उपहार स्वरूप दिया जाता था और यह कर मुक्त होता था। ये अग्रहार धीरे–धीरे शिक्षा केन्द्र के रूप मे परिणत हो गये। अत उपर्युक्त लेख से यह प्रकट होता है कि गुप्तकाल मे यह स्थल एक शिक्षा का केन्द्र बन गया था जहॉ विद्वान लोग निवास करते थे।

इस केन्द्र की महत्ता इस तथ्य से भी प्रकट होती है कि यहॉ अन्य स्थानो की मुद्राएँ भी प्राप्त हुयी है, जिनका उपयोग ताड–पत्रो को सील बन्द करने के लिए किया गया था। इनमे एक मुद्रा पर चतुर्मुख ब्राह्मा की अत्यन्त सुन्दर आकृति है जिसके नीचे 'ग्रेषूदक चातुविदय' लेख अकित है। यह मुद्रा किसी ऐसे केन्द्र से यहॉ भेजी गयी थी, जहॉ चारो वेदो का अध्ययन किया जाता था।

मध्यकालीन सरचना एव प्राप्त पुरावशेष

मध्य युग मे टीले के शीर्ष भाग पर अनेक निर्माण हुआ जिनमे पूर्वर्ती ईटो का प्रयोग किया गया था। यहॉ से पुरानी ईटो से निर्मित एक छोटे किले के अवशेष मिले है। यह मध्यकालीन अवशेष लगभग नष्ट हो चुका है, फिर भी कुछ दीवारे बची है। टीले के उत्तर–पूर्व तथा दक्षिण–पूर्व किनारे पर स्थित बुर्ज के आकार की गोलाकार सरचना से यह विदित होता है कि इसका निर्माण गढी के रूप मे किया गया था। इसके चारो कोनो पर बुर्ज बने हुए थे। ऐसा प्रतीत होता है कि मध्य काल के दौरान मुस्लिम आक्रमणकारी सेना ने इस टीले पर कब्जा कर लिया था और उन्ही के अधीन टीले के शीर्ष भाग पर छोटे से किले का निर्माण हुआ था।

इस काल के स्तरो मे काचित बर्तन (ग्लेज्ड वेयर) तथा इब्राहिमशाह शर्की एव खिलजियो के सिक्को के अतिरिक्त लोहे की अनेक वस्तुएँ प्राप्त हुयी है। इन वस्तुओ मे तीर के फलक विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इससे विदित होता है कि मध्य काल मे यह स्थल सघर्ष का केन्द्र रहा।

इस प्रकार फाजिलनगर–सठियॉव के सीमित उत्खनन से इस स्थल के गौरवशाली अतीत का मात्र एक अश ही प्रकाश मे आया है। भविष्य के उत्खनन से भूगर्भ मे छिपे इतिहास के पृष्ठ उजागर होने और प्राचीन पावा की समस्या का समाधान मिलने की पूरी सम्भावना है।

3 वीरभारी (उस्मानपुर डीह)

स्थानीय स्तर पर वीरभारी नाम से जाना जाने वाला यह टीला उस्मानपुर ग्राम का एक भाग है जो कुशीनगर से 20 किमी0 दक्षिण–पूर्व तथा कसया–फाजिलनगर मार्ग पर फाजिलनगर से लगभग 9 किमी दक्षिण मे फाजिल नगर बघौच घाट सडक के किनारे लगभग 1 किमी की दूरी पर यह टीला कुल 40 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है तथा पूर्णतया छोटे–छोटे वृक्षो से आच्छादित है। टीला पूर्णतया समतल है इसका कुछ भाग खेतो मे परिवर्तित हो चुका है तथा किचित भू–भाग पर आवास खडे है। यहा के खेतो मे दूर–दूर तक पुरावशेष बिखरे पडे है। मुख्य टीले से हट कर दक्षिण पूर्व तथा दक्षिण पश्चिम मे भी अवशेष देखने को मिलते है। इसका सम्पूर्ण परिक्षेत्र किसी महत्वपूर्ण नगर के अति विकसित अवस्था मे होने का आभास देता है।

सर्वप्रथम सन् 1962–63 ई0 मे उस्मानपुर डीह का सर्वेक्षण हुआ था और वहा से सुरक्षात्मक दीवारे मिली थी।[1] महावीर की निर्वाण–स्थली पावा के अभिधान के सम्बन्ध मे शिकागो एव लन्दन से प्रकाशित 'ए हिस्टारिकल एटलस ऑफ साउथ एशिया'[2] मे फाजिलनगर परिक्षेत्र के निकट पावा अकित है। इसी आधार पर भारतीय

---

[1] *इण्डियन आर्कियोलाजी–ए रिव्यू,* 1962–63, नई दिल्ली, 1965, पृष्ठ 33।

[2] सम्पा0 पाल विटले, *ए हिस्टारिकल एटलस ऑफ साउथ एशिया,* शिकागो एण्ड लन्दन, 1978।

पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने सन् 1973–74 ई0 मे के0एम0 श्रीवास्तव के निर्देशन मे एक सक्षिप्त ट्रायल टेचिग के द्वारा उस्मानपुर मे उत्खनन कराया जहाँ से कुछ मिट्टी की मुद्राछापे मिली थी। उनमे से दो पर पहली–दूसरी शताब्दी की ब्राह्मी मे लेख अकित था।[1] अभी तक उत्खनन का न तो विस्तृत विवरण प्रकाशित हुआ है और न ही किसी महत्वपूर्ण उपलब्धि का ज्ञान पुरातत्व जगत को है।

वीरभारी टीले का पावा होने के सन्दर्भ मे सन् 1997 ई0 मे गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एव सस्कृत विभाग द्वारा प्रो0 दयानाथ त्रिपाठी के निर्देशन मे उत्खनन कराया गया। सीमित समय एव ससाधनो के अभाव के कारण मात्र दो ही खात लगाया जा सका जो कमश डी–2 एव डी–15 के नाम से जाना जाता है। डी$_2$ 2 5×3 मी0 तथा डी$_{15}$ 5×5 मी0 का था।

डी$_2$ मे 2 7 मी0 की गहराई तक खुदाई हुयी जिसमे कुल 9 सस्तर प्राप्त हुए। इसके उपरी सस्तर से कुषाणकालीन पक्की ईटो से बने भवनो के अवशेष प्राप्त हुए। पॉचवे–छठे सस्तर मे कोयले एव राख तथा जले हुए ईटो के टुकडे प्राप्त हुए। सबसे नीचला सस्तर पीले रग के मिट्टी का मिला जिस पर समस्त सन्निवेश आधृत थे। इन खातो मे दो भवनो के तीन बार गिरने तथा पुन निर्मित होने के प्रमाण प्रकाश मे आये। तीनो बार यह घटना कुषाण काल मे ही घटित प्रतीत होता है। सभी निर्माण कुषाण काल मे ही हुए प्रतीत होते है जिसमे विशेष उल्लेखनीय एक कुऑ है। यहॉ से गुप्तकालीन अलकृत ईंटो के टुकडे भी मिले है जो गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग मे सुरक्षित है (छायाचित्र सख्या–20)।

डी–15 के उत्खनन से तीन निर्माण कालो के प्रमाण प्रकाश मे आये जो स्तर– अध्ययन, ईंटो के नाप तथा प्राप्त मृद्भाण्डो के आकार–प्रकार के आधार पर कुषाण कालीन प्रतीत होते है। इसमे लगभग 1 35 मीटर के मोटाई के सस्तर मे मानव सन्निवेश के प्रमाण प्राप्त हुए। डी2 की तरह इस काल के नीचले स्तरो से एन0बी0पी0 मृद्भाण्ड की तरह का कोई मृद्भाण्ड तो नही मिला, परन्तु कुषाण, शक तथा पह्लव कालीन मिट्टी की मूर्तियॉ (छायाचित्र सख्या–21), मिट्टी के फ्लेश रबर, लोढे, मनके,

[1] *इण्डियन आर्क्योलाजी ए रिव्यू,* 1973–74, नई दिल्ली 1979, पृष्ठ 30।

पहिए, बाट तथा शीशे के चूडियो के टुकडे प्राप्त हुए थे। कुछ लौह निर्मित वस्तुएँ भी मिली थी। सभी पुरासामग्रियॉ गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एव सस्कृति विभाग के सग्रहालय मे सुरक्षित है।

इस उत्खनन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि कुषाणकालीन सडक के अवशेष है जो सम्भवत वीरभारी टीले से कुशीनगर की दिशा मे घोडधाप तक जाती थी। पक्की ईटो से निर्मित यह सडक लगभग पॉच मीटर चौडी थी।

उत्खनन के दौरान ही वीरभारी टीले से 2 किमी दक्षिण–पश्चिम स्थित ग्राम सुमही बुजुर्ग मे एक ईटो से निर्मित लगभग गोलाकार टीला प्रकाश मे आया। टीले की सफाई करने पर वह ईंट निर्मित एक वर्गाकार स्तूप निकला जिसका अवशेष अब भी देखा जा सकता है। स्तूप से कुछ दूरी पर इसके चतुर्दिक समकालीन एक चौडी दीवार बनायी गयी थी। दीवार और स्तूप के बीच बाहर से बलुई मिट्टी लाकर भरा गया था। दीवार तथा स्तूप का सबन्ध जानने के लिए पश्चिम की ओर एक मीटर चौडाई का एक खात लगाया गया। दीवार तथा स्तूप के निर्माण के लिए प्रयुक्त ईंटो का आकार–प्रकार एक जैसा निकला। सम्भवत यह प्रदक्षिणा पथ रहा होगा। ठीक इसी तरह का स्तूप कुशीनगर मे मुख्य स्तूप के समक्ष निर्मित है।[1]

इस प्रकार वीरभारी के उत्खनन से पावा के पहचान की समस्या का समाधान नही हो सका। शोधार्थी को एक स्थानीय नागरीक[2] द्वारा वीरभारी टीले के सतह से सकलित एन0बी0पी0 मृद्भाण्ड, काले और लाल मृद्भाण्ड, मौर्य कुषाण एव गुप्त काल से सम्बन्धित मृण्मूर्तियॉ, कुषाण कालीन मुद्राएँ तथा लेखयुक्त मोहरे देखने को मिला जो इस बात का प्रमाण है कि पावा की स्थित इसी टीले के चतुर्दिक कही होनी चाहिए। सतह से प्राप्त प्रचूर मात्रा मे कुषाण कालीन सिक्के, मृण्मूर्तियॉ तथा समकालीन सडक के प्राप्त अवशेषो से यह स्पष्ट है कि यहॉ कुषाण कालीन एक समृद्ध नगर सन्निवेश था। यह नगर एकाएक विकसित नही हुआ होगा, अपितु इसका

---

[1] त्रिपाठी, डी0एन0, अप्रकाशित रिपोर्ट *वीरभारी (उस्मानपुर डीह) टीले का उत्खनन।*

[2] डा0 श्याम सुन्दर सिह उस्मानपुर से सटे ग्राम दर्जिया के निवासी है तथा वास्तविक पावा की पहचान हेतु इस क्षेत्र पर कार्य कर रहे है।

पूर्व इतिहास रहा होगा, जिसकी सम्पूर्ण जानकारी के लिए एक विस्तृत उत्खनन की अपेक्षा है।

4 पडरौना

पडरौना नगर पूर्वी उत्तर प्रदेश के कुशीनगर जनपद के उत्तरी–पूर्वी कोने पर 26^0 54′ उत्तरी अक्षाश और $83^0$59′ पूर्वी देशातर पर हिमालय की तराई मे गण्डक से 12 मील तथा गण्डक की शाखा बॉसी नदी से 5 मील की दूरी पर दक्षिण मे स्थित है। पडरौना सदर तहसील का मुख्यालय है। यह कसया से लगभग 18 किमी0 उत्तर दिशा मे स्थित है।

डा0 बुकानन[1] पहले व्यक्ति थे जिन्होने बौद्ध साहित्य मे वर्णित दिशा मे एव दूरी के आधार पर सन् 1814 ई0 मे इस क्षेत्र का सर्वेक्षण किया था और पडरौना के उपनगर छावनी के निकट स्थित प्राचीन टीले का उत्खनन करवाया था। बुकनन ने वहॉ तीन मूर्तियॉ देखी थी और उनका रेखाकन किया था, जो ईस्टर्न इण्डिया[2] मे प्रकाशित है। पहली सिररहित खडी पाषाण प्रतिमा है। इस विशाल प्रतिमा को के0 डी0 बाजपेयी[3] बुद्ध की प्रतिमा मानते है जिसके दोनो तरफ कई छोटी–छोटी प्रतिमाऍ तथा सहायको की प्रतिमाऍ दृष्टिगोचर होती है। दूसरी तीन छत्रधारी पाषाण प्रतिमा नग्न है जो पद्मासन मुद्रा मे ध्यानावस्थित है। बाजपेयी इसे जैन तीर्थंकर की मूर्ति मानते है,[4] जिसकी पूजा आज भी स्थानीय लोगो द्वारा हट्ठी भवानी के रूप मे की जाती है। बुकनन ने इसे बुद्ध प्रतिमा माना है।[5] विद्वान इसे पालयुगीन मानते है। तीसरी मूर्ति पादपीठ पर स्थित चतुर्भुज भगवान विष्णु की खडी प्रतिमा है। बुकनन ने इस टीले के अदर मन्दिर या स्तूप होने की सभावना व्यक्त की थी।

---

[1] मार्टिन, माण्टगोमरी, *द हिस्ट्री, एन्टीक्विटीज, टोपोग्राफी एण्ड स्टैटिस्टिक्स ऑफ ईस्टर्न इण्डिया,* वाल्यूम–2, पृ0 354–357, दिल्ली,1976।

[2] तदैव, पृ0 382–383।

[3] बाजपेयी, के0 डी0, *लोकेशन ऑफ पावा, पुरातत्व,* पृ0 43।

[4] तदैव।

[5] मार्टिन माटगोमरी, पूर्वोद्धत, पृ0 382–383।

बुकनन की रिपोर्ट[1] से प्रेरित होकर कनिघम[2] ने सन् 1861 ई0 मे इस क्षेत्र का सर्वेक्षण कर उक्त टीले का उत्खनन करवाया तथा पडरौना को प्राचीन पावा के साथ समीकृत किया। उत्खनन के समय कनिघम को अनेक मूर्तियॉ एव कलाकृतियॉ प्राप्त हुई थी। उत्खनन एव निरीक्षण के आधार कनिघम ने सभावना व्यक्त की है कि इस टीले पर बौद्ध विहार निर्मित रहा होगा।[3] विहार मे 100 वर्ग फीट क्षे0 वाले ऑगन के चारो ओर आवासीय कमरे रहे होगे। कमरो के मध्य ऑगन मे स्तूप अथवा मन्दिर रहा होगा। गोरख्रपुर जनपद के गजेटियर्स[4] मे भी सभावना व्यक्त की गई है कि टीले पर एक बौद्ध विहार होना चाहिए और उसके मध्य मे प्रमुख स्तूप होना चाहिए। कनिघम के अनुसार टीले से प्राप्त गोल किनारे वाली ईटे बोधगया के प्रसिद्ध विशाल मन्दिर तथा गिर्यक के स्तूपो मे प्रयुक्त ईटो के समान थी। कनिघम ने ईटो के आकार के आधार पर यहॉ 30 फीट एव 9 फीट परिधि वाले दो स्तूपो के होने की सभावना व्यक्त की थी।[5] उत्खनन मे उन्हे एक खुरदुरा बलुआ पत्थर का आधार स्तभ भी प्राप्त हुआ था जो 8 इच वर्गाकार तथा 6 5 इच ऊॅचा था जिसके ऊपरी किनारे पर सादी कलात्मक धारियॉ बनी हुई थी। इसके अतिरिक्त उन्हे और भी अनेक कलाकृतियॉ एव बौद्ध मूर्तियॉ प्राप्त हुई थी।[6] इसके बाद कार्लाइल और फ्यूहरर ने इस जनपद का सर्वेक्षण किया तथा पडरौना से प्राप्त अवशेषो का उल्लेख किया।

सन् 1952 ई0 मे के0 डी0 बाजपेयी द्वारा पुरातत्व अधिकारी, उत्तर प्रदेश के रूप मे पडरौना सहित जनपद के अनेक पुरास्थलो का सर्वेक्षण किया गया। उन्होने कनिघम के इस मत को सही ठहराया कि वर्तमान पडरौना ही मल्लो की

---

[1] तदैव, पृ0 356।

[2] कनिघम, ए0, *द ऐन्शेयण्ट ज्योग्राफी ऑफ इण्डिया,* वाराणसी 1975, पृ0 476, ए0 एस0 आई0 आर0 खण्ड 1, 1861–62, पृ0 74–75।

[3] *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट,* 1862–63, खण्ड 1, पृ0 74–75।

[4] *डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स गोरखपुर,* खण्ड 31, पृ0 279–289।

[5] कनिघम, *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट,* 1862–63, खण्ड 1, पृ0 74–75।

[6] कनिघम, ए0, *ऐश्येण्ट ज्योग्राफी ऑफ इण्डिया,* पृ0 366।

राजधानी पावा है।[1] बाजपेयी द्वारा छावनी के टीले का पुर्नसर्वेक्षण अक्टूबर 1985 मे किया गया। उन्होने इस स्थल से प्राप्त प्रस्तर मूर्तियो, ईटो तथा बर्तनो को देखा। मूर्तियॉ जैन, बौद्ध और ब्राह्मण धर्म से सम्बधित थी जो सामान्यत प्रारम्भिक मध्यकालीन थी। उन्होने एक शुगकालीन प्रस्तर मूर्ति का भी उल्लेख किया है।[2]

सन् 1985 ई0 मे भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के डा0 अरूण कुमार के निर्देशन मे जनवरी से मार्च तक उक्त टीले का उत्खनन किया गया। उत्खनन से जो अवशेष मिले उससे यह स्थल पूर्व मध्यकालीन सिद्ध हुआ।[3] वर्तमान मे यह टीला भारतीय पुरातत्व विभाग द्वारा सरक्षित है। अभी तक यहॉ सीमित स्तर पर खुदाई हो सकी है। अत यहॉ व्यापक स्तर पर उत्खनन की आवश्यकता है ताकि इसकी प्राचीनता का विवाद सुलझ सके।

---

[1] वाजपेयी, के0डी0, 1987, *लोकेशन ऑफ पावा, युग युगीन सरयूपार*, पृ0 88।

[2] युग–युगीन सरयूपार, 1987, वाराणसी, पृ0 49 (के0 डी0 बाजपेयी द्वारा प्रस्तुत पत्र–लोकेशन ऑफ पावा)।

[3] इण्डियन आर्कियोलाजिकल रिव्यू, नई दिल्ली, 1987, पृ0 88।

अध्याय 4

कुशीनगर जनपद मे पुरातात्विक अन्वेषण और कला अवशेषो का अध्ययन

इस अध्याय मे शोधार्थी द्वारा जनपद मे किये गये पुरातात्विक सर्वेक्षण से ज्ञात स्थलो एव उनसे प्राप्त पुरासामग्रियो का यथेष्ट विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। मेरे द्वारा कुशीनगर जनपद का गहन सर्वेक्षण 1999 ई0 से 2002 ई0 के बीच किया गया जिसके परिणामस्वरूप कुल 89 महत्वपूर्ण पुरास्थल प्रकाश मे आये है। यद्यपि कुछ स्थल ऐसे है जिनका उल्लेख पूर्ववर्ती शोध कर्ताओ ने भी किया है, किन्तु शोधार्थी ने उनका पुन सर्वेक्षण कर उनके विषय मे उपलब्ध सम्पूर्ण विवरण प्रस्तुत किया है। इन पुरास्थलो मे से 28 पुरास्थल तमकुहीराज तहसील मे, 27 पुरास्थल कसया तहसील मे, 17 पुरास्थल पडरौना तहसील मे तथा 17 ही पुरास्थल हाटा तहसील मे स्थित है (रेखाचित्र सख्या–4, तालिका– 1)।

तालिका–1

तमकुहीराज तहसील के स्थल			
क0 स0	स्थल के नाम	अक्षाश	देशान्तर
1	गगुआ	26^0 –5′–15″ उ0	84^0 –8′–45″ पू0
2	लक्ष्मीपुर बाबू	26^0 –6′–0″ उ0	84^0 –8′–45″ पू0
3	शिव सरेया	26^0 –6′–30″ उ0	84^0 –9′–30″ पू0
4	सरेया	26^0 –7′–15″ उ0	84^0 –10′–15″ पू0
5	बसडीला खूर्द	26^0 –6′–15″ उ0	84^0 –9′–0″ पू0
6	परसौनी	26^0 –7′–30″ उ0	84^0 –11′–50″ पू0
7	सियरहॉ	26^0 –7′–15″ उ0	84^0 –11′–30″ पू0
8	मीर बिहार	26^0 –38′–7″ उ0	84^0 –11′–30″ पू0
9	बनवीरा	26^0 –37′–7″ उ0	84^0 –3′–15″ पू0
10	बदुरॉव	26^0 –36′–0″ उ0	84^0 –3′–7″ पू0
11	नाथा पट्टी	26^0 –36′–0″ उ0	84^0 –3′–20″ पू0
12	पुरैना कटेया	26^0 –5 5′–30″ उ0	84^0 –6 5′–45″ पू0

14	गगलवाँ	26^0 –41′–30″ उ0	84^0 –5′–0″ पू0
15	देवरिया वृत्त	26^0 –41′–45″ उ0	84^0 –5′–15″ पू0
16	धारमठिया	26^0 –41′–15″ उ0	84^0 –6′–15″ पू0
17	उजारनाथ	26^0 –42′–55″ उ0	84^0 –4′–15″ पू0
18	सपही खास	26^0 –45′–10″ उ0	84^0 –5′–30″ पू0
19	करमैनी डीह	26^0 –45′–0″ उ0	84^0 –4′–15″ पू0
20	भेलया चन्द्रौटा	26^0 –44′–0″ उ0	84^0 –4′–15″ पू0
21	अहलादपुर	26^0 –40′–55″ उ0	84^0 –2′–15″ पू0
22	तुर्कपट्टी	26^0 –45′–0″ उ0	84^0 –4′–30″ पू0
23	राजा पाकड	26^0 –46′–30″ उ0	84^0 –8′–0″ पू0
24	गुरूवलिया	26^0 –46′–30″ उ0	84^0 –4′–50″ पू0
25	घुरपट्टी	26^0 –52′–10″ उ0	84^0 –4′–10″ पू0
26	सपही टडवाँ	26^0 –45′–0″ उ0	84^0 –8′–45″ पू0
27	मोरवन मठियाँ	26^0 –39′–30″ उ0	84^0 –14′–0″ पू0
28	दनियाडी	26^0 –37′–15″ उ0	84^0 –16′–0″ पू0
कसया तहसील के स्थल			
29	फाजिलनगर	26^0 –45′–0″ उ0	84^0 –2′–0″ पू0
30	सठियाँव	26^0 –44′–0″ उ0	84^0 –2′–0″ पू0
31	अमवा	26^0 –42′–0″ उ0	83^0 –58′–30″ पू0
32	मरचैयाडीह (सरेया महन्थ पट्टी)	26^0 –41′–15″ उ0	83^0 –69′–7 5″ पू0
33	नदवाँ–विशुनपुर	26^0 –39′–30″ उ0	83^0 –59′–0″ पू0
34	बेईली	26^0 –41′–0″ उ0	83^0 –59′–10″ पू0
35	धनहा	26^0 –42′–30″ उ0	83^0 –58′–30″ पू0
36	बकुलहर कला	26^0 –39′–0″ उ0	84^0 –1′–15″ पू0
37	उस्मानपुर (बीरभारी टीला)	26^0 –37′–30″ उ0	84^0 –3′–45″ पू0
38	सुमही बुजुर्ग	26^0 –38′–10″ उ0	84^0 –2′–0″ पू0
39	गागी टीकर	26^0 –42′–0″ उ0	84^0 –1′–0″ पू0
40	सोहग	26^0 –44′–15″ उ0	84^0 –0′–0″ पू0
41	करमा टोला	26^0 –44′–15″ उ0	84^0 –1′–10″ पू0
42	छहूँ–ए	26^0 –45′–0″ उ0	84^0 –0′–0″ पू0
43	छहूँ–बी	26^0 –45′–5″ उ0	84^0 –0′–0″ पू0
44	बसडीला	26^0 –51′–23″ उ0	83^0 –51′–30″ पू0
45	कुशीनगर	26^0 –45′–0″ उ0	83^0 –55′–0″ पू0
46	नरकटिया खूर्द	26^0 –46′–45″ उ0	83^0 –52′–55″ पू0
47	टेकुआ टार	26^0 –52′–10″ उ0	83^0 –51′–30″ पू0
48	प्रेमवलिया	26^0 –43′–15″ उ0	83^0 –57′–45″ पू0

49	मैनपुर कोट	26^0 –44′–15″ उ0	83^0 –58′–15″ पू0
50	कुलकुला स्थान	26^0 –41′–15″ उ0	83^0 –56′–30″ पू0
51	मल्लूडीह	26^0 –43′–0″ उ0	83^0 –58′–0″ पू0
52	मधुरिया	26^0 –41′–55″ उ0	83^0 –59′–0″ पू0
53	अन्ध्याडीह	26^0 –42′–0″ उ0	83^0 –57′–0″ पू0
54	दीघवा खूर्द	26^0 –46′–0″ उ0	83^0 –53′–0″ पू0
55	दीघवा बुजुर्ग	26^0 –47′–0″ उ0	83^0 –56′–7″ पू0
पडरौना तहसील के स्थल			
56	बलडीहा	26^0 –44′–15″ उ0	84^0 –2′–0″ पू0
57	कुबेर स्थान	26^0 –46′–30″ उ0	84^0 –4′–30″ पू0
58	कोहरवलिया	26^0 –48′–45″ उ0	84^0 –6′–0″ पू0
59	खण्डवार पिपरा	26^0 –50′–15″ उ0	84^0 –3′–30″ पू0
60	घोरघटिया	26^0 –52′–30″ उ0	84^0 –2′–0″ पू0
61	बडगाँव	26^0 –52′–0″ उ0	84^0 –0′–0″ पू0
62	सिघुवॉ स्थान	26^0 –56′–5″ उ0	84^0 –1′–0″ पू0
63	सिघुवॉ देवलही	26^0 –44′–45″ उ0	84^0 –1′–5″ पू0
64	देवरहा स्थान	26^0 –55′–30″ उ0	83^0 –58′–45″ पू0
65	लमुहा	26^0 –55′–5″ उ0	83^0 –59′–0″ पू0
66	गागरानी	26^0 –53′–5″ उ0	83^0 –56′–15″ पू0
67	रविन्द्रनगर	26^0 –53′–7″ उ0	83^0 –59′–10″ पू0
68	सेहुवाडीह	26^0 –54′–30″ उ0	83^0 –56′–30″ पू0
69	नौगावा इन्द्राही	26^0 –57′–15″ उ0	83^0 –56′–30″ पू0
70	कुकुरहा	26^0 –51′–30″ उ0	83^0 –54′–30″ पू0
71	मठियॉ बुजुर्ग	27^0 –8′–15″ उ0	83^0 –52′–15″ पू0
72	चमडीहा	27^0 –12′–0″ उ0	83^0 –50′–30″ पू0
हाटा तहसील के स्थल			
73	वनमोर्चा	26^0 –44′–5″ उ0	83^0 –51′–30″ पू0
74	भिसवॉ रामपुर	26^0 –44′–20″ उ0	83^0 –41′–45″ पू0
75	नाऊमुण्डा	26^0 –45′–0″ उ0	83^0 –43′–0″ पू0
76	बढेया खुर्द	26^0 –44′–45″ उ0	83^0 –40′–0″ पू0
77	भरकुलवा	26^0 –45′–30″ उ0	83^0 –37′–30″ पू0
78	डुमरी मलॉव	26^0 –47′–15″ उ0	83^0 –39′–15″ पू0
79	घोटप भिसवा	26^0 –49′–45″ उ0	83^0 –37′–30″ पू0
80	देउरवॉ	26^0 –47′–10″ उ0	83^0 –43′–5″ पू0
81	झाँगा	26^0 –47′–30″ उ0	83^0 –43′–40″ पू0
82	झरुआडीह	26^0 –45′–0″ उ0	83^0 –44′–0″ पू0

83	थरुआडीह	26^0 –44′–45″ उ0	83^0 –43′–30″ पू0
84	महुवाडीह	26^0 –39′–15″ उ0	83^0 –47′–30″ पू0
85	मुँजडीहा	26^0 –53′–45″ उ0	83^0 –5′–0″ पू0
86	मगडीहा	26^0 –41′–45″ उ0	83^0 –39′–15″ पू0
87	तुर्कडीहा	26^0 –50′–45″ उ0	83^0 –38′–50″ पू0
88	अमडीहा	26^0 –54′–15″ उ0	83^0 –38′–15″ पू0
89	पपउर	26^0 –59′–0″ उ0	83^0 –52′–30″ पू0

सर्वेक्षण से प्रकाश मे आए इन स्थलो का विवरण, उनकी स्थिति, क्षेत्रफल और इन स्थलो से उपलब्ध महत्वपूर्ण पुरा–सामग्रियो तथा ऐतिहासिक महत्व के स्मारको आदि का वर्णन निम्न पॅक्तियो मे किया जा रहा है –

1 गगुआ

यह पुरास्थल गॉव के उत्तर–पश्चिम मे तमकुही से लगभग 8 किमी दक्षिण, तमकुही–समउर लिक मार्ग के पूर्व तथा फाजिलनगर से 9 5 किमी0 दक्षिण–पूर्व दिशा मे स्थित है। यह पुरा स्थल पूर्व से पश्चिम लगभग 300 मीटर लम्बे तथा उत्तर से दक्षिण लगभग 200 मी0 चौडे क्षेत्र मे फैला हुआ है। वर्तमान मे टीले के अधिकाश हिस्से पर कृषि कार्य किया जा रहा है। स्थल के बीच मे लगभग 5 मीटर ऊँचा तथा 50 मीटर लम्बा–चौडा टीला अब भी विद्यमान है(छायाचित्र सख्या–22)। टीले पर दुर्गा जी का स्थान है। स्थानीय लोग इस टीले को पूर्व मे चेरो का निवास स्थल बताते है। उनके अनुसार यह गागू और स्वायत्त नामक दो भाईयो का निवास स्थल था जिनके नाम पर कमश गगुआ और स्वायत्त पिपरा नामक दो गॉव बसे हुए है। जनश्रुतियो के अनुसार इन्होने एक रात मे 72 तालाब और 72 कुँए खुदवाये थे जिनमे से अधिकाश के प्रमाण आज भी मौजूद है और कुछ पट गये है।

टीला खडित ईटो से पटा पडा है। यहॉ से प्राप्त पूर्ण ईटो की माप 31 × 31 × 4 सेमी0 तथा 36 × 22 × 4 सेमी0 है। टीले से 50 सेमी0 ऊँची तथा 25 सेमी0 चौडी काले चमकीले प्रस्तर से निर्मित आधार पीठ सहित उमा–माहेश्वर

जनपद कुशीनगर के पुरास्थल
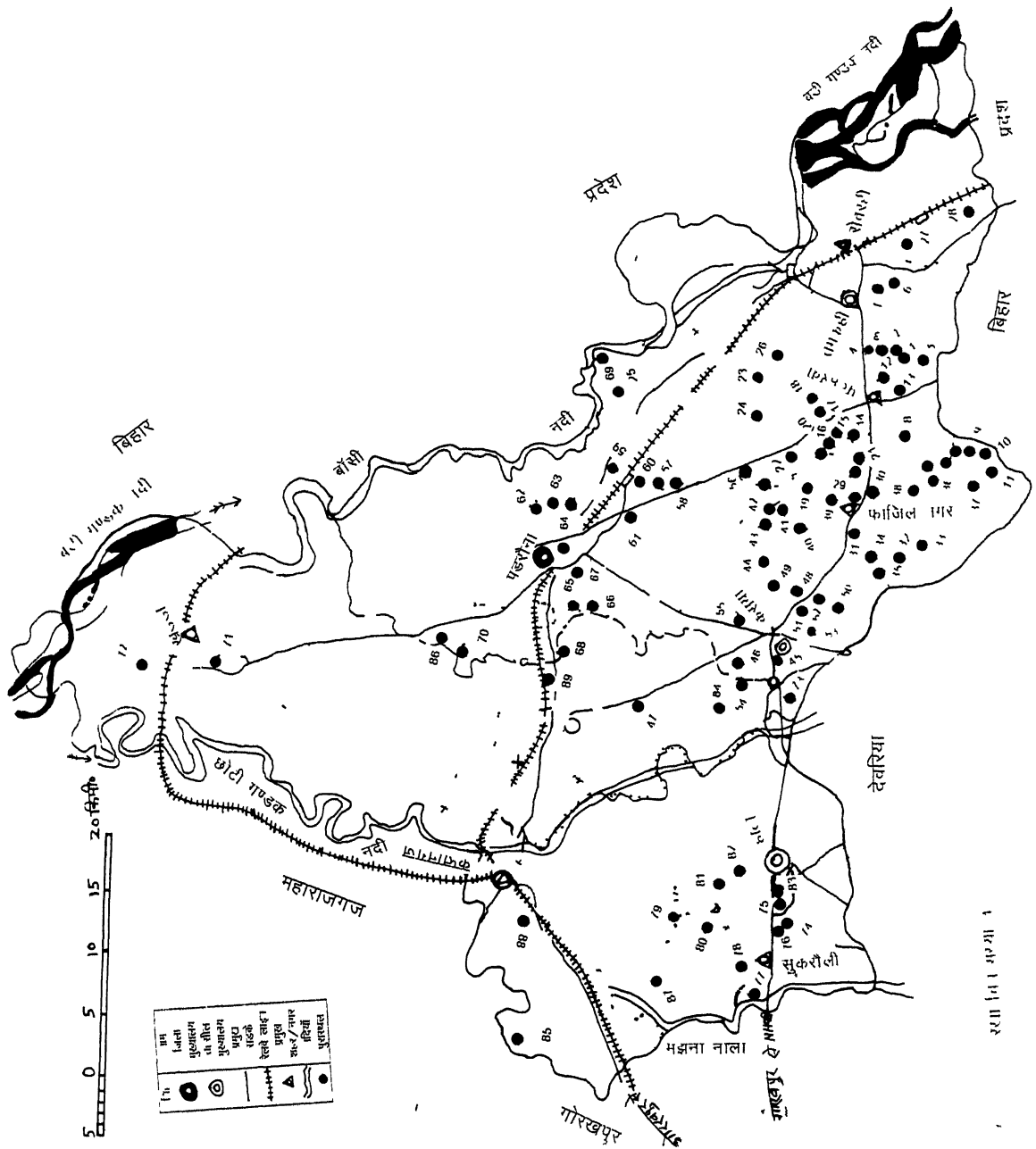
की आलिगन मुद्रा मे ललितासन रूप मे अकित मूर्ति मिली है जो वर्तमान मे गॉव के प्रधान के घर रखी है । यह 10वी–11वी शताब्दी का प्रतीत होता है।

यह युगल प्रतिमा एक ही आसन पर निर्मित है। इस प्रकार की प्रतिमा निर्माण का विधान विष्णु धर्मोत्तर पुराण मे किया गया है[1]। माहेश्वर की प्रतिमा चतुर्भुजी है जबकि उमा की द्विभुजी । शिव के पहले हाथ मे फल, दूसरे हाथ मे त्रिशूल और तीसरे हाथ मे सर्प का अकन हुआ है। शिव को चौथे हाथ द्वारा पार्वती का आलिगन किये दिखाया गया है जो अधरो को स्पर्श करते हुए अकित है। इस प्रकार का विधान रूपमडन मे भी दिया गया है।[2] पार्वती का दाहिना हाथ शिव के कधे पर आलिगन मुद्रा मे अकित है तथा बायॉ हाथ जो बाएँ घुटने पर टिका हुआ है, मे दर्पण अकित है। गोपी नाथ राव ने भी इसका समर्थन किया है।[3] मूर्ति के नीचे पीठिका पर शिव के समीप वाहन वृषभ तथा पार्वती के समीप उनके वाहन सिह का अकन हुआ है। शिव का दाहिना पैर पीठिका के ऊपर तथा बाया पैर उपर मोडकर बैठे दिखाया गया है। पार्वती शिव के बाये जघे पर बैठी है जिनका दाहिना पैर पीठिका पर तथा बाये पैर का घुटना कमर तक उठा हुआ अकित है, जिस पर बाया हाथ अवलाम्बित है। शिव के सिर पर जटा मुकुट, कान मे कुण्डल , गले मे हार, कमर मे मेखला, बाहो मे ककण तथा भुजबन्द अकित है। उमा की मूर्ति विशाल वक्ष एव नितम्ब से युक्त है। देवी के भी गले मे हार, हाथो मे कगन तथा सिर करण्ड मुकुट से अलकृत है। मूर्ति के शीर्ष पर दोनो पार्श्वों मे गणधर उत्कीर्ण है। (छायाचित्र सख्या–23)। उमा–माहेश्वर की इसी प्रकार की एक प्रतिमा सग्रहालय खजुराहो मे रखी हुई है।[4]

यहॉ से उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा के तथा कुषाण युगीन लाल रग के मिट्टी के बर्तन के टुकडे प्राप्त हुए है। कुषाण युगीन मृद्भाण्डो मे घुण्डीदार

---

[1] "युग्म स्त्री पुरूष कार्यमुमेशौ दिव्यरूपिणौ। "*विष्णु धर्मोत्तर पुराण,* 105,8–110।

[2] श्रीवास्तव, बलराम, *रूपमण्डन,* चतुर्थ अध्याय।

[3] राव, गोपीनाथ, *एलिमेंट्स ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी,* भाग2, खण्ड1, पृ0 133।

[4] सिह, अजीत प्रसाद, *खजुराहो की शैव एव शाक्त प्रतिमाएँ,* वाराणसी,1991, पृ0 61।

ढक्कन, खॉचेदार लोढा, मिट्टी के खिलौने एव मूर्तियॉ, साधार तस्तरी एव कटोरा, विभिन्न प्रकार के घडे, मिट्टी की किसी जानवर की खण्डित मूर्ति, कडाही का हैडिल, घुडीदार एव दावात के आकार के ढक्कन, स्टोरेज जार, बेसिन, ओठदार कटोरा आदि शामिल है।

2 लक्ष्मीपुर बाबू

यह स्थल तमकुही से लगभग 6 किमी0 दक्षिण–पूर्व, फाजिलनगर से 10 किमी0 पूरब गॉव के उत्तर–पश्चिम दिशा मे स्थित है। लगभग 50 × 35 वर्ग मीटर के क्षेत्र मे फैले इस टीले की ऊचाई लगभग 3 मीटर है। इसके पश्चिम तथा दक्षिण पूर्व मे 2 बडे तालाब है। टीले पर ईटो के टुकडे प्रभुत्त मात्रा मे दिखाई पडते है। यहॉ से कुषाण युगीन लाल रग के मिट्टी के बर्तन बहुत कम मात्रा मे मिलते है जिनमे घडे, ढक्कन, नाद तथा हाडी शामिल है।

3 शिव सरेया

यह स्थल तमकुही से लगभग 5 किमी दक्षिण तमकुही–समउर लिक मार्ग के किनारे स्थित है। यह लगभग दो एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है। इसके पूरब मे लगभग 150 × 100 मीटर लम्बे चौडे आकार का एक तालाब है। वर्तमान मे टीले पर शिव मदिर स्थापित है जिसमे एक शिवलिग प्रतिष्ठापित है। मुख्य मदिर से सटे उत्तर दिशा मे एक छोटा सा मदिर है जिसके बाहर सूर्य, नौ–ग्रह (छायाचित्र सख्या–24) सहित अनेक काले रग की खण्डित प्रस्तर मूर्तियॉ बिखरी पडी है यहॉ अलकृत वेदिका–स्तम्भ अथवा तोरण द्वार का खडित भाग जिस पर पुरूष एव नारी मूर्तियॉ उत्कीर्ण है, पडी हुयी है। यह 10वी–11वी शताब्दी की प्रतीत होती है। ये सभी इसी स्थान से प्राप्त हुई है। यहॉ से प्राप्त वामन मूर्ति की ऊॅचाई 36 सेमी0 है। यह चतुर्भुजी है जिसके नीचे के दो हाथ अभय मुद्रा मे है तथा उपर के एक हाथ मे दण्ड धारण किये हुए है। चौथे हाथ मे ग्रहित वस्तु अस्पष्ट है। प्रतिमा कर्ण कुण्डल, हार, यज्ञोपवीत, जटा–मुकुट मेखला तथा वनमाला से अलकृत है। पैर के अगल–बगल तथा शीर्ष पर दोनो पार्श्वो मे कुछ प्रतिमॉ उत्कीर्ण है, जिनकी पहचान सदिग्ध है(छायाचित्र चित्र–25)। अग्निपुराण मे छत्र–दण्डधारी चतुभुर्ज वामन का

उल्लेख है।[1] विष्णु धर्मोत्तर पुराण के अनुसार वामन मूर्ति दण्डी एव ब्रह्मचारी के रूप मे होनी चाहिए।[2] यहॉ से प्राप्त नवग्रह मूर्तियॉ एक पट्ट पर अकित है जो धुँधली हो गई है। ये स्थानक मुद्रा मे निर्मित है। ये नवग्रह सूर्य, चन्द्र (सोम), मगल (भौम), बुद्ध, वृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु तथा केतु है। मदिरो के प्रवेश द्वार पर नवग्रहो का अकन शुभ माना जाता है। डा0 रामाश्रय अवस्थी ने खजुराहो से अनेक नवग्रह पट्टो का उल्लेख किया है।[3] डा0 गोपीनाथ राव ने तजौर मे सूर्यनार्कोयिल के सूर्य मदिर से एक स्पष्ट नवग्रह समूह का उल्लेख किया है।[4] आज की कष्ट निवारणार्थ ग्रह–शान्ति की पूजा प्रचलित है। ग्रहो की वैज्ञानिक उपयोगिता ही ग्रह–पूजा की लोकप्रियता की आधारशिला है।

4 सरेयॉ

यह पुरास्थल गॉव से उत्तर–पूर्व मे लगभग 5किमी. की दूरी पर तमकुही से लगभग 4 किमी दक्षिण मे स्थित है। इस स्थल से 1 किमी0 की दूरी पर उत्तर मे झरही नदी बहती है। यह लगभग 5 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है। यह आसपास की जमीन से बहुत ऊँचा नही है और लगभग समतल हो चुका है। पुरास्थल के बीच से एक नहर निकली है जिसके कारण इसका अधिकाश भाग क्षतिग्रस्त हो गया है और शेष भाग पर कृषि कार्य किया जा रहा है।

यहॉ से कुषाणयुगीन लाल रग के मिट्टी के बर्तन के टुकडे बहुत कम मात्रा मे बिखरे हुए मिलते है जिनमे चौडे मुँह वाले घडे, कैरिनेटेड हाडी, कुछ पात्रो पर स्टैम्प का चिन्ह, पाटरी डिस्क, तस्तरी तथा बेसिन शामिल है।

सरेया गॉव के पश्चिम एक मदिर मे काले प्रस्तर की चतुर्भुजी विष्णु की बैकुठ प्रतिमा (छायाचित्र सख्या–26) प्रतिष्ठित है। इसके अगल–बगल अन्य खडित प्रतिमाएँ बिखरी पडी है जिनमे बाये करवट लेती हुयी नारी की प्रतिमा विशेष

---

[1] छत्री–दण्डी वामने स्यादथवा स्याच्चतुर्भजम् ।। *अग्नि पुराण।*

[2] *विष्णु धर्मोत्तर पुराण,* 85,54–55।

[3] अवस्थी, रामाश्रय, *खजुराहो की देव प्रतिमाएँ,* आगरा, 1966, पृ0 194–196।

[4] राव गोपीनाथ, पूर्वोद्धृत, जिल्द 1, भाग2, पृ0 323।

रूप से उल्लेखनीय है जिसके स्तन के पास एक लेटे हुए शिशु की प्रतिमा उत्कीर्ण है (छायाचित्र सख्या–27)। इसका बाया हाथ सिर से टेक लगाये हुए है तथा दाहिना हाथ पैर के ऊपर है। मातृ–शिशु (सद्योजात विष्णु) की यह प्रतिमा कुशीनगर जनपद की विशिष्ट कला शैली को सूचित करती है। ये सभी प्रतिमाएँ इसी स्थल से जमीन के अन्दर से मिली है।

बैकुण्ठ प्रतिमा की लम्बाई 10 फीट तथा चौडाई 3 फीट है। वैदिक परम्परा मे बैकुण्ठ इन्द्र से सम्बद्व एक देव है, किन्तु परवर्ती साहित्व मे 'वैकुण्ठ' इन्द्र का ही एक नाम बताया गया है।[1] लेकिन महाभारत, मे भागवतपुराण[2] मे 2 तथा विष्णु पुराण मे विष्णु का एक ही नाम बैकुण्ठ बताया गया है। विष्णु के बैकुण्ठ रूप धारण करने का उल्लेख यशोवर्मन के वि0 स0 1011 के खजुराहो अभिलेख मे भी मिलता है।[3] इसके अनुसार विष्णु ने सौम्य, वराह, नरसिह और कपिल इन चार मुखो से युक्त वैकुण्ठ अवतार धारण किया था।

इस प्रकार वैकुण्ठ प्रारम्भ मे इन्द्र से सम्बद्व रहे और फिर विष्णु के एक गौण अवतार माने गए। पूर्व मध्य युग मे उनका महत्व बहुत अधिक बढ गया और वे कश्मीरागम अथवा तत्रात्तर सम्प्रदाय के प्रधान देव बन गये।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण[4] जयख्यासहिता तथा यशोवर्मन के खजुराहो अभिलेख[5] मे वैकुण्ठ के चतुर्मख, सौम्य, नरसिह, वराह तथा कपिल होने का उल्लेख हुआ है। ज्याख्यासहिता मे वैकुण्ठ के चतुर्भुज होने तथा उनमे शख, चक और पद्म धारण करने का उल्लेख है। अपराजितपृच्छा[6] मे बैकुण्ठ के चारमुख और आठ भुजाएँ होने तथा गरूड पर आरूढ होने का उल्लेख मिलता है। इनमे चौथा मुख

---

[1] त्रिपाठी, एल0 के0, *भारती*, न 4 पृष्ट 116।

[2] *भागवत पुराण* 3, 16, 6।

[3] *इपिग्राफिका इण्डिका*, वाल्यूम 1, पृ0 124।

[4] *विष्णु धर्मोत्तर पुराण*, 85,43–45।

[5] कीलहार्न, *इपिग्राफिका इण्डिका*, वाल्यूम 1, पृष्ट 122–35

[6] *अपराजितपृच्छा*, 219, 25–27।

कपिल के स्थान पर स्त्रीमुख होने का विवरण दिया गया है। उनके दाहिने हाथो मे गदा, खड्ग, बाण तथा चक्र और बाए हाथ मे शख, खेटक, धनुष तथा पद्म होने चाहिए।

यद्यपि कि बैकुण्ठ के चतुर्मुख होने की विशिष्टता सर्वमान्य है, किन्तु परमारो के नागपुर शिलालेख[1] से उनके तीन मुखो का बोध होता है। अधिकाश बैकुण्ठ मूर्तियॉ त्रिमुखी ही मिली है।

इस पुरास्थल पर प्रतिष्ठित वैकुण्ठ प्रतिमा भी त्रिमुखी है। पीछे की ओर चौथा मुख (कपिलानन) सभवत दृष्टिगोचर न होने के कारण ही नही निर्मित हुआ है। सामने का सौम्य पुरूषमुख प्रधान है, दक्षिण मुख नरसिह का और वाम वराह का है। यह प्रतिमा स्थानक समभग मुद्रा मे खडी है। केन्द्रीय मस्तक किरीटमुकुट से अलकृत है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रतिमा अष्टभुजी रही होगी, जिसके चार हाथ खण्डित हो गये है तथा चार हाथ सुरक्षित है। बॉयी ओर की भुजाओ मे कमश चक्र व धनुष तथा दक्षिण भुजाओ मे कमश खड्ग और शख अकित है। यह मूर्ति गलाहार, ग्रैवेयक, कौस्तुमकर्ण , कुण्डलो, केयूरो, यज्ञोपवीत, लटकती मुक्ता–लडियो से युक्त मेखला, वनमाला तथा हाथ भुजबन्द और कगन से सुशोभित है। यह प्रतिमा दोहरे कमलासन पर खडी है जिसके नीचे गरूण की आकृति उत्कीर्ण की गई है। गरूण आकृति के दाहिनी ओर स्त्री पूजक तथा बाये पुरूष पूजक की आकृतियॉ अकित है। वैकुण्ठ के चरणो के दोनो ओर एक–एक भक्त हाथ जोडे बैठे हुए है। बैकुठ प्रतिमा के दाहिने पार्श्व मे पद्मधारणी लक्ष्मी तथा बाये पार्श्व मे वीणाधारिणी सरस्वती खडी है। शिरश्चक के उपर, दाएँ और बाएँ बनी तीन रथिकाओ मे कमश सूर्य नारायण, ब्रह्मा और शिव की छोटी प्रतिमाएँ है। सूर्य नारायण योगासन मुद्रा मे है। मूर्ति की प्रभावली मे अधिकॉश अवतार चित्रित है। मूर्ति के दोनो, ओर कोनो पर एक–एक अनुचर भी उत्कीर्ण है। मूर्ति के

---

[1] *इपिग्राफिका इण्डिका,* वाल्यूम 2, पृष्ट 183।

मुख की बायी ओर तथा किरीट के अगल–बगल व उपर अनेक पॅक्तियो मे छोटी–2 अनेक मूर्तियॉ विभिन्न मुद्राओ मे प्रदर्शित की गई है।

प्रतिमा लक्षणो एव उनकी अन्य बातो को देखते हुए यह प्रतिमा 11वी–12वी शताब्दी की प्रतीत होती है। केन्द्रीय पुरूष मुख पर झलकता आनन्द–मिश्रित परम शान्ति का भाव दर्शक को मोह लेता है।

5 बसडीला खूर्द

यह पुरास्थल तमकुही से 9 किमी0 दक्षिण तथा फाजिलनगर से 11 किमी0 दक्षिण–पूर्व दिशा मे स्थित है। यह गॉव के दक्षिण मे लगभग दो एकड मे फैला हुआ है जिसकी ऊॅचाई आस–पास की जमीन की सतह से लगभग 1 मी0 है। पुरास्थल के दक्षिण मे चॅवर है। वर्तमान मे सम्पूर्ण भू–भाग पर कृषि कार्य हो रहा है। ग्रामीण लोगो के अनुसार पूर्व मे यह चेरो का निवास स्थल था। इस पुरास्थल से कुषाण युगीन एव मध्यकाल के लाल रग के मिट्टी के बर्तन प्राप्त हुए है जिनमे घुडीदार ढक्कन, घडा, तस्तरी, लौह पिड तथा कडाही जिसके नीचे धुऍ का निशान है, प्रमुख है। एक बर्तन के टुकडे पर नाखुन धसाकर डिजाईन बनाया गया है।

6 परसौनी

यह स्थल तमकुही से 4 किमी दक्षिण पूर्व मे स्थित है। इस स्थल से 200 मी0 की दूरी पर पश्चिम से सियाही नदी बहती है। यह लगभग 2 हेक्टेयर क्षेत्र मे फैला हुआ है। यह पूर्णतया समतल हो चुका है जिसके सम्पूर्ण भूभाग पर वर्तमान मे कृषि कार्य हो रहा है। स्थानीय मान्यता के अनुसार पूर्व मे यह पम्पापुर था, जो आगे चलकर परसौनी के रूप मे परिणत हो गया। ग्रामीणो के अनुसार इस स्थल को चनाभार के नाम से भी जाना जाता है।

यहॉ से कुषाण युगीन लाल रग के मिट्टी के बर्तन मिले है जिनमे विभिन्न प्रकार के घडे, बेसीन, हाडी, कडाही (कुषाण युगीन चमकदार पालिस युक्त) , घुडीदार ढक्कन, कटोरे, आदि शामिल है। यहॉ से मिट्टी की एक मुहर भी मिली है जिसके उपर तीन वृत्तो के अन्दर एक डॉट का चिन्ह अकित है।

7 सियरहॉ

यह स्थल तमकुही से 35 किमी दक्षिण पूर्व मे स्थित है। यह सियाही नदी के पूर्वी तट पर स्थित है। यह लगभग 5 हेक्टेयर क्षेत्र मे फैला हुआ है। यहॉ से कुछ हिन्दू प्रतिमाएँ मिली है जो इसी स्थान पर एक मदिर मे स्थापित है। प्रतिमाओ मे काले पत्थर की सूर्य की प्रतिमा (छायाचित्र सख्या–28), जो 2 फीट ऊँची एव 15 फीट चौडी है, एक मुखी शिवलिग (छायाचित्र सख्या–29) तथा नृत्यरत चतुर्भुजी गणेश (छायाचित्र सख्या–30) की प्रतिमा एव योनिपीठ सहित अष्ठफलकीय शिवलिग प्रमुख है। इनका समय 10वी–11वी शताब्दी का प्रतीत होता है।

सूर्य प्रतिमा

सम्प्रति हिन्दू सम्प्रदायो मे सौर सम्प्रदाय एक प्रतिष्ठित सम्पद्राय है। मानव मूलत प्रकृति उपासक था। प्रकृति के उन अगो की उपासना वह श्रद्धापूर्वक करता था, जो उसके जीवन मे उपयोगी थे। प्राची दिशा मे उदित एव पश्चिम दिशा मे अस्त होने वाला सूर्य दिवा–रात्रि का कारण तथा सम्पूर्ण जीवो एव वनस्पतियो का उद्बोधक एव सचारक है। सूर्य की प्रथम किरणे जीवन की सूचिका है। इस अत्युपयोगी सूर्य को मानव ने सर्वप्रथम अपनी उपासना का केन्द्र माना ।

सुर्योपासना मुख्यत दो रूपो मे प्राप्त होती है मानव–मूर्ति के रूप मे तथा प्रतीको के रूप मे । मानव रूप मे सर्वप्रथम सूर्योपासना शुग–युग मे ज्ञात होती है। स्वस्तिक, पद्म, चक्र , मयूर, किरण्युक्त वृत, गरूण, यक्ष इत्यादि सूर्य के प्रतीक माने गये है। डा0 वी0सी0 श्रीवास्वत[1] ने चक्र युक्त वृत को सूर्य प्रतीक माना है। वृहत्तसहिता,[2] शिल्परत्न,[3] विष्णु धर्मोत्तर पुराण,[4] विश्व कर्मशिल्प,[5] मे

[1] श्रीवास्तव, वी0सी0, *सन वर्शिप इन ऐण्सियन्ट इण्डिया,* पृष्ट 4।

[2] *वृहत्तसहिता,* 58,46–49।

[3] *शिल्परत्न,* अध्याय 20।

[4] *विष्णुधर्मोत्तर पुराण,* 67,2–10।

[5] राव, गोपीनाथ, विश्वकर्म शिल्प, *एलिमेण्ट्स ऑफ हिन्दू आइक्नोग्राफी,* जिल्द1, भाग2, पृ0 38।

सूर्य प्रतिमा के लक्षणो पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। खजुराहो सग्रहालय मे अनेक सूर्य–प्रतिमाएँ सूरक्षित है, जिसका विस्तृत विवेचन रामाश्रय अवस्थी ने किया है।[1]

सन्दर्भित पुरास्थल से प्राप्त सूर्य प्रतिमा दोहरे कमल पर स्थानक समभग मुद्रा मे स्थित है। यह द्विभुजी प्रतिमा उद्दीच्य वेशधारी है तथा इसके दोनो हाथो मे पूर्ण विकसित सनाल पद्म प्रदर्शित किया गया है, जो उत्तर भारतीय परम्परा का उद्धाहन करता हुआ स्कधो तक उठा हुआ है। सूर्य के सिर पर किरीटमुकुट, गले मे हार तथा मुक्ता–लडियो से युक्त माला, कर्ण कुण्डल, बाहो मे ककण तथा भुजबन्द, कटि मे लटकती हुई मुक्ता लडियो से युक्त मेखला तथा यज्ञोपवीत से अलकृत है। अधोभाग वस्त्र से ढका हुआ है। दोनो हाथो से लटकता हुआ उत्तरीय जैसा वस्त्र प्रदर्शित है, जो घुटने तक है। सूर्य के पार्श्व मे नीचे दो देवियॉ छाया और सज्ञा हाथ मे चामर लिए त्रिभग मुद्रा मे खडी है। वाम पार्श्व मे दण्डी ओर दक्षिण पार्श्व मे पिगल कमश दण्ड, लेखनी और पत्र लिए अकित है। सूर्य के दोनो पैरो के बीच मे महाश्वेता प्रदर्शित है, जिसका दायॉ हाथ अभय मुद्रा मे है। प्रतिमा के शीर्ष भाग मे दोनो कोनो पर दो अनुचर उत्कीर्ण है। प्रतिमा के पैरो मे उपानह पश्चिमी प्रभाव को सूचित करता है। इसकी मुख मुद्रा से सहज कोमलता आभासित है। डा0 जे0 एन0 बनर्जी ने सूर्य के चरणो के समीप बनी मूर्ति को 'भू–देवी महाश्वेता' नाम से सम्बोधित किया है।[2]

नृत्यरत गणेश

हिन्दू पच देवो मे गणेश विशेष प्रतिष्ठित है। समस्त शुभ कार्यो, सस्कारो तथा पूजा मे सर्वप्रथम गणेश की ही उपासना की जाती है। गणेश सर्व–धर्म समन्वय के प्रतीक है तथा सभी धर्म के मूर्तियो के साथ प्राप्त होते है। इन्हे विध्वविनाशक माना गया है।

---

[1] अवस्थी, रामाश्रय, *खजुराहो की देव प्रतिमाएँ*, पृ0 170–183।

[2] बनर्जी जे0 एन0, *डेवलपमेण्ट ऑफ हिन्दू आइक्नोग्राफी*, पृ0 439।

नृत–गणपति–मूर्तियो का निर्माण पूर्व गुप्त काल मे प्रारम्भ हुआ।[1] गुप्तकाल मे उनका प्रचलन बढने लगा और मध्य युग मे वह बहुत व्यापक हो गया। शास्त्रो के अनुसार नृत गणपति मूर्ति अष्टभुजी बननी चाहिए। सात हाथो मे पाश, अकुश, मोदक, कुठार, दन्त, बलय तथा अगुलीय हो और शेष एक हाथ उन्मुक्त लटककर विविध नृत्य–मुद्राओ के प्रदर्शन मे सहायक हो।[2] गणेश की नृत्यरत मूर्तियॉ जनपद कुशीनगर से चतुर्भुजी, अष्टभुजी तथा षोड्शभुजी ही प्राप्त हुई है। गणपति की नृत्य–मूर्तियॉ खजुराहो से विविध रूपो–द्विभुजी, चतर्भुजी, अष्टभुजी, दशभुजी, द्वादशभुजी और षोड्शभुजी– मे उपलब्ध हुई है।[3]

सन्दर्भित पुरास्थल पर प्रतिष्ठित नृत्यरत गणेश प्रतिमा चतुर्भुजी है। यह मूर्ति किरीटमुकुट से सुशोभित है बायी ओर की भुजाओ मे कमश परशु को लिए हुए दण्ड–हस्त तथा मोदक पात्र (कमण्डल) प्रदर्शित है। दायी ओर की एक भुजा मे मोदक है तथा दूसरी भुजा स्कन्ध तक उठी हुई अभय मुद्रा मे है, जिसमे माला की एक छोटी लडी अकित है। गणेश की सम्पूर्ण सूँड बायी और मुडी हुई है, जिसमे एक नाग पकडकर उन्होने अपने सिर के उपर घटा टोप सा बना लिया है। यह प्रतिमा हार, यज्ञोपवीत, ककण, कटिसूत्र और पैजनी धारण किये हुए है तथा मस्तक मोती की इकहरी लडी से अलकृत है। यह शूर्प कर्ण तथा एकदन्त है। शीर्ष पर दोनो पार्श्वो मे गणधरो के युगल अकित है। पीठिका पर वशी तथा वीणा बजाते तीन अनुचरो की छोटी आकृतियॉ अकित है। प्रतिमा मे मूर्ति की प्रभावली मे विविध मूर्तियॉ विभिन्न मुद्राओ मे प्रदर्शित है।

एकमुखी शिवलिग

यह कुशीनगर जनपद से प्राप्त, एक मुखी शिवलिग का एकमात्र उदाहरण है। इस 15 इच ऊँचे लिग मे एक ओर 12 5 ईंच ऊँचे शिव की मूर्ति

---

[1] मथुरा सग्रहालय मे पूर्व गुप्तकालीन एक नृत–गणपति–मूर्ति (स0 1064) दर्शनीय है।

[2] राव, गोपीनाथ, *एलेमेण्ट्स ऑफ हिन्दू आइक्नोग्राफी*, जिल्द 1, खण्ड2।

[3] अवस्थी, रामाश्रय, खजुराहो की देव प्रतिमाएँ, पृ0 43–46।

उत्कीर्ण है। इस सावक्ष द्विभुजी मूर्ति के सिर पर किरीटमुकुट, कानो मे कुण्डल तथा गले मे हार सुशोभित है।

यहॉ उल्लेखेनीय है कि मुख–लिग के अन्तर्गत एक मुख से पॉच मुख तक बनते है। एक मुख लिग की एक प्रतिमा लखनऊ सग्रहालय मे रखी हुई है।[1] इसमे लिग के एक ओर मुख बना है तथा सिर पर जटा–जूट बने है। जे0 एन0 बनर्जी ने भी एक एकमुखी तथा एक पचमुखी लिग का उल्लेख किया है।[2] गोपीनाथ राव ने दक्षिण भारत मे प्राप्त गौडिमल्लम् एकमुखी लिग का उल्लेख किया है जिसकी पूजा परशुरामेश्वर के नाम से होती है।[3]

8 मीर बिहार

यह पुरास्थल फाजिलनगर से 6 किमी दक्षिण–पूर्व मे फाजिलनगर–समउर मार्ग के किनारे स्थित है। लगभग 30 × 35 वर्ग मी क्षेत्र मे फैले इस टीले की ऊँचाई लगभग 4 5 मी0 है। इस स्थल का प्रथम बार उल्लेख ए0सी0एल0 कार्लाइल ने किया था। स्थानीय लोग इस टीले को 'मीरा साहब की ढेरी' नाम से पुकारते है। यह टीला ईटो से पटा पडा है जिनमे से कुछ पूर्ण ईटो की माप 36×19×6 सेमी0 है। यहॉ से कुषाण यूगीन तथा मध्यकालीन लाल रग के मिट्टी के बर्तन के टुकडे मिले है जिनके उपर उभरे डॉट की दो पक्तियॉ है, आधार युक्त कटोरा घुडीदार ढकन आदि शामिल है।

9 बनवीरा

यह पुरास्थल तमकुही से 17 किमी0 दक्षिण–पश्चिम तथा फाजिलनगर से 8 किमी0 दक्षिण–पूर्व दिशा मे स्थित है। वर्तमान मे टीले के अधिकाश भाग पर गॉव बसा हुआ है तथा शेष भाग पर कृषि कार्य हो रहा है। यह लगभग 3 5 हेक्टेयर क्षेत्र मे फैला हुआ है तथा आस–पास की जमीन की सतह से

---

[1] लखनऊ सग्रहालय, प्र0 न0 42।

[2] बनर्जी, जे0 एन0, *डेवलपमेण्ड ऑफ हिन्दू आइक्नोग्राफी,* पृ0 61–62।

[3] राव, गोपनीथ, *एलीमेण्ट्स ऑफ हिन्दू आइक्नोग्राफी,* वाल्यूम 2, पृ0 63–64।

लगभग 2 मीटर ऊँचा है। इस स्थल का प्रथम बार उल्लेख ए0सी0एल0 कार्लाइल ने किया है।[1] यहॉ से कुषाण युगीन लाल रग के मृद्भाण्ड के टुकडे प्राप्त हुए है जिनमे चौडे और सॅकरे मुॅह वाले घडे, स्टोरेज जार, बेसिन, ढक्कन आदि शामिल है। यहॉ से प्राप्त पूर्ण ईटो की माप 38 × 22 × 6 सेमी0 है।

10 बदुरॉव

यह पुरास्थल फाजिलनगर से 12 किमी0 दक्षिण–पूर्व फाजिलनगर–इन्दिरा बाजार लिक मार्ग के पूर्व दिशा मे बिहार की सीमा पर स्थित है । वर्तमान मे पुरास्थल के सम्पूर्ण भाग पर गॉव बसा हुआ है जिसकी उॅचाई सामान्य जमीन की सतह से 2 5 मीटर ऊँचा है । बदुरॉव को स्थानीय लोग बुद्ध नगर भी कहते है । गॉव के पूरब मे कटेया सोता बहता है । यह स्थल लगभग 2 0 हेक्टेयर क्षेत्र मे फैला हुआ है। स्थानीय मान्यता के अनुसार अन्तिम व 24वे जैन तिर्थंकर महावीर इस गॉव से होकर पावा गये थे। यह बुद्ध के कुशीनगर जानेवाले मार्ग मे ही पडता था । भिक्षु धर्म रक्षित ने बदुरॉव की पहचान बुद्धकालीन भोग नगर से की है जो मलगण के पावा की तरह एक गणराज्य था। वर्तमान मे यह स्थल क्षतिग्रस्त हो चुका है । यहॉ से कुषाणकालीन लाल रग के मिट्टी के बर्तन के टुकड मिले है जिनमे घडे, कटोरे, बेसिन, ढक्कन आदि शामिल है। यहॉ से उत्तरी कृष्ण मार्जित तथा लाल लेपित मृदभाण्ड के कुछ टुकडे भी मिले है। गृह का निर्माण करते समय गामीणो को पुरानी आबादी के उपर पुराने कुएॅ मिले थे। गॉव से सटे दक्षिण मे एक पुराना कुऑ आज भी देखा जा सकता है जिसका प्रयोग वर्तमान मे भी लोग करते है।

11 नाथा पट्टी

यह स्थल फाजिलनगर से 10 किमी0 दक्षिण तथा कसया से लगभग 19 किमी0 दक्षिण–पूर्व मे स्थित है। लगभग एक एकड क्षेत्र मे फैला हुआ यह स्थल आसपास के जमीनी स्तर से लगभग 2 मी0 ऊँचा एक टीला है जिसे स्थानीय लोग

---

[1] कार्लाइल, ए0सी0एल0, *आर्क्योलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट*, 1875–76–77, टूर्स इन गोरखपुर डिस्ट्रिक्ट, वाल्यूम 18, दिल्ली 1869, पृ0 102।

गढ़ी के नाम से पुकारते है। यहाँ से लाल रंग के कुषाणकालीन एवं मध्यकालीन मिट्टी के बर्तन के टुकड़े मिले है। यहाँ से प्राप्त प्राचीन वलय कूप की ईट की माप 45.5× 25.5×7 सेमी0 है।

12. पुरैना कटेया :

यह पुरास्थल फाजिलनगर से 8.5 किमी0 पूर्व तथा तमकुही से 5 किमी0 दक्षिण पश्चिम में स्थित हैं। लगभग 2 हेक्टेयर क्षेत्र मे फैला यह स्थल पूर्णतया समतल और क्षतिग्रस्त हो चुका है। वर्तमान में सम्पूर्ण भू–भाग पर कृषि कार्य हो रहा है। यहा से प्राप्त अधिकांश ईंटे लोगों द्वारा मकान में लगवा लिये गये है तथा कुछ टुकड़े खेतो में बिखरे पड़े है। यहाँ से प्राप्त पूर्ण ईटों की माप 30×20×6 सेमी0, 29×22×7 सेमी0 आदि है। इनमें से कुछ ईटें नक्काशीदार भी है। यहाँ से काले चमकीले पत्थर की कुछ हिन्दू प्रतिमाँए भी मिली है जिनमें सूर्य, उमा–माहेश्वर (छायाचित्र संख्या–31), द्वादश पिण्डी लिंग, शिशु को दूध पिलाती बैठी हुयी स्त्री की मूर्ति (छायाचित्र संख्या–32) तथा कुछ खंडित मूर्तियाँ प्रमुख है। ये मूर्तियाँ 10वीं–11वीं शताब्दी की प्रतीत होती है।

सूर्य प्रतिमा :

सूर्य प्रतिमा बलुआ पत्थर की बनी हुयी है। यह प्रतिमा 4.5 फीट ऊँची तथा 2 फीट चौड़ी है। यह दोहरे कमल के उपर स्थानक मुद्रा में स्थित है। इसके सिर पर किरीटमुकुट तथा स्कन्ध तक उपर उठे हुए दोनें हाथों में पूर्ण विकसित सनाल पद्म सुशोभित है। इसके बायें हाथ का कुछ हिस्सा खण्डित है। यह प्रतिमा हार, कर्णकुण्डल, मेखला, वनमाला, कंकण तथा भुजबन्द से अलंकृत हैं। प्रतिमा के नीचे पार्श्व में उषा, प्रत्यूषा तथा दोनो पैरो के बीच महाश्वेता आदि देवियाँ अंकित हैं। छाया, संज्ञा, दण्डी तथा पिंगल भी अंकित रहे होगे जो अब स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर नही होते । प्रतिमा वक्ष तक वस्त्र (चोलक) से आवृत है। पैरों में उपानह पश्चिमी प्रभाव को सूचित करते है।

उमा–माहेश्वर : एक ही आसन पर निर्मित उमा–माहेश्वर की यह युगल प्रतिमा ललितासन मुद्रा में है। यह दो फीट ऊँची तथा 13 ईंच चौड़ी हैं। शिव को चतुर्भुज

तथा पार्वती की द्विभुज बनाया गया है। शिव का दाहिना पैर पाद पीठ पर तथा बाया पैर उपर मोडकर बैठे दिखाया गया है। पार्वती को बाया पैर पादपीठ पर तथा दाहिना पैर मोडकर शिव के जॉघ पर बैठे दिखाया गया है। शिव का पहला हाथ अभय मुद्रा मे सामने वक्ष तक उठा हुआ है। दूसरे हाथ मे त्रिशूल तथा तीसरे हाथ मे सर्प का अकन हुआ है। शिव का चौथा हाथ आलिगन मुद्रा मे है जिसे देवी के कूच को स्पर्श करते हुए दिखाया गया है। पार्वती का दाहिना हाथ आलिगन मुद्रा मे शिव के कधे पर स्थित है तथा बाये हाथ मे दर्पण अकित है। मूर्ति के नीचे पीठिका पर शिव के समीप उनके वाहन वृषभ तथा पार्वती के समीप उनके वाहन सिह का अकन हुआ है। शिव तथा पार्वती के मुख एक–दूसरे के आमने–सामने है तथा दोनो के कटि को पतला बनाया गया है। शिव की मूर्ति जटा मुकुट, कुण्डल, हार, मेखला, ककण, भुजबन्द तथा पैजनी से अलकृत है। उमा की मूर्ति विशाल वक्ष तथा नितम्ब से युक्त है जो हार, कगन, करण्डमुकुट, कुण्डल तथा करधनी से अलकृत है। प्रतिमा के नीचे तथा उपर दोनो पार्श्वो मे अनुचर प्रदर्शित है।

मातृ–शिशु की प्रतिमा

इसके अन्तर्गत माता को अपने शिशु को गोद मे लिए पीठिका पर दोनो पैर रखकर बैठा हुआ दिखाया गया है। शिशु का बाया हाथ मॉ के स्तन को स्पर्श करते हुए अकित है। प्रतिमा के दोनो ओर एक–एक अनुचर खडे प्रदर्शित किये गए है। देवी की मूर्ति मुकुट, कुण्डल, हार, कगन तथा भुजबन्द से अलकृत है। यह प्रतिमा इन्द्रणी की हो सकती है।

यहॉ से कुषाणयुगीन मृदभाण्ड भी प्राप्त हुये है जिनमे सीधी एव चौडी मुॅह वाला घडा तथा बेसिन प्रमुख है।

13 बिहार बुजुर्ग

यह स्थल तमकुही से 6 किमी0 दक्षिण–पश्चिम तथा फाजिलनगर से 8 किमी0 पूर्व पटहेरवा–समउर लिक मार्ग के किनारे स्थित है। यह लगभग पूर्व–पश्चिम 500 मीटर तथा उत्तर–दक्षिण लगभग 200 मी0 के क्षेत्र मे फैला हुआ है। पुरास्थल के थोडे हिस्से पर आबादी बसी हुयी है तथा बाकी हिस्सा समतल हो

चुका है जिस पर वर्तमान मे कृषि कार्य हो रहा है। यहॉ से बहुत कम मात्रा मे कुषाणयुगीन चमकदार लाल लेप युक्त मिट्टी के बर्तन प्राप्त हुए है जिनमे लम्बी गर्दन वाले घडे, बेसिन, कटोरा तथा पूजा के लिए मिट्टी का बना तालाब (Votive Tank) प्रमुख है।

14 गगलवॉ

यह पुरास्थल फाजिलनगर से लगभग 5 किमी0 उत्तर–पूर्व तथा तमकुही से लगभग 4 किमी0 पश्चिम, तमकुही–फाजिलनगर मार्ग के उत्तर स्थित है। ग्राम के भवनो की अनेक दीवारे प्राचीन ईंटो से निर्मित है । इन ईंटो का आकार 44×25×8 सेमी0 है । कृष्णानन्द त्रिपाठी (प्राचीन भारतीय इतिहास , सस्कृति एव पुरातत्व विभाग गोरखपुर विष्वविद्यालय, गोराखपुर) ने मौखिक वार्ता के दौरान मुझे बताया कि सर्वेक्षण के दौरान उन्हे यहॉ से खण्डित स्तूपो के अवशेष देखने को मिले थे । ग्रामीणो के अनुसार आज भी गॉव के पूरब खेतो मे ईट की दीवारे मिलती है ।

15 देवरिया वृत

यह पुरास्थल गगलवॉ गॉव से सटे उत्तर दिशा मे स्थित है। यहॉ लगभग 700 वर्गमीटर के क्षैत्र मे फैला 5 मीटर ऊचा स्तूपाकर ईंट का टीला है (छायाचित्र सख्या–33)। टीले के ऊपर एक मदिर है जिसमे यहॉ से प्राप्त काले रग का शिव लिग स्थापित है । मन्दिर के पीछे भूरे रग की बलुए पत्थर से निर्मित हिन्दू धर्म से सम्बधित अनेक खण्डित मूर्तियॉ पडी हुई है जिनकी पहचान सदिग्ध है। टीले पर प्रस्तर निर्मित चहारदीवारी के अवशेष आज भी देखे जा सकते है। ग्रामीणो के अनुसार यह मदन राजा का मन्दिर था। टीले के पूर्व वाली खेत मे ईटो की दीवारे मिलती है। टीले पर कूछ अलकृत ईंटो के टुकडे भी बिखरे पडे है। यहॉ से लाल रग के आरम्भिक मध्यकालीन मिट्टी के बर्तन मिले है। टीले के उत्तर मे एक बलुए पत्थर की लिग स्थापित है जिसका आधार अष्टकोणीय है। स्थानीय लोग इसे भैरव बाबा के नाम से पुकारते है।

16 धारमठियॉ

यह पुरास्थल फाजिलनगर से लगभग 6 किमी0 उत्तर–पूर्व तथा तमकुही से 8 किमी0 पश्चिम मे स्थित है। स्थानीय लोगो के अनुसार 52 बीघे मे फैला यह टीला समीपवर्ती जमीनी स्तर से लगभग 5–6 मीटर ऊँचा है (छायाचित्र सख्या–34)। वर्तमान मे सम्पूर्ण भाग पर कृषि कार्य किया जा रहा है। पुरास्थल के पूर्वी छोर पर एक साधु बाबा की कुटिया तथा पश्चिमी छोर पर भगवान शिव का मदिर है। मदिर के प्रवेश द्वार की बायी ओर ककाली देवी की पिडी रूप मे 7 प्रतिमाएँ है। इस स्थल को ककाली देवी का टीला भी कहा जाता है। किबदन्ती है कि यह टीला पहले राजा मदन सिह का किला था। यह ईटो के टुकडो तथा मृदभाण्डो के टुकडो से पटा पडा है। यहा से प्राप्त कुछ पूर्ण ईटो की माप 38×22×6 सेमी0 है। यहॉ से कुषाणकालीन लाल रग के मृदभाण्ड प्राप्त हुए है जिनमे कटोरे, विभिन्न प्रकार के घडे, टोटीदार बर्तन, सुराही तथा बेसिन शामिल है। लाल पात्र के एक बर्तन पर रोलेटेड वेयर का अनुकरण किया गया है। यहॉ से परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा के कुछ टुकडे भी मिले है।

17 उजारनाथ

यह पुरास्थल तमकुही से लगभग 5 किमी0 उत्तर–पश्चिम तथा फाजिलनगर से लगभग 9 किमी0 उत्तर–पूर्व मे स्थित है । लगभग 0 5 एकड मे फैला यह स्थल पूर्णतया समतल हो चुका है। स्थल पर ईंट के टुकडे बिखरे पडे है। यहॉ से लिग, नृत्यरत गणेश, कृष्ण, नन्दी , तथा पार्वती की प्रतिमाये मिली है। लिग स्थल के पश्चिमी किनारे मदिर मे स्थापित है जो काले रग का है। बलुए पत्थर से निर्मित षोड्शभुजी गणेश (छायाचित्र सख्या–35) एव अष्टभुजी गणेश प्रतिमाएँ एव कृष्ण प्रतिमा मन्दिर के पूर्वी दीवार मे बाहर की ओर प्रतिष्ठापित है।

षोडशभुजी नृत–गणपति की भुजाएँ खण्डित है। तथा इसका सूड बायी ओर मुडा हुआ है। अष्टभुजी नृत–गणपति की पॉच भुजाएँ खण्डित है। शेष तीन मे से एक मे परशु, दूसरे मे भोदक तथा तीसरा नृत्यमुद्रा मे अकित है। सम्पूर्ण

सूँड बायी ओर मुडकर मोदक को ग्रहण करते प्रदर्शित है। दोनो प्रतिमाएँ शूर्प–कर्ण से युक्त है तथा सिर पर मुकुट सुशोभित है।

स्थल के दक्षिणी किनारे पर चतुर्भुजी पार्वती की प्रतिमा मदिर मे स्थापित है(छायाचित्र सख्या–36)। मूर्ति की दाहिनी ओर मयूरारूढ कार्तिकेय तथा बायी ओर मूषक पर आसीन गणेश का अकन है। यह कमल के ऊपर स्थानक मुद्रा मे निर्मित है। इस प्रतिमा की ऊँचाई 7 फीट है। यह मूलत काले रग की है परन्तु अघतन इस पर लाल रग का पेट चढा दिया गया है। स्थल के पूर्वी किनारे पर खुले आकाश के नीचे नन्दी एव एक अन्य लिग एक साथ अगल–बगल स्थापित है

18 सपही खास

यह पुरास्थल फाजिलनगर से लगभग 10 किमी0 उत्तर–पूर्व तथा पडरौना से 25 किमी0 दक्षिण–पूर्व दिशा मे स्थित है। यह लगभग 5 एकड मे फैला हुआ है जिसके कुछ भाग पर कृषि कार्य हो रहा है। शेष भाग की ऊँचाई, आस–पास की जमीनी स्तर से लगभग 2 5 मीटर है। यहॉ से प्रारम्भिक मध्यकालीन लाल रग के मिट्टी के बर्तन के टुकडे मिले है जिनमे हाडी, घडे, टोटीदार बर्तन तथा मिट्टी की मुहर शामिल है। इस स्थल के दक्षिण–पूर्व मे लगभग 50 मीटर की दूरी पर एक ईट का लगभग 3 मीटर ऊँचा छोटा सा टीला है जिसके ऊपर एक मदिर मे काले रग की एक 8 5 फीट ऊँची अष्टभुजी विष्णु की प्रतिमा स्थापित है (छायाचित्र सख्या–37)। यह इसी स्थान से मिली थी। इसका समय 10वी–11वी शताब्दी प्रतीत होता है।

विष्णु को एक अलकृत कमलासन पर खडे वरद मुद्रा मे प्रदर्शित किया गया है। प्रतिमा का प्रभामण्डल अत्यत अलकृत है। नीचे दोनो पार्श्वो मे चामर वाहिनी तथा उपर गरूण की छोटी मूर्ति उत्कीर्ण है। आसन के नीचे पीठिका पर अनेक पूजको की छोटी–2 मूर्तियॉ उत्कीर्ण है। कमर से घुटने के उपर तक अधोवस्त्र बहुत ही सुन्दर बनाये गये है। प्रतिमा चतुमुर्खी है जिसमे वाराह, सिह और मानव के साथ–साथ मत्स्य भी अकित है। भुजाओ मे विविध आयुद्यो के साथ धनुष का अकन हुआ है। प्रतिमा मे किरीट मुकुट अत्यन्त भव्य बनाया गया है। इसके

अतिरिक्त गले मे हार, हाथो मे ककण तथा भुजबन्द, कमर मे मेखला तथा वनमाला से अलकृत है। विषय एव कला की दृष्टि से यह प्रतिमा अद्वितीय है। वस्तुत मूर्ति के ये समस्त शिल्प पाल युग के अनुरूप है।

19 करमैनी डीह

यह पुरास्थल फाजिलनगर से 4 किमी0 उत्तर पूर्व तथा पडरौना से 22 किमी0 दक्षिण–पूर्व पडरौना–पटहेरवा मार्ग पर स्थित है। यह पुरास्थल गॉव के दक्षिण लगभग 1 किमी0 की दूरी पर है जिसे गडेरिया के नाम से जाना जाता है। लगभग 3 एकड मे फैला यह पुरास्थल पूर्णतया समतल हो चुका है और इस पर कृषि कार्य हो रहा है । यहॉ से कुषाणकालीन लाल रग के मिट्टी के बर्तन के टुकडे मिले है, जिनमे घडे, हाडी, कडाही, नॉद आदि प्रमुख है ।

20 भेलयॉ चन्द्रौटा

यह पुरास्थल पडरौना पटहेरवा मार्ग पर, पडरौना से 22 किमी0 दक्षिण–पूर्व मे स्थित है। यह लगभग 1 हेक्टेयर क्षेत्र मे फैला हुआ है तथा इसकी ऊॅचाई समीपवर्ती जमीनी स्तर से लगभग 3 फीट है। यह गॉव के उत्तर–पश्चिम दिशा मे स्थित है। स्थल के पूर्वी छोर पर एक शिव मदिर है। पुरास्थल समतल हो चुका है तथा इस पर कृषि कार्य हो रहा है। यहॉ ईट के टुकडे बिखरे पडे है। यहॉ से कुषाण एव गुप्त युगीन मिट्टी के लाल रग के मृदभाण्ड के टुकडे मिले है जिनमे चौडे मुॅह वाले घडे तथा घडे के ऊपर वृत्त के अन्दर डॉट के चिन्ह, बेसिन, कटोरा, हाडी, खिलौने के रूप मे मिट्टी के जानवर शामिल है।

21 अहलादपुर

यह पुरास्थल फाजिलनगर से दो किमी0 पूर्व फाजिलनगर–तमकुही मार्ग के किनारे स्थित है। यह पुरास्थल लगभग 7 एकड मे फैला हुआ है। आज भी लगभग दो एकड क्षेत्र मे टीले का अवशेष विद्यमान है, जिसकी ऊॅचाई आस–पास के जमीनी स्तर से लगभग 3 मी0 है। बाकी हिस्सा समतल हो चुका है तथा उन पर कृषि कार्य हो रहा है। टीले के पश्चिम मे लगभग 100 मी0 की दूरी पर सोना नाला उत्तर से दक्षिण की ओर बहता है। यहॉ से परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र

के टुकडे तथा कुषाणकालीन लाल रग के मृदभाण्डो के टुकडे प्राप्त हुए है जिनमे हाडी, तस्तरी, टोटीदार बर्तन, ढक्कन एव घडा शामिल है।

22 तुर्कपट्टी

यह पुरास्थल पडरौना से 18 किमी0 दक्षिण–पूर्व तथा कसया से 15 किमी0 पूर्व कसया–सेवरही मार्ग पर स्थित है। यह स्थल स्थानीय लोगो मे 'भर योगी का टीला' नाम से जाना जाता है। टीले के पश्चिम मे एक तालाब है जिसे ग्रामीण लोग देव ताल के नाम से पुकारते है। यहाँ से 1981 ई0 मे सूर्य की दो प्रस्तर प्रतिमाएँ मिली थी। एक प्रतिमा बलुआ पत्थर का है जिसे गुप्तयुगीन माना जाता है (छायाचित्र सख्या–38) तथा दूसरा काले रग का है जिसे 11वी शताब्दी (पालयुगीन) का माना जाता है(छायाचित्र सख्या–39)। वर्तमान मे काले रग की प्रतिमा मन्दिर मे स्थापित है।

पहली प्रतिमा काले चमकदार पत्थर से निर्मित है और पाल युगीन प्रतीत होती है। यह प्रतिमा सप्ताश्व रथ पर आरूढ स्थानक समभग मुद्रा मे स्थित है तथा अरूण को सारथी के रूप मे परिलक्षित किया गया है। यह द्विभुजी प्रतिमा उद्दीच्य वेशधारी है तथा इसके दोनो हाथो मे पूर्ण विकसित सनाल पद्म प्रदर्शित किया गया है जो कमर तक उठा हुआ है। इसका सिर प्रमामण्डल से अलकृत है। स्मित मुद्रा से युक्त आदित्य के सिर पर किरीट मुकुट, गले मे हार, बाहो मे ककण तथा भुजबन्द, कटि मे मेखला तथा उदरबन्ध एव यज्ञोपवीत धारण किये हुए है। पद से लेकर वक्ष तक का भाग चोलक से आवृत है। चरणो मे उपानह पश्चिमी प्रभाव को सूचित करता है। शीर्ष पर दोनो पार्श्वो मे दो गणधर तथा मध्य पार्श्व मे दो सिह अकित है। सूर्य के सभी अग पुष्ट एव मासल है। प्रतिमा के वाम पार्श्व मे दण्डी को बाएँ हाथ मे दण्ड लिये तथा दक्षिण पार्श्व मे पिगल को हाथ मे लेखनी और दवात लिये, अधकासुर को कुचलते हुए प्रदर्शित किया गया है। इसमे सूर्य की पाँच पत्नियाँ उषा, प्रत्यूषा, महाश्वेता, छाया तथा सज्ञा प्रदर्शित की गई है। उषा और प्रत्यूषा सर सधान करते हुए अकित है, जबकि छाया और सज्ञा को हाथ मे

चामर लिये दिखाया गया है। सूर्य के पैर के पास अकित महाश्वेता का बाया हाथ अभय मुद्रा मे है।

बलुए पत्थर पर निर्मित दूसरी प्रतिमा का शिल्प गुप्त युगीन प्रतीत होता है। इस प्रतिमा की लम्बाई 54 इच है जो वृहत्तसहिता मे सूर्य प्रतिमा के निर्माण के लिए निर्दिष्ट परिमाप, तीन हाथ के बराबर है। इस प्रतिमा के हाथ खण्डित है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह चतुभुर्जी स्वरूप की प्रतिमा रही होगी, जिसके दो हाथो मे पूर्ण विकसित सनाल पद्म अकित रहा होगा, क्योकि कधे के उपर दो पूर्ण विकसित कमल मौजूद है। इसके सिर पर ऊँचा किरीटमुकुट, कान मे आकर्षण कुण्डल, कधो तक लटकती हुई केशराशि एव गले मे हार इसकी शोभा को सबर्धित करते है। उदरबन्ध एव कटि मे मेखला धारण किये हुए यह प्रतिमा भी उद्दीच्य वेश मे निर्मित है। देवता के साथ पार्श्व मे उषा एव प्रत्यूषा सर सधान करते हुए तथा महाश्वेता, छाया, सज्ञा एव सारथी अरूण को प्रदर्शित किया गया है। महाश्वेता का दाया हाथ अभय मुद्रा मे है। सूर्य के दो अनुचर पिगल और दण्ड कमश दाहिनी और बायी ओर अकित है। पिगल के हाथ मे लेखनी व पत्रक है तथा दण्ड बायी हाथ मे दण्ड धारण किये हुए अकित है। प्रतिमा के पैरो मे उपानह इस बात का सकेत करते है कि इसका निमार्ण विदेशी प्रभाव के अन्तर्गत हुआ था। इस प्रकार अपने शिल्पो के आधार पर यह प्रतिमा गुप्तकालीन प्रतीत होती है।

23 राजा पाकड

यह पुरास्थल तमकुही से 12 किमी0 उत्तर–पश्चिम, पडरौना से 30 किमी0 दक्षिण–पूर्व तथा कसया से 32 किमी0 पूर्व कसया–सेवरही मार्ग पर स्थित है। 3 मी0 ऊँचा तथा 50×40 वर्ग मी0 के क्षेत्र मे फैला हुआ यह स्थल, गॉव के दक्षिण–पश्चिम मे स्थित है। टीले के ऊपर एक नीम के पेड के नीचे दुर्गा जी का स्थान है। सम्पूर्ण टीले पर ईंट के टुकडे बिखरे पडे है। यहॉ से परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के टुकडे तथा कुषाणयुगीन लाल रग के मिट्टी के बर्तन के टुकडे प्राप्त हुए है जिनमे घडे, कटोरे, ढक्कन, बेसिन, होठदार कटोरा, जाली छाप मिट्टी का बर्तन तथा मोटी उत्तरी कृष्ण मार्जित मृदभाण्ड शामिल है।

24 गुरूवलिया

यह स्थल राजा पाकड से लगभग 4 किमी0 पूर्व मे स्थित है। यह गॉव के पूर्व मे एक तालाब के पश्चिमी किनारे स्थित है। यह लगभग 0 5 हेक्टेयर क्षेत्र मे फैला हुआ है तथा समीपवर्ती जमीन से लगभग 1 मी0 ऊँचा है। यह स्थल क्षतिग्रस्त हो चुका है। इसके पश्चिमी किनारे पर प्राथमिक विद्यालय स्थित है। स्थानीय लोगो के अनुसार यह पूर्व मे बजारो का निवास स्थल था। यहॉ से कुषाणकालीन लाल पात्र के टुकडे प्राप्त हुए है। जिनमे तस्तरी, हाडी, घडे, नॉद आदि शामिल है। एक बर्तन के भीतरी भाग मे भूरे एव काले रग का लेप लगा है।

25 घुरपट्टी

यह स्थल पडरौना से 14 किमी0 पूरब तथा तमकुही से 15 किमी0 उत्तर–पश्चिम मे पडरौना–सेवरही मार्ग पर स्थित बिशुनपुरा थाना से 2 किमी0 उत्तर मे स्थित है। इस स्थल के उत्तर मे बॉसी नदी की सहायक मन नदी तथा दक्षिण पश्चिम मे झरही नदी बहती है। 1 5 एकड क्षेत्र मे फैला यह स्थल 2 5 मीटर ऊँचा है। इस टीले पर ईट के टुकडे बिखरे पडे है। यहॉ से प्रारम्भिक मध्य काल के अच्छी तरह पकाये हुये लाल रग के मिट्टी के बर्तन के टुकडे प्राप्त हुये है। इनमे हाडी, नॉद, घडे तथा पूजा के बर्तन शामिल है।

26 सपही टडवॉ

यह पुरास्थल तमकुही से 6 किमी0 उत्तर–पश्चिम झरही नदी के पश्चिमी किनारे पर स्थित है। यह लगभग 13 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है। पुरास्थल के कुछ हिस्से पर आबादी बसी हुई है तथा बाकी के हिस्से पर कृषि कार्य हो रहा है। स्थानीय लोगो के अनुसार यह पूर्व मे चेरो की बस्ती थी। यहॉ से शोधार्थी को तॉबे के दो लिखित सिक्के प्राप्त हुए है। इनकी भाषा अरबी है। एक सिक्के के मुख्य भाग पर इब्राहीमशाह तथा पृष्ठ भाग पर खलीफा अबुलफतह का नाम अकित है(छायाचित्र सख्या–40)। दूसरे सिक्के के मुख्य भाग पर मुहम्मदशाह अकित है। इसके पृष्ठ भाग पर अकित लेख घिस जाने के कारण अपाठ्य है। यहॉ से

आरम्भिक मध्यकाल के लाल रग के मृदभाण्ड मिले है जिनमे टोटीदार बर्तन, घडे, कटोरे, बेसीन आदि शामिल है।

27 मोरवन मठिया

यह तमकुही से 6 किमी0 दक्षिण–पूर्व तमकुही–तरेया मार्ग के दक्षिण ओर स्थित है। गॉव के पश्चिम मे स्थित यह स्थल लगभग 7 एकड मे फैला हुआ है। 30×25 वर्गमीटर के एक टीले को छोडकर सम्पूर्ण स्थल समतल हो चुका है तथा उनके उपर कृषि कार्य हो रहा है। टीला जमीन से 2 मीटर ऊँचा है। टीले पर 3–4 सौ वर्ष पुराना एक बेल का पेड है। यह स्थान स्थानीय लोगो मे 'योगी वीर बाबा का स्थान' नाम से जाना जाता है। यहॉ से 22 वलय कूप के प्रमाण मिले है। यहॉ जमीन के अन्दर पक्की ईट की दीवारो के साक्ष्य भी मिलते है। ग्रामीणो ने यहॉ से प्राप्त पर्याप्त सख्या मे कौडियॉ दिखाई। यहॉ से प्राप्त पूर्ण ईट के आकार की माप 40×24×6 सेमी0 है। यहॉ के वलय कूपो के ईटो मे घाठ बने हुए है जो एक दूसरे से आपस मे जुडे हुए है। यहॉ से कुषाणयुगीन लाल रग के मिट्टी के बर्तन प्राप्त हुए है जिनमे टोटीदार बर्तन, घडे, कटोरे घुडीदार ढक्कन, सुपारी के आकार की मिट्टी की गुडिया (Beads) तथा जानवर का मिट्टी का खिलौना शामिल है।

28 दनियाडी

यह पुरास्थल तमकुही–सिसवा मार्ग पर तमकुही से 18 किम0 पूर्व मे स्थित है। यह लगभग 14 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है। वर्तमान मे सम्पूर्ण भाग समतल हो चुका है और उस पर कृषि कार्य किया जा रहा है। यहॉ से लाल रग के बर्तन, परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र एव कुषाणयुगीन टोटीदार बर्तन, चौडे मुँह के घडे, बेसीन तथा तस्तरी प्राप्त हुए है।

29 फाजिलनगर

फाजिलनगर का टीला सठियॉव से उत्तर–पूर्व मे लगभग 800 मीटर की दूरी पर कसया–तमकुही मार्ग के बायी ओर स्थित है। कसया से इसकी दूरी

लगभग 18 किमी0 दक्षिण–पूर्व मे है। लगभग 100 मीटर लम्बे एव 70 मीटर चौडे क्षेत्र मे फैले इस टीले की ऊँचाई लगभग 7 मीटर है जो ईट के टुकड से पटा पडा है (छायाचित्र सख्या–41)। इसके पूर्व मे एक बडा सा तालाब है। वर्तमान मे टीले के उपर एक प्राचीन कर्ना वृक्ष के नीचे एक मजार है जिसे लोग 'सइदन बाबा की मजार' कहते है। ऐसा प्रतीत होता है कि मूल रूप मे टीले का आकार इससे बहुत अधिक रहा होगा।

1876 ई0 मे जनपद मे प्राचीन स्थलो के सर्वेक्षण के दौरान ए0सी0एल0 कार्लाइल ने इस टीले का निरीक्षण किया था। उनका मत है कि फाजिलनगर का टीला उस स्तूप को द्योतित करता है जिसका निर्माण मल्लो द्वारा बुद्ध के अस्थि अवशेष पर किया गया था। 1979–80 मे गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास पुरातत्व एव सस्कृत विभाग द्वारा इस टीले का उत्खनन कराया गया था जहॉ से गुप्त काल से लेकर मध्य काल तक के अवशेष मिले थे। इसका विस्तृत विवरण अध्याय 3 मे दिया जा चुका है।

शोधार्थी ने इस टीले का पुन गहन सर्वेक्षण किया जहॉ से कुषाण एव मध्य युगीन लाल रग के बर्तन के टुकडे प्राप्त हुए, जिनमे बेलनाकार चूडीदार ढक्कन जो स्पिकलर का ढक्कन हो सकता है, टोटीदार बर्तन, बेसीन (लाल स्लिप से बाहर की ओर डिजाइन किया हुआ), कढाही, कटोरा, तस्तरी एव ढक्कन शामिल है। दीवारो से प्राप्त पकी हुई पूर्ण ईटो की माप $38 \times 22 \times 6$ सेमी0 तथा $40 \times 24 \times 7$ सेमी0 है।

30 सठियॉव

यह पुरास्थल कसया से 18 किमी0 दक्षिण–पूर्व तथा फाजिलनगर से लगभग 500 मीटर की दूरी पर दक्षिण मे स्थित है। टीले के थोडे से दक्षिणी–पूर्वी भाग को छोडकर सम्पूर्ण हिस्से पर गॉव बसा हुआ है। गॉव के चतुर्दिक नीचा धरातल सूचित करता है कि पूर्व मे यह स्थल सभी ओर से तालाब से घिरा रहा होगा। वर्तमान मे स्थल के दक्षिण तथा उत्तर–पश्चिम मे एक–एक बडे तालाब है। यहॉ से दक्षिण–पश्चिम मे कुछ दूरी पर अन्हया नाला बहता है। यह लगभग 35

एकड के क्षेत्र मे फैला हुआ है (छायाचित्र सख्या–42)। प्रथमत 1876 मे इस स्थल के पुरातात्विक महत्व को प्रकाश मे लाने का श्रेय कार्लाइल को है जिन्होने इसे मल्लो की राजधानी पावा बताया था। इसी सन्दर्भ मे गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास पुरातत्व एव सस्कृत विभाग ने 1979–80 मे सठियॉव ग्राम के एक गड्ढे की सफाई करायी थी, जहॉ से पक्की ईटो से निर्मित दीवार के साथ–साथ लाल रग के बर्तन, कृष्ण लेपित बर्तन के कुछ टुकडे, उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र तथा काले और लाल रग के मृदभाण्डो के टुकडे मिले थे। इसका विस्तृत विवरण पिछले अध्याय मे किया जा चुका है।

शोधार्थी द्वारा भी इस स्थल का सर्वेक्षण किया गया जहॉ धरातल पर पक्की ईटो की अनेक दीवारे तथा वलय कूप दिखाई दिये तथा उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र, लाल पात्र और मध्ययुगीन लाल रग के पात्र–खण्ड प्राप्त हुये है जिनमे कटोरे, घडे, तस्तरी, हाडी, हत्थायुक्त कडाही शामिल है। कृष्ण लेपित पात्र–खण्ड भी यहॉ से प्राप्त हुये। ईटो की माप 40×26×6 सेमी0 है।

31 अमवॉ

यह पुरास्थल कसया से लगभग 15 किमी0 दक्षिण पूर्व तथा फाजिलनगर से 3 5 किमी0 पश्चिम मे कसया–फाजिलनगर मार्ग के किनारे स्थित है। यह लगभग 2 5 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है। इसके सम्पूर्ण भाग पर कृषि कार्य हो रहा है। यहॉ से कुषाणयुगीन लाल पात्र परम्परा के मृदभाण्ड के टुकडे प्राप्त हुये है, जिनमे ज्यादतर बेसीन, घडा और नॉद के है। एक कैरिनेटेड हाडी का टुकडा भी मिला है जिसके उपर आग पर चढाने का निशान बना हुआ है।

32 मरचैया डीह (सरेया महन्थ पट्टी)

यह स्थल कसय से लगभग 16 किमी0 दक्षिण–पूर्व तथा फाजिलनगर से 8 किमी0 दक्षिण–पश्चिम मे स्थित है। जनश्रुति के अनुसार मीर्चे की अत्यधिक उत्पादन के कारण इसका नाम मरचैया डीह पडा। यह लगभग 1 हेक्टेयर क्षेत्र मे फैला हुआ है, जिसके उपर ईंट के टुकडे बिखरे पड़े है। इनमे से कुछ की माप 45 7×26×5 सेमी0 है। यह सम्भवत मौर्य काल से सम्बन्धित है। इस स्थल की

खोज सर्वप्रथम कार्लाइल ने की थी। शोधार्थी द्वारा इस स्थल का पुन सर्वेक्षण किया गया। यहॉ से प्राप्त पात्र–खण्डो मे परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र से लेकर कुषाण काल तक के बर्तन शामिल है जिनमे कटोरे, तस्तरी, विभिन्न प्रकार के घडे एव बेसीन प्रमुख है। यहॉ से लाल पात्र परम्परा के बर्तन तथा कुछ टूटी हुई कुषाण मृण्मूर्तियॉ भी मिली है।

33 नदवॉ–बिशुनपुर

यह पुरास्थल कसया से लगभग 16 किमी0 दक्षिण–पूर्व तथा फाजिलनगर से 7 किमी0 दक्षिण–पश्चिम, जोकवॉ–जॉवरा लिक मार्ग पर स्थित है। इसकी खोज सर्वप्रथम ए0 सी0एल0 कार्लाइल ने की थी। शोधार्थी द्वारा इस स्थल का पुन गहन सर्वेक्षण किया गया। यह लगभग 7 एकड मे क्षेत्र मे फैला हुआ है, जिसकी ऊँचाई समीपवर्ती भू–भाग से लगभग 3 मीटर है । स्थल से लगभग 150 मी0 की दूरी पर पूर्व की ओर एक तालाब है जो लगभग 2 हेक्टेयर क्षेत्र मे फैला है। टीले के कुछ हिस्से पर गॉव बसा है, कुछ हिस्से पर खेती हो रही है तथा कुछ खाली पडा है। टीले पर चारो ओर ईंट के टुकडे प्राप्त होते है जिनमे से कुछ पूर्ण ईटो की माप $44 \times 22 \times 6$ सेमी0 तथा $38 \times 19 \times 5$ सेमी0 है। यहॉ से मृण्मूर्तियॉ अत्यधिक सख्या मे मिलती है। यहॉ से धूसर पात्र, उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र, लाल पात्र आदि के टुकडे मिले है।

यहॉ से एक खॉचेदार मिट्टी का लोढा पूर्ण रूप मे प्राप्त हुआ है जिसकी लम्बाई 20 सेमी0 तथा बीच मे मोटाई 18 सेमी0 है (छायाचित्र सख्या–43)। बेलनाकार लटकन बहुत सख्या मे मिले है जिनमे दोनो किनारो पर धागा बाध कर लटकाने के लिए खॉचे बने हुए है (छायाचित्र सख्या–44)। कुछ पर तारे का चिन्ह अकित है। सामान्यत इनकी लम्बाई 6–7 सेमी0 तथा बीच मे मोटाई 8–10 सेमी0 है। लाल रग के मिट्टी के बर्तनो मे तसला (बेसीन) घडे, दीये के ढक्कन, टोटीदार बर्तन, दो कलश (छायाचित्र सख्या–45) एव गोली प्रमुख है।

यहॉ से विविध प्रकार की मिट्टी की मूर्तियॉ प्रचुर मात्रा मे मिली है (छायाचित्र सख्या–46 से 51 तक)। ऐसा प्रतीत होता है कि यह स्थल मूर्तियो के

निर्माण का केन्द्र था। अत इनकी माग अधिक रही होगी तथा सुदूरवर्ती क्षेत्रो मे भी यहॉ से मूर्तियॉ जाती रही होगी। शोधार्थी को प्राप्त मृण्मूर्तियॉ अन्दर से खोखली है। धड के उपर का हिस्सा अलग से बना कर जोडा गया है। मूर्तियॉ अलकृत एव आभूषण युक्त है। नारी मूर्तियो को गले मे हार पहने दिखाई गया है तथा केस सज्जा के रूप मे पीछे की ओर जूडा बॅधा हुआ है। कानो मे अलकृत कुण्डल सुशोभित है तथा माथे पर बिन्दी को दबा कर बनाया गया है । दो मूर्तियॉ साचे की बनी मिली है तथा कुछ टूटी हुई मिट्टी की खोखली मूर्तियॉ भी मिली है। कुछ मृण्मूर्तियो के खण्डित हाथ एव पैर मिले है (छायाचित्र सख्या–52) जो आभूषण युक्त है। मूर्तियो के उपर गहरे लाल रग का लेप लगा है जो कुषाण काल की मूर्तियो मे प्राय मिलता है। इस प्रकार इस पुरास्थल से प्राप्त सारे अवशेष कुषाणकालीन है। नदवा से प्राप्त मृण्मूर्तियो का एक अच्छा–खासा सग्रह धनहॉ के एक ग्रामीण के घर रखी हुई है। इनमे पुरूष एव नारी दोनो की मूर्तियॉ शामिल है, जो विभिन्न अलकरणो से सुशोभित है । इनमे से अधिकाश हस्त निर्मित है तथा कुछ सॉचे मे ढली है। हस्त निर्मित मृण्मूर्तियॉ अपरिष्कृत, कुछ भोडी, सौष्ठव विहीन और लोकतत्व के अधिक निकट है। स्त्री मूर्तियो मे मोटे ओष्ठ, उठी हुई ऑखे तथा लम्बे कान जो अलग से चिपकाये गये है, देखने को मिलते है। ये कुषाण काल के कलात्मक वैशिष्टय को द्योतित करते है। नथूनो के स्थान पर छिद्र है। कुछ मृण्मूर्तियो मे नाक को चुटकी से दबा कर बनाया गया है। सिर के बाल उत्कीर्ण करके बनाये गये है। नाभि को छिद्र द्धारा दिखाया गया है। गले मे हार, कान मे बडे–बडे कुण्डल, हाथ मे केयूर तथा चूडियॉ अलग से बना कर चिपकायी गयी है। एक स्त्री मूर्ति एक शिशु को बॉए हाथ से पकडे हुए अकधात्री के रूप मे निर्मित है । सभी मृण्मूर्ति लाल रग की है।

ऐसा प्रतीत होता है कि कुषाण काल मे प्रस्तर के मूर्तियो के निर्माण की ओर विशेष ध्यान दिये जाने के परिणामस्वरूप मिट्टी की मूर्तियो के निर्माण की ओर अधिक ध्यान नही दिया गया।

34 बेईली

यह स्थल नदवॉ से लगभग 2 किमी0 दक्षिण मे स्थित है जो गॉव के पूर्व मे लगभग 1 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है। वर्तमान मे यह पूर्णतया समतल हो चुका है तथा इस पर खेती की जा रही है। यहॉ से उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा के बर्तन के टुकडे तथा कुषाणयुगीन लाल रग के मृदभाण्ड के टुकडे मिले है। यहॉ से मृण्मूर्तियॉ अधिक सख्या मे मिलती है। यहॉ से प्राप्त एक बहुए पत्थर की देवी प्रतिमा, मिट्टी का लोटा तथा खिलौने के रूप मे चिडियॉ गॉव के एक नागरिक के घर रखी हुई है। देवी की प्रतिमा चतुर्भुजी है जो शव के ऊपर आरूढ है। इसके एक हाथ मे नरमुण्ड, एक हाथ मे कटार, एक हाथ ओठ से लगा हुआ तथा एक हाथ पेट के सामने पात्र पकडे हुये है। शीर्ष पर पॉच सर्प फन निकाले हुये है। इसकी सभी पसलियॉ स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है (छायाचित्र सख्या–53)। यह काली या चामुण्डा देवी की प्रतिमा हो सकती है। प्रतिमा के नीचे धुऍ का निशान बना हुआ है। देवी के सिर पर करण्ड मुकुट तथा कान मे कुण्डल अकित है।

चामुण्डा की कथा मार्कण्डेय पुराण मे विस्तुत रूप से मिलती है। कालिका देवी ने चण्ड तथा मुण्ड नामक दो असुरो को मारकर चण्डिका देवी को समर्पित किया। अत उन्होने कालिका का नाम चामुण्डा रख दिया।

यस्माच्चण्ड च मुण्ड व गृहीत्वा त्वमुपागता।
चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि भविष्यसि।।[1]

अमरकोश मे सप्तमातृकाओ मे चामुण्डा का नाम भी उल्लिखित है"चामुण्डा सप्तमातर"।[2] मार्कण्डेय पुराण[3] मे चामुण्डा को विकराल मुखवाली तथा मुण्डमाला से विभूषित कहा गया है। विष्णु धर्मोत्तर मे चामुण्डा को कृश देहवाली कहा गया है जो

---

[1] *मार्कण्डेय पुराण,* अध्याय 5, श्लोक 6।

[2] *अमरकोश,* प्रथमकाण्ड, श्लोक 2।

[3] *मार्कण्डेय पुराण,* अध्याय 11, श्लोक 21।

सर्पो का आभूषण धारण करती है तथा मुख, दन्त युक्त होता है।[1] अपराजित पृच्छा मे इसे शवारूढ कहा गया है "शवारूढ तु चामुण्डा जघे घण्टावलम्बिके"। रूपमण्डन के अनुसार यह देवी अपने हाथो मे यथा–स्थान त्रिशूल, खेटक, खण्ड, धनुष, पाश, अकुश, बाण, कुठार, दण्ड, गदा, वज्र धारण करती है। चामुण्डा की प्रस्तर मूर्तियॅ मुख्य रूप से एलौरा, वेलौर, कुम्भकोणम[2], जयपुर[3] तथा तमिलनाडु[4] से मिली है।

35 धनहॉ

यह पुरास्थल फाजिलनगर से लगभग 7 5 किमी0 दक्षिण–पश्चिम तथा कसया से लगभग 18 किमी0 दक्षिण पूर्व मे, बेइली से 2 किमी0 दक्षिण–पश्चिम मे स्थित है। घाघी नदी, गॉव के पूरब मे बहती है तथा बनी नदी, पुरास्थल के ऊत्तर मे। पुरास्थल का अधिकाश हिस्सा क्षतिग्रस्त हो चुका है तथा उस पर कृषि कार्य हो रहा है । जो बचा हुआ भाग है, उसकी माप उत्तर से दक्षिण लगभग 150 मीटर तथा पूरब से पश्चिम 100 मीटर है। यहॉ से उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र लाल लेपित पात्र और मध्य युगीन पात्र तथा लाल पर काले रग की पालिश किये हुए बर्तन के टुकडे प्राप्त हुये है। इनमे हाडी, घडा, तस्तरी, बेसीन, ढक्कन व नॉद शामिल है। यहॉ से प्राप्त एक घडे के उपर काले रग का चमकदार पालिश है। एक पकी हुयी खडित ईंट के उपर किसी जानवर के खुर का निशान अकित है जो गॉव के एक नागरिक के घर रखी हुई है। गॉव से सटे पूर्व की ओर खण्डित ईटो से निर्मित एक अष्टपदीय वृत्ताकार स्तूप का अवशेष अभी भी विद्यमान है जिसकी ऊॅचाई लगभग 4 मीटर तथा परिधि लगभग 30 मीटर है(छायाचित्र सख्या–54)।

36 बकुलहर कला फाजिलनगर से 4 किमी0 दक्षिण पश्चिम मे स्थित, यह स्थल गॉव के पश्चिम एक तालाब के पश्चिमी किनारे पर स्थित है। यह स्थल

---

[1] *विष्णु धर्मोत्तर पुराण,* 123, 8–101

[2] राव, गोपीनाथ, *एलीमेण्ट्स ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी,* पुष्ट 355

[3] बनर्जी, जे0 एन0, *डेवेलपमेण्ट ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी,* पृ0 507।

[4] लाल, एस0 के0, *फीमेल डिविनिटीज,* चित्र 14 ए,बी0,सी0,

लगभग 50×30 वर्गमीटर के क्षेत्र मे फैला हुआ है, जिसकी ऊँचाई लगभग 3 मीटर है। वर्तमान मे टीले पर एक शिव मन्दिर स्थापित है। सम्पूर्ण टीला ईटो के टुकडो से पटा पडा है। प्राचीन ईटो की दीवारे स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। यहॉ से काले पत्थर की ब्रह्मा की खण्डित मूर्ति (छायाचित्र सख्या–55), शिवलिग तथा अन्य प्रतिमाऍ मिली है जो 11वी शताब्दी की प्रतीत होती है। ब्रह्मा की प्रतिमा चतुर्मुखी है तथा दाढी युक्त है। दो हाथ खण्डित है तथा दो हाथ स्कन्ध से ऊपर उठे हुए है। हाथो मे ग्रहित वस्तु की पहचान अस्पष्ट है। यहॉ से प्राप्त पूर्ण ईटो की माप 28×22×6 सेमी0 है। टीले के दक्षिण एक वलय कूप अब भी विद्यमान है। गॉव के दक्षिण–पश्चिम दिशा मे लगभग 400 मी0 लम्बा एव 60 मी0 चौडा आयताकार तालाब है जिसके किनारे समतल है। जनश्रुति के अनुसार यहॉ किसी मल्ल राजा द्वारा विशेष अवसर पर घुड दौड का आयोजन किया जाता था, जिसके कारण इसका नाम घोडधाप पडा। यह कमल सरोवर जैसा प्रतीत होता है।

37 उस्मानपुर (वीरभारी टीला)

यह फ़ाजिलनगर से लगभग 8 किमी0 दक्षिण मे स्थित है। स्थानीय लोगो मे यह वीरभारी का डीह नाम से प्रचलित है (छायाचित्र सख्या–56)। यह गॉव के पश्चिम मे लगभग 300 मीटर की दूरी पर स्थित है। पुरास्थल से 2 किमी0 पश्चिम मे सोनवा नाला तथा 3 किमी0 दक्षिण–पूर्व मे कटेया सोता बहता है। इस पुरा स्थल का सीमित उत्खनन हो चुका है जिसका विस्तृत विवरण अध्याय तीन मे दिया गया है।

शोधार्थी द्वारा भी इस पुरास्थल का गहन सर्वेक्षण किया गया, जहॉ से परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित के कुछ टुकडे एव कुषाण युगीन लाल रग के मृद्भाण्ड प्राप्त हुए है जिसमे कटोरे, तस्तरी, घडे, विभिन्न प्रकार के स्टोरेजजार, मिट्टी का खिलौना, लोढा, पहिए एव कुछ मृण्मूर्तियॉ शामिल है।

38 सुमही बुजुर्ग

यह स्थल फाजिलनगर से लगभग 12 किमी0 दक्षिण मे स्थित है। यहॉ से ईटो से निर्मित एक वर्गाकार स्तूप मिला है, जिसकी ऊँचाई लगभग 2 मीटर

है। वर्तमान मे इसके ऊपर ग्रामीण लोगो द्वारा सीमेण्ट का लिग स्थापित कर पूजा किया जाता है (छायाचित्र सख्या–57)। इस वर्गाकार स्तूप के ऊपरी दीवार पर अलकृत ईटो का अवशेष अब भी विद्यमान है। स्थानीय लोगो से ज्ञात हुआ कि इसके ऊपरी चबूतरे पर काले पत्थर की धडविहीन कोई मूर्ति थी, जिसे कुछ वर्षो पूर्व फाजिलनगर के स्थानीय लोग उठा ले गये। यदि यह सत्य है तो ऐसा लगता है कि पालो एव प्रतिहारो के काल मे इस स्तूप का प्रयोग मदिर के रूप मे हुआ होगा।

39 गागी टीकर

यह स्थल फाजिलनगर से 4 किमी0 उत्तर–पश्चिम दिशा मे स्थित है। यह टीला जिसे धूस के नाम से जाना जाता है, गॉव के दक्षिण–पश्चिम लगभग 500 मीटर की दूरी पर स्थित है। घाघी नदी इस पुरा स्थल से पश्चिम मे लगभग 4 किमी0 की दूरी पर बहती है। यह स्थल लगभग 2 हेक्टेयर क्षेत्र मे फैला हुआ है तथा इसकी ऊॅचाई लगभग 3 मीटर है। वर्तमान मे टीले के अधिकाश हिस्से पर कब्रगाह बना हुआ है। यहॉ से प्राप्त मृदभाण्ड के टुकडे लाल, लाल लेपित है। ये कुषाण काल तथा प्रारम्भिक मध्य काल से सम्बन्धित है।

40 सोहग

यह स्थल, फाजिलनगर से लगभग 3 किमी0 उत्तर पश्चिम मे स्थित है। लगभग 10 एकड मे फैले इस टीले की ऊॅचाई लगभग 4 मी0 है। टीले पर वर्तमान मे जनता इण्टर कालेज, सोहग स्थापित है। टीले के ऊपरी स्तर से बहुत कम मात्रा मे कुषाण एव मध्य कालीन लाल मिट्टी के बर्तन के टुकडे प्राप्त हुए है। कुछ टुकडे उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के भी है। मृदभाण्डो मे घडे, हाडी, नाद और ढक्कन शामिल है।

41 करमा टोला

यह स्थल, फाजिलनगर से लगभग 4 किमी0 उत्तर फाजिलनगर–तुर्कपट्टी मार्ग के किनारे स्थित है। लगभग 25 एकड क्षेत्र मे फैले इस स्थल की ऊॅचाई लगभग 5 मीटर है। यहॉ से परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र

परम्परा से लेकर गुप्त काल तक के बर्तन, प्राप्त हुए है। जिनमे परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित का ढक्कन तथा गुप्त कालीन घडे का टुकडा मिला है। इसके साथ ही यहॉ से कुषाण युगीन बेसीन, चौडे मुँह वाले घडे तथा हाडी के टुकडे मिले है।

42 छहूॅ–अ

यह गॉव, कसया से लगभग 12 5 किमी0 पूरब तथा फाजिलनगर से लगभग 7 5 किमी0 उत्तर कसया–तुर्कपट्टी मार्ग के किनारे स्थित है। यह पुरास्थल गॉव के उत्तर–पश्चिम दिशा मे है। यह लगभग 3 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैला हुआ है। यहॉ से 11वी सदी की कुछ काले रग के पत्थर पर निर्मित, हिन्दू प्रतिमाएँ मिली है जिन्हे टीले पर ही स्थापित कर दिया गया है। इनमे सूर्य प्रतिमा विशेष उल्लेखनीय है जो दोनो हाथो मे पूर्ण विकसित सनाल पद्म धारण किये हुए है (छायाचित्र सख्या–58)। सूर्य प्रतिमा की ऊँचाई 47 सेमी0 तथा चौडाई 25 सेमी0 है। अन्य प्रतिमाओ मे गणेश की प्रतिमा 38 सेमी0 ऊँची तथा 19 सेमी0 चौडी है। वराह प्रतिमा की ऊॅचाई 27 सेमी0 तथा आगे से पीछे तक घड 34 सेमी0 लम्बा है (छायाचित्र सख्या–59)। विष्णु के वाराह अवतार के रूप मे वाराह एव नृवराह प्रतिमाओ का अकन सर्वविदित है, लेकिन यहॉ छ शिशुओ के साथ मातृवारा का अकन यहॉ की विशेष उपलब्धि है। टीले पर ही एक छोटा सा शिव मदिर बना है जिसमे 30 सेमी0 ऊँची तथा 25 सेमी0 व्यास का शिव लिग स्थापित है ।

43 छहूॅ–ब

यह स्थल गॉव के पश्चिम एक तालाब के चतुर्दिक स्थित है। लगभग 5 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैले इस टीले की ऊॅचाई लगभग 2 5 मी0 है। सम्पूर्ण टीले पर प्राचीन ईटो के टुकडे बिखरे पडे है।

44 बसडीला

यह पुरास्थल कसया–तुर्कपट्टी मार्ग पर कसया से लगभग 10 किमी0 की दूरी पर, पूर्व मे स्थित है। घाघी नदी इस स्थल से तीन किमी0 पूर्व मे बहती है। यह लगभग 15 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैला हुआ है। इस स्थल से उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र और लाल लेपित पात्र खण्ड प्राप्त हुए है।

45 कुशीनगर

इस पुरास्थल का पूर्ण उत्खनन हो चुका है। उत्खनन से अनेक विहारो के खण्डहर, महापरिनिर्वाण स्तूप (छायाचित्र स0–60) के साथ–साथ अन्य स्तूपो, चैत्यो के अवशेष, बौद्ध प्रतिमाएँ एव अन्य कलाकृतियाँ प्रकाश मे आयी है जिनका विस्तृत विवरण अध्याय 3 मे दिया गया है।

46 नरकटिया खूर्द

यह स्थल कसया–रामकोला मार्ग के किनारे कसया से लगभग 3 किमी0 उत्तर–पश्चिम मे स्थित है। यह लगभग 10 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है। स्थल के कुछ हिस्से पर कब्रगाह, एक शिव मन्दिर तथा मन्दिर से सटे उत्तर मे एक बडा सा तालाब है, जिसे 4–5 सौ साल पुराना बताया जाता है। बाकी हिस्सा समतल हो चुका है तथा उस पर कृषि कार्य हो रहा है। यहाँ से लाल पात्र परम्परा के बर्तन के टुकडे मिले है। इनमे टोटीदार बर्तन, बेसिन चौडे मुँह वाले घडे, नाँद, हाडी, कडाही, पाटरी डिस्क प्रमुख है। एक बर्तन के टुकडे पर उत्कीर्ण आरेखित डिजाइन बना हुआ है। यहाँ से ऐसा कोई पात्र नही मिला है जिसके आधार पर इनका एक निश्चित काल निर्धारित किया जा सके। अनुमानत ये कुषाण और मध्ययुगीन पात्र प्रतीत होते है।

47 टेकुआटार

यह स्थल कसया–रामकोला मार्ग पर कसया से 12 किमी0 उत्तर–पश्चिम तथा पडरौना से लगभग 24 किमी0 दक्षिण–पश्चिम मे स्थित है। यह लगभग 13 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है, जो वर्तमान मे पूर्णतया समतल हो चुका है और सम्पूर्ण भाग पर कृषि कार्य हो रहा है। यहाँ से मध्यकालीन लाल रग के मृदभाण्ड के टुकडे प्राप्त हुए है, जिनमे टोटीदार बर्तन, छिछले तस्तरी, घडे, हाडी आदि शामिल है।

48 प्रेमवलियाँ

यह स्थल कसया–फाजिलनगर मार्ग पर, कसया से लगभग 6 किमी0 दक्षिण–पूर्व मे स्थित है । यह टीला गाँव के उत्तर–पश्चिम मे लगभग एक किमी0

की दूरी पर है। पुरास्थल के दक्षिण मे एक तालाब है । टीले की चोटी पर एक मन्दिर है । यहॉ टूटी प्रतिमाओ का निचला हिस्सा पडा हुआ है जिसकी लोग पूजा करते है । तालाब सहित इस पुरास्थल का क्षेत्रफल लगभग 3 हेक्टेयर है । यह टीला 3 मीटर ऊँचा है । टीले पर प्राचीन ईट के टुकडे बिखरे पडे है। यहॉ मिट्टी के बर्तन कम मिलते है।

49 मैनपुर कोट

यह पुरास्थल कसया–फाजिलनगर मार्ग पर, कसया से 8 किमी0 पूर्व मे प्रेमवलिया से जाने वाली एक उपमार्ग पर स्थित है । यह लगभग 1 5 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैला हुआ है जिसकी ऊँचाई लगभग 10 फीट है । खनुआ नाला इस स्थल से दक्षिण मे बहता है। स्थल के चतुर्दिक वलय कूप के प्रमाण मिलते है। यह स्थल ईट के टुकडो से पटा पडा है, जिसके ऊपर एक पुराना मदिर स्थित है, जिसमे मैनपुर कोट की देवी का चौरा स्थापित है। टीले को देखने से प्रतीत होता है कि यह देवी के विशाल मदिर का अवशेष या खण्डहर है । इसमे लखौरी ईटो का प्रयोग किया गया है । टीले के चारो ओर गहरी खाई है जो आजकल झाडियो से ढकी हुई है। स्थानीय लोगो के अनुसार यहॉ प्राचीन काल मे किसी राजा का किला था और यह देवी उस राज परिवार की कुल–देवी है।

ग्रामीण लोगो से यह भी पता चला है कि नवीन मन्दिर के निर्माण मे नीव की खुदाई के समय, जली हुई लकडियो, खण्डित मूर्तियो तथा अन्य कलात्मक वस्तुऍ मिली थी। यह स्थान देवी का सिद्धपीठ है जहॉ नवरात्रि के समय देवी के दर्शन हेतु बडी सख्या मे लोग आते है और मेला लग जाता है। देवी मन्दिर के सामने हनुमान जी का एक मन्दिर है।

50. कुलकुला स्थान

यह स्थल कसया से 8 किमी0 दक्षिण–पूर्व, कसया–तमकुही मार्ग पर, दिलीपनगर कुडवा के पास घने जगल मे नदी के किनारे स्थित है। यहॉ खुले आकाश के नीचे कुलकुला देवी का चौरा स्थापित है जहॉ प्रति वर्ष नवरात्रि के अवसर पर मेला लगता है। जनश्रुतियो के अनुसार इस स्थान की स्थापना 7 वी

शताब्दी मे नागार्जुन ने की थी। यहॉ ईट के टुकडे यत्र–तत्र बिखरे हुए तथा मृदभाण्ड के टुकडे अत्यल्प मात्रा मे मिलते है।

51 मल्लूडीह

यह पुरास्थल कसया से 7 किमी0 दक्षिण–पूर्व, कसया–तमकुही मार्ग पर स्थित है । घाघी नदी पुरास्थल से 1 किमी0 पूरब तथा बनी नदी 2 किमी0 ऊत्तर मे बहती है । स्थानीय लोगो के अनुसार यह पूर्व मे मल्लो की बस्ती थी जिसके आधार पर इसका नाम मल्लूडीह पडा। पुरास्थल पूर्णतया समतल हो चुका है जिसके कुछ भाग पर गॉव बसा है तथा शेष भाग पर कृषि कार्य हो रहा है। यहॉ से बहुत थोडी मात्रा मे लाल पात्र परम्परा के मृद्भाण्ड जैसे–घडा, नॉद, कडाही, हाडी इत्यादि मिले है।

52 मधुरियॉ

यह पुरास्थल कसया से 8 किमी0 दक्षिण–पूर्व तथा फाजिलनगर से 11 किमी0 उत्तर–पश्चिम, खनुआ नाला के दायी ओर स्थित है । यह स्थल क्षतिग्रस्त हो चुका है। यहॉ से कुछ लाल बर्तन के टुकडे तथा लाल लेपित मृदभाण्ड प्राप्त हुए है ।

53 अन्ध्याडीह

यह कसया से 8 किलो मीटर दक्षिण–पूर्व मे स्थित है। पुरास्थल गॉव के दक्षिण ओर है तथा घाघी नदी, इस स्थल से लगभग 1 किमी पूरब मे बहती है । यह लगभग 4 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैला हुआ है । वर्तमान मे टीले के सम्पूर्ण भाग पर कृषि कार्य हो रहा है । इस स्थल से उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के टुकडे, लाल लेपित पात्र तथा मध्यकालीन मिट्टी के बर्तन के टुकडे प्राप्त हुए है। उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के टुकडे पुरास्थल के पश्चिमी हिस्से से अत्यल्प मात्रा मे मिले है।

54 दीधवा खुर्द

यह पुरास्थल कसया से लगभग 6 किमी0 उत्तर–पश्चिम मे स्थित है। यह पुरी तरह समतल तथा क्षतिग्रस्त हो चुका है। वर्तमान मे इस स्थल पर

कृषि कार्य किया जा रहा है। यहॉ से बहुत थोडी मात्रा मे लाल रग के मृदभाण्ड के टुकडे मिले है।

55 दीधवा बुजुर्ग

यह पुरास्थल, कसया से 3 किमी0 की दूरी पर ऊत्तर मे स्थित है। टीला समतल हो चुका है जिसके अधिकाश भाग पर खेती किया जा रहा है। पुरास्थल का बचा हुआ हिस्सा लगभग 0 05 हेक्टेअर मे फैला हुआ है जिसकी ऊँचाई लगभग 4 फीट है। टीले पर अनेक वलय–कूप विद्यमान है। टीले के उत्तर पश्चिम मे लगभग 100 मी0 की दूरी पर तथा दक्षिण मे लगभग 500 मी0 की दूरी पर दो तालाब स्थित है। टीले पर एक टूटी हुई मूर्ति रखी हुई है जिसकी लोग पूजा करते है। टीले पर ईंट के टुकडे प्रचुर मात्रा मे प्राप्त होते है। टीले से प्राप्त ईटो का उपयोग ग्रामीणो द्वारा अपने घरो के निर्माण मे भी किया गया है। गॉव के एक नागरिक द्वारा मुझे कुछ सिक्के दिखाए गये, जो मध्यकाल से सम्वधित थे। यहॉ से उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र, लाल लेपित पात्र तथा मध्ययुगीन मृदभाण्ड के टुकडे प्राप्त हुए है।

56 बलडीहा

यह स्थल पडरौना तुर्कपट्टी मार्ग पर, पडरौना से 17 किमी0 दक्षिण–पूर्व तथा त ुर्कपट्टी से 1 किमी0 उत्तर–पश्चिम मे स्थित है । यह लगभग 3 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है जिसकी ऊँचाई समीपवर्ती भू–भाग से लगभग 2 मी0 है। यह गॉव के दक्षिण–पश्चिम दिशा मे स्थित है तथा पुरास्थल के सम्पूर्ण हिस्से पर कृषि कार्य हो रहा है। स्थानीय लोगो द्वारा, पूर्व मे इसे डोम राजा का निवास स्थल बताया जाता है । यह कुषाण युगीन सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थल है। यहॉ से प्राप्त ईटो की माप 38×20×5 सेमी0 तथा 40×22×6 सेमी0 है।

यहॉ से लाल रग के मिट्टी के बर्तन प्राप्त हुए है जिनमे विभिन्न आकार के घडे, कैरीनेटेड हॉडी, एक से अधिक खॉचे बने रिंग युक्त घडे, टोटीदार बर्तन, घुण्डीदार ढक्कन, बेसीन (तसले), तस्तरी, अत्यधिक छोटे आकार के घडे (miniature vase), हत्था युक्त कडाही , सुराही के गर्दन , गोलाकार मिट्टी की

गुरिया, लूप हैण्डिल की कडाही, स्प्रिन्कलर तथा मिट्टी का खिलौना गाडी एव पहिया प्रमुख है (छायाचित्र सख्या–61)। गाडी मे पहिया लगाने तथा रस्सी लगाकर खीचने के लिए छेद बने हुए है । यहॉ से प्राप्त एक मिट्टी के बर्तन के ऊपर रस्सी की छाप मिलती है (छायाचित्र सख्या–62)। यहॉ से प्राप्त कुषाण युगीन सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवशेष इत्र छिडकने वाला मिट्टी का उपकरण (Sprinkler) है ।

57 कुबेर स्थान

यह स्थल पडरौना–तुर्कपट्टी मार्ग पर तुर्कपट्टी से 5 किमी0 उत्तर–पश्चिम तथा पडरौना से 10 किमी दक्षिण–पूर्व मे स्थित है। यहॉ डेबरिस के ऊपर मिट्टी का मोटा जमाव है, इसलिए यहॉ से मिट्टी के बर्तन अथवा अन्य कोई पुरा–सामग्री प्राप्त नही होते। यहॉ टीले पर भगवान शिव का एक मदिर है, जिसमे विशाल ज्योतिलिग स्थापित है। यह लिग काले पत्थर का है जो 10वी–11वी शताब्दी का प्रतीत होता है। यहॉ शिवरात्रि के दिन हजारो लोग श्रद्धापूर्वक जल चढाते है और भगवान शिव की आराधना करते है।

जनश्रुतियो एव पौराणिक आख्यानो के अनुसार वैश्रणव महर्षि मुलस्त्य का पौत्र था। उसे देवताओ ने धन–कुबेर का पद देकर लोकपाल नियुक्त किया। उसने सोने की लका का निर्माण किया। बाद मे रावण के प्रभाव से वह लका छोडकर इसी स्थान पर आकर बस गया, जिसके कारण इस स्थान को कुबेर स्थान कहा जाता है। उसने शिव की अराधना के लिए यहॉ शिवलिग की स्थापना की। यह लिग, काल के प्रवाह मे भूमि मे दब गया और बाद मे यहॉ के टीले की मिट्टी हटने पर पुन इस शिव लिग का दर्शन हुआ और तब से यह हिन्दूओ का पवित्र स्थान बन गया।

58 कोहरवलियॉ

कोहरवलियॉ गॉव, पडरौना से 11 किमी0 दक्षिण–पूर्व तथा फाजिलनगर से 13 किमी0 उत्तर मे कुबेर स्थान के पास स्थित है। यह एक प्राचीन तलाब के के चतुर्दिक फैला हुआ है। तालाब सहित यह लगभग 16 एकड क्षेत्र मे

फैला हुआ है तथा समीपवर्ती भूभाग से इसकी ऊँचाई लगभग 3 मी0 है। तालाब के उत्तरी किनारे एक देवी का स्थान है, जो स्थानीय लोगो मे जलपादेवी के नाम से जाना जाता है। यहॉ से गुप्तोत्तर काल से सम्बधित, कुछ हिन्दू सिक्के प्राप्त हुए है। यहॉ से मिट्टी के बर्तन के टुकडे बहुत कम मात्रा मे मिलते है।

59 खडवार पिपरा

यह स्थल पडरौना–तुर्कपट्टी मार्ग के पूर्व पडरौना से लगभग 14 किमी0 दक्षिण–पूर्व मे स्थित है। यहॉ देवी का भव्य मदिर और चौरा स्थापित है। यह देवी का सिद्ध पीठ माना जाता है। यहॉ नवरात्रि मे भारी भीड होती है और लोग अपनी मनोकामना की सिद्धि के लिए देवी की अराधना करते है।

जनश्रुतियो के अनुसार प्राचीन काल मे इस क्षेत्र के राजा मदनसेन थे और उनके राज्य मे थावे (जिला गोपालगज, बिहार) क्षेत्र मे निवास करने वाले हरसू गुरू को देवी का इष्ट प्राप्त था। राजा ने हरसू गुरू से देवी का प्रत्यक्ष दर्शन कराने को कहा तथा ऐसा न होने पर मृत्यु–दण्ड देने की घोषणा की। गुरू को मजबूर होकर देवी का आह्वान करना पडा। देवी, कलकत्ता से आकर खडवार पिपरा मे स्थिर हो गई । कुछ समय तक यहॉ देवी के स्थिर होने के कारण, यह सिद्ध पीठ बन गया।

60 घोरघटिया

यह पुरास्थल पडरौना से लगभग 10 किमी0 दक्षिण–पूर्व कठकुईया रेलवे स्टेशन से 1 5 किमी0 दक्षिण, कटकुईया–कुबेर स्थान लिक मार्ग पर स्थित है। यह लगभग 3 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है। यह स्थल आस–पास की जमीन से लगभग 2 मीटर ऊँचा है। इसके कुछ भाग पर आवासीय मकान बने है तथा शेष भाग पर कृषि कार्य हो रहा है।

यहॉ से कुषाण एव मध्य युगीन लाल रग के बर्तन, जिनमे टोटीदार बर्तन, चौडे मुँह वाले घडे, बेसीन, हॉडी तथा नॉद शामिल है, प्राप्त हुए है।

61 बडगॉव यह पुरास्थल पडरौना–कुबेर स्थान मार्ग के किनारे, पडरौना से लगभग 7 किमी0 दक्षिण–पूर्व मे स्थित है। यह लगभग 150×100 वर्ग मी0 क्षेत्र

मे फैला हुआ है। आस पास की जमीन से इसकी ऊँचाई लगभग 3 मीटर है। कृषि कार्य के कारण इसका काफी हिस्सा क्षतिग्रस्त हो चुका है। यहॉ बालू की मोटी तह मिलती है। यहॉ से कुषाण युगीन लाल रग के मृदभाण्ड के टुकडे प्राप्त हुए है, जिनमे कैरिनेटेड हाडी, डिजाइनदार घडे, जिसके ऊपर ठप्पा लगा कर डिजाइन बनाई गई है तथा सीधी रेखा मे बर्तन के चतुर्दिक, वृत्त के अन्दर डाट की आकृति बनी है(छायाचित्र सख्या–63) शामिल है।

62 सिधुवॉ स्थान

यह स्थान पडरौना–तमकुही रोड मार्ग पर पडरौना से लगभग 3 किमी0 पूर्व दिशा मे स्थित है। यह सिद्ध स्थान माना जाता है। यहॉ जैन धर्म के प्रमुख आचार्य श्री सिद्धनाथ जी की समाधि स्थल है। जनश्रुतियो के अनुसार इन्होने इसी स्थान पर साधना की थी और समाधिस्थ हो गये थे। गोरखपुर जनपद के गजेटियर से सूचना मिलती है कि एक सिद्ध महापुरूष ने दक्षिण–पश्चिम से आकर यहॉ साधना की थी एव सिद्धि प्राप्त कर समाधिस्थ हुए थे।[1] यहॉ ईंट के टुकडे यत्र –तत्र बिखरे हुए तथा मिट्टी के बर्तन के टुकडे अत्यल्प मात्रा मे मिलते है।

63 सिधुवॉ देवलही

यह पुरास्थल पडरौना से 3 5 किमी0 दक्षिण–पूर्व दिशा मे स्थित है। इसे देवताओ का सिद्ध स्थान माना जाता है। इस गॉव के निकट एक तालाब है। ग्रामीण लोगो से पता चला कि तालाब के निकट मार्ग के मध्य मे, पत्थर का एक नोक निकला हुआ था, जिससे आवागमन मे बाधा पहुँचती थी। 1954 मे यहॉ स्थानीय लोगो ने खुदाई की तो खडित प्रस्तर का युगलचरण सहित पीठासन प्राप्त हुआ एव अन्य कलाकृतियॉ भी मिली थी। इनका विस्तृत विवरण बी0 पी0 खेतान ने दिया है।[2] इनके अनुसार यक्ष के चरण की धारीनुमा पादुका गान्धार कला की प्रतीक है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह कोई बहुत बडी यक्ष की प्रतिमा रही होगी। बौद्ध

---

[1] खेतान, बी0 पी0 , महावीर निर्वाण भूमि पावा एक विमर्श, पृ0 15 (आत्मनिवेदन) वाराणसी, 1992

[2] तदैव, पृ0 125–26।

ग्रन्थो मे अजकापालिक चैत्य की चर्चा मिलती है। सभवत यही स्थान अजकापालिक चैत्य है। बौद्ध ग्रन्थो मे इसे पावा के निकट बताया गया है।

64 देवरहा स्थान

यह पुरास्थल, पडरौना के उपनगर छावनी के पूरब, कुबेर स्थान जाने वाली सडक के दायी ओर स्थित है। यहॉ लगभग 100 मीटर लम्बा तथा 60 मीटर चौडा स्तूपाकार एक टीला है, जिसकी ऊँचाई लगभग 4 मीटर है (छायाचित्र सख्या–64)। यह ईटो से पटा पडा है तथा ईट की दीवारे स्पष्ट दिखाई पडती है। टीला भारतीय पुरातत्व विभाग द्वारा सरक्षित है। टीले के उत्तर मे लगभग 300 मीटर की दूरी पर, एक पाकड वृक्ष के नीचे एक छोटा सा मदिर है। मन्दिर मे, काले पत्थर की किसी जैन तीर्थंकर की मूर्ति रखी हुई है, जो स्थानीय लोगो द्वारा 'हठी भवानी' के रूप मे पूजित है (रेखा चित्र सख्या–5)। यह पद्मासन मे ध्यानावस्थित मुद्रा वाली काले पत्थर की पुरूष प्रतिमा है। इसके ऊपर तीन छत्र सुशोभित है, जो क्रमश नीचे से ऊपर की ओर छोटे होते चले गये है। इसके लम्बे कान कुण्डल युक्त है। मूर्ति के बॉए भाग मे कलात्मक मुद्रा मे उपेन्द्र की मूर्ति है जिसके दाहिने हाथ मे चॅवर सुसज्जित है और बायॉ हाथ नीचे की ओर दोनो जघो के मध्य स्थित है। केश–विन्यास बहुत की कलात्मक है। कठि के ऊपर का भाग निर्वस्त्र है और अधोभाग घुटने के नीचे तक वस्त्रयुक्त है। वस्त्र धारण की शैली बहुत कलात्मक है। इस मूर्ति के ठीक ऊपर एक पुरूष की कलात्मक चैतन्य स्थिति मे बैठी हुई मूर्ति है, जो दोनो हाथो से तलवार धारण किये हुए है। इसका दायॉ पैर नीचे की ओर तथा बायॉ पैर ऊपर की ओर मुडा हुआ है और इसके ठीक ऊपर डमरू निर्मित है, जिसको बजाते हुए दो नारी हाथ दृष्टिगोचर होते है।

मूर्ति के नीचे बायी ओर सिह की मुखाकृति निर्मित है,जो शान्त मुद्रा मे है। मूर्ति के नीचे मध्य मे अत्यन्त सुन्दर पखुडियो वाला कमल निर्मित है। कमल के ऊपर बैठी हुई एक नारी की मूर्ति है जो सिर पर मुकुट तथा कान मे कुण्डल धारण किये हुए है। इस मूर्ति के कटि के ऊपर का भाग निर्वस्त्र, नीचे का भाग वस्त्रयुक्त है। ऐसा प्रतीत होता है कि नारी के बाये हाथ मे एक निर्वस्त्र बालक

रेखा चित्र संख्या–5

जैन तीर्थंकर की प्रस्तर प्रतिमा, देवरहा (छावनी, पडरौना)

और दाहिने हाथ मे कमल की पखुडियॉ है। यह मूर्ति किसी आसन के सहारे पर बैठी हुई प्रतीत होती है। इस मूर्ति के दोनो ओर दो मालाधारी विद्याधर अकित है, जिसमे बाये पार्श्ववाले पुरूष के दाहिने हाथ मे मूसल तथा बाये हाथ मे अत्यन्त मजबूती से पकडी गई तलवार है। दाहिनी ओर की मूर्ति के दाहिने हाथ मे मूसल सदृश कोई वस्तु है तथा उसका बायॉ हाथ उसके जॉघ पर है। हर दृष्टि से यह मूर्ति बहुत ही भव्य, अद्भुत एव कला–प्रतिभा का श्रेष्ठ उदाहरण है।

पूर्व मे इस टीले का सीमित उत्खनन हो चुका है। यहॉ से बौद्ध, जैन एव हिन्दू धर्म से सम्बन्धित अनेक मूर्तियॉ प्राप्त हुई थी। इसका विस्तृत विवरण अध्याय 3 मे वर्णित है ।

64 लमुहा

यह स्थान, पडरौना से 4 5 किमी0 दक्षिण–पश्चिम दिशा मे स्थित है। ऐसा प्रतीत होता है कि यहॉ पर एक विशाल टीला रहा होगा, जिसके ऊपर वर्तमान मे गॉव बसा हुआ है। स्थानिय लोगो के अनुसार पूर्व मे यहॉ से अनेक मूर्तियॉ प्राप्त हुई थी, जो उठाकर अन्यत्र चली गयी।

65 गागरानी

यह पुरास्थल पडरौना से दक्षिण–पूर्व दिशा मे 7 किमी0 की दूरी पर स्थित है। गॉव के पश्चिम मे एक बडा सा तालाब है। तालाब के उत्तर मे टीले के अवशेष विद्यमान है। स्थानीय लोगो के अनुसार यहॉ बहुत पहले बहुत सी मूर्तियॉ पडी हुई थी। परन्तु सर्वेक्षण के दौरान एक भी मूर्ति देखने को नही मिली।

66 रवीन्द्रनगर

यह जनपद का नव–निर्मित मुख्यालय है, जो पडरौना से 6 किमी0 दक्षिण मे पडरौना–कसया मार्ग पर स्थित है। यहॉ अनेक छोटे बडे टीले दिखाई पडते है जो पश्चिम से पूर्व की ओर फैले हुए है। इनके बीच से होकर पडरौना–कसया मार्ग गुजरता है। स्थानीय लोगो को यहॉ से खुदाई के दौरान बुद्ध, महावीर, लक्ष्मी, गणेश आदि की अनेक मूर्तियॉ मिली है जिसे देखने का सुअवसर शोधार्थी को भी मिला। यहॉ से परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के टुकडे तथा

कुषाण काल के लाल रग के मिट्टी के बर्तन के टुकडे मिले है जिनमे घडे, कटोरे, तस्तरी, बेसीन इत्यादि शामिल है।

68 सेहुवाडीह

यह स्थल पडरौना से 10 किमी0 पश्चिम तथा रामकोला से 5 किमी0 पूर्व मे स्थित है। यह पुरास्थल कृषि कार्य के कारण आशिक रूप से क्षतिग्रस्त हो गया है । यहाँ से खुरदुरे ईट के टुकडे, लाल पात्र तथा मध्यकालीन मिट्टी के बर्तन प्राप्त हुए है।

69 नौगावाँ इन्द्राही

यह स्थान, बनरी नदी के बायी ओर स्थित है। स्थल से नदी की दूरी लगभग 800 मीटर दक्षिण मे है। झरही नदी इस स्थल से 1 6 किमी0 पूर्व मे बहती है। यह स्थल पडरौना से लगभग 24 किमी0 दक्षिण–पूर्व मे स्थित है, जो लगभग 1 5 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैला हुआ है। मानव क्रिया–कलापो के चलते, स्थल पूरी तरह क्षतिग्रस्त हो गया है। यहाँ से लाल एव लाल लेपित मिट्टी के बर्तन के टुकडे प्राप्त हुए है, जो कुषाण एव प्रारभिक मध्यकाल से सम्बधित है। बर्तनो मे पाटरी डिस्क, कैरीनेटेड हाडी, तस्तरी, नाद आदि प्रमुख है।

70 कुकरहाँ

यह स्थल पडरौना से लगभग 19 किमी0 उत्तर–पश्चिम मे, बाँसी नदी के दाहिने तरफ स्थित है। रामकोला से इसकी दूरी लगभग 21 किमी0 डत्तर–पूर्व मे है। यह लगभग 1 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैला है। यहाँ से लाल रग के मृदभाण्ड के टुकडे प्राप्त हुए है।

71 मठिया बुजुर्ग

यह स्थल, खड्डा से लगभग 4 किमी0 दक्षिण तथा छितौनी रेलवे स्टेशन से लगभग 9 किमी0 पश्चिम मे स्थित है। पडरौना से इसकी दूरी लगभग 28 किमी0 उत्तर–पश्चिम मे है। इस स्थल के पश्चिम मे लगभग 1 5 किमी0 की दूरी पर बनी नदी बहती है। इसके पास ही एक ताल स्थित है जो नदी से मिला हुआ है। यह पुरास्थल लगभग 1 5 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैला हुआ है। इस पुरास्थल से

कृष्ण लेपित मृदमाण्ड तथा लाल लेपित मृदमाण्ड के टुकडे प्राप्त हुए है जिनमे तश्तरी ,घडे, वेसीन, टोटीदार बर्तन, घुण्डीदार ढक्कन, हॉडी, नाद आदि शामिल है

72 चमडीहा

यह स्थल खड्डा रेलवे स्टेशन से लगभग 3 किमी0 उत्तर–पूर्व मे स्थित है । टीले के पास एक बडा सा तालाब है। 2 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैला हुआ यह टीला, अशिक रूप से क्षतिग्रस्त हो गया है। यहॉ से केवल मध्यकालीन लाल रग के मिट्टी के बर्तन के टुकडे, यथा–हाडी, कडाही, चौडे मुॅह वाले घडे, टोटीदार, तश्तरी प्राप्त हुए है। स्थल के चारो ओर कुछ ईंट के बडे टुकडे भी दृष्टिगोचर होते है।

73 वनमोर्चा

यह पुरास्थल कसया–गोरखपुर मार्ग पर स्थित, हेतिमपुर से 3 किमी0 दूर दक्षिण मे छोटी गण्डक के किनारे हथियागढ मार्ग पर स्थित है। कुशीनगर से इसकी दूरी लगभग 5 किमी0 दक्षिण–पश्चिम है। यह लगभग 11 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है जिसकी ऊॅचाई लगभग 25 मीटर है। किवदन्ती है कि यहॉ पर किसी थारू राजा का किला था जो 52 बीघे क्षेत्र मे फैला हुआ है। इसके प्रमाण आज भी पुरास्थल पर छोटे–छोटे टीले के रूप मे दिखायी पडते है। टीले पर देवी का स्थान तथा एक राम–जानकी मदिर है। टीले के पश्चिम मे एक बडा सा तालाब तथा तालाब के चतुर्दिक प्राचीन भवनो के खण्डहर विद्यमान है जिनकी ईंटो से निर्मित चौडी दीवारे स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है (छायाचित्र सख्या–65)। स्थानीय लोगो के अनुसार इस टीले से अनेक छोटी–छोटी मूर्तियॉ और मिट्टी के पात्र मिले थे।

74 भिसवॉ रामपुर

यह स्थान कुशीनगर सुकरौली के बीच, ढाढा कस्बे से दक्षिण पश्चिम लगभग 2 किमी0 की दूरी पर स्थित है। हाटा से इसकी दूरी लगभग 7 किमी0 दक्षिण पश्चिम मे है। यह टीला पुरातत्व विभाग द्वारा सरक्षित है। भिक्षु धर्मरक्षित ने

इसे मल्लो का प्राचीन निगम 'अनुपिया' माना है[1], जो अन्य विद्वानो को मान्य नही है। यहॉ मझना नाला के किनारे अनेक खण्डहर दिखाई पडते है। लगभग 25 एकड क्षेत्र मे फैले इस टीले की ऊँचाई लगभग 7 मीटर है। टीले के दक्षिण–पश्चिम मे लगभग 100 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ झील है, जिसे कुशेसर ताल कहा जाता है। इस बालू के टीले के ऊपर एक देवी का स्थान है जिसे स्थानीय लोग 'मझरिया देवी का स्थान' कहते है। यहॉ से परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के कुछ टुकडे तथा लाल मृदभाण्ड जो प्रारम्भिक मध्य काल से सम्बन्धित है, प्राप्त हुए है।

75 नाऊमुण्डा

यह पुरास्थल हाटा से 4 किमी0 दक्षिण–पश्चिम मे स्थित है। यह समीपवर्ती जमीन से लगभग 2 फीट ऊँचा तथा 10 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है। वर्तमान मे स्थल के सम्पूर्ण भाग पर कृषि कार्य किया जा रहा है। पुरास्थल के पश्चिम मे एक नहर है। टीले पर काली माई का मन्दिर है तथा प्राथमिक विद्यालय, नाऊमुण्डा स्थापित है। सम्पूर्ण भू–भाग पर ईट के टुकडे बिखरे हुए मिलते है। स्थानीय लोगो के अनुसार खेतो मे मिट्टी की कटाई के दौरान ईट की चौडी–चौडी दीवारे मिलती है।

यहॉ से प्रारम्भिक उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के टुकडे मिले है। लाल पात्र परम्परा के अन्तर्गत मिट्टी की गुरिया, बेसीन, घडे, ओठदार कटोरे नाद मिट्टी का पाइप प्रमुख है। एक मोटे लाल बर्तन के ऊपर उत्तरी कृष्ण मार्जित की लेप लगी है जो अब छूट रही है। सम्भवत यह पाटरी स्टैण्ड है।

76 बढेया खूर्द

यह पुरास्थल कसया–गोरखपुर मार्ग के किनारे हाटा से लगभग 7 किमी0 पश्चिम मे स्थित है। यह लगभग 200×150 लम्बे–चौडे क्षेत्र मे फैला हुआ है जो आस पास की जमीन से लगभग 3 फीट ऊँचा है। वर्तमान मे सम्पूर्ण भूमि पर कृषि कार्य हो रहा है। यह स्थल गॉव के पूरब मे स्थित है तथा इसके

---

[1] बुद्धमित्र, भगवान बुद्ध के समकालीन अनुयायी तथा बौद्ध केन्द्र, गोरखपुर 1999, पृ0 226।

उत्तर–पश्चिम मे 1 किमी0 की दूरी पर मझना नाला बहता है। पुरास्थल के ऊपरी भाग पर लाल मृदभाण्ड तथा ईंटो के टुकडे बिखरे हुए मिलते है। यहॉ से परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के कुछ टुकडे तथा प्रारम्भिक मध्य काल के लाल रग के मृदभाण्ड प्राप्त हुए है, जिनमे टोटीदार बर्तन, तस्तरी तथा कटोरे शामिल है।

77 भरकुलवॉ

यह पुरास्थल हाटा से 5 किमी0 पश्चिम, कसया–गोरखपुर मार्ग के किनारे स्थित है। यह लगभग 0 5 एकड क्षेत्र मे फैला हुआ है, जो जमीन से लगभग 1 फूट ऊँचा है। स्थल के अधिकाश भाग पर मकान बन चुके है तथा शेष बचे हिस्से पर बाजार लगता है। स्थानीय लोगो के अनुसार यह पूर्व मे बजारो का निवास स्थल था। यहॉ से शुग–कुषाण युगीन मिट्टी के साधार कटोरा, हाडी, घडा तथा तस्तरी प्राप्त हुए है। मिट्टी के एक बर्तन के ऊपर स्टाम्प डिजाइन किया हुआ है।

78 डुमरी मलॉव

यह स्थल कसया–गोरखपुर मार्ग के किनारे, हाटा से लगभग 6 किमी0 उत्तर–पश्चिम तथा सुकरौली से 3 किमी0 उत्तर मे स्थित है जो समीपवर्ती जमीन से 2 फीट ऊँचा है तथा यह लगभग 3 एकड बीघा क्षेत्र मे फैला हुआ है। वर्तमान मे सम्पूर्ण भाग पर कृषि कार्य हो रहा है। यहॉ से ईंट के टुकडे बिखरे हुये मिलते है। कुषाणयुगीन लाल रग के चौडे मुँह वाले घडे, कटोरे, तस्तरी, टोटीदार बर्तन, पाटरी डिस्क, मिट्टी के खिलौने आदि यहॉ से मिले है।

79 घोटप भिसवॉ

यह पुरास्थल हाटा से 6 किमी0 उत्तर–पश्चिम, हाटा–मधवापुर लिक–मार्ग से 3 किमी0 पश्चिम मे स्थित है। यह गॉव के पूरब मे स्थित लगभग 7–8 मीटर ऊँचा बालू का टीला है। टीले के पश्चिम मे एक बडा सा तालाब है। तालाब के उत्तर मे 2 5 फीट व्यास का एक वलयकूप विद्यमान है। स्थानीय लोगो के अनुसार यह पूर्व मे थारूओ का निवास स्थल था । यह लगभग 500×400 मी0 लम्बे–चौडे क्षेत्र मे फैला हुआ है। टीले के कुछ भाग पर कृषि कार्य हो रहा है तथा

बाकी भाग खाली पडा है। यहाँ से परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के कुछ टुकडे तथा लाल रग के चौडे मुँह के घडे तथा बेसिन मिले है।

80 देउरवॉ

यह पुरास्थल हाटा से उत्तर–पश्चिम दिशा मे लगभग 5 किमी0 की दूरी पर स्थित है। यहाँ पहुचने के लिए कोई सडक मार्ग नही है और पगडडी एव चकरोडो से होकर जाना पडता है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह गॉव टीले पर ही बसा है जिसकी ऊँचाई आसपास के जमीनी स्तर से लगभग 1 5 मी0 है। गॉव के दक्षिण मे एक वृक्ष के नीचे देवी का स्थान है। जहाँ से बहुत कम मात्रा मे बर्तन के टुकडे प्राप्त हुए है। यहाँ से प्राप्त पात्रो मे लाल रग के पात्र तथा अत्यल्प मात्रा मे परवर्ती उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के टुकडे प्राप्त हुये है। लाल रग के मृदभाण्ड, कुषाण युगीन है। जिनमे ढक्कन, हाडी, घडे तथा बेसीन शामिल है।

81 झॉगा

यह पुरास्थल हाटा से 4 किमी0 उत्तर–पश्चिम मे, हाटा मधवापुर लिक मार्ग के किनारे स्थित है। यह लगभग 150×100 मीटर लम्बे–चौडे क्षेत्र मे फैला हुआ है जिसकी ऊँचाई लगभग 2 मीटर है। पुरास्थल पर ईंट के टुकडे बिखरे पडे है। यहाँ से शुग–कुषाण युगीन लाल पात्र परम्परा के बर्तन प्राप्त हुए है। जिनमे चौडे मुँह के घडे, कैरीनेटेड हाडी, जिसके ऊपर मिट्टी का लेप लगा है तथा लेप के ऊपर जले का निशान है, प्राप्त हुए है। इनके अतिरिक्त, तस्तरी, बेसिन, नाद, एक बर्तन पर लहरदार लाईन एव वृत्त के अन्दर डाट की आकृति ठप्पा लगाकर बनायी गयी है। यहाँ उल्लेखनीय है कि ठप्पा जैसा चिन्ह, शुग कालीन बर्तनो की प्रमुख विशेषता है।

82 झरूआ डीह

यह पुरास्थल हाटा सोनबरसा–लिक मार्ग पर, हाटा से लगभग 3 किमी0 उत्तर–पश्चिम मे स्थित है। यहाँ एक बडा सा ताल है । यह लगभग 1 5 हेक्टेअर के क्षेत्र मे फैला हुआ है। यहाँ से लाल रग के मध्यकालीन मिट्टी के बर्तन के टुकडे प्राप्त हुए है।

83 थरूआडीह

यह स्थल हाटा से लगभग 15 किमी0 की दूरी पर पश्चिम मे स्थित है। यहॉ से लाल एव लाल लेपित मृदभाण्ड के टुकडे प्राप्त हुए है, जो प्रारम्भिक मध्य काल से सम्बन्धित है।

84 महुवाडीह

यह पुरास्थल कुशीनगर से लगभग 10 किमी0 उत्तर–पश्चिम तथा हाटा से लगभग 9 किमी0 उत्तर–पूर्व मे, छोटी गण्डक नदी के बाये किनारे पर स्थित है। यह लगभग 5 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैला हुआ है। टीले पर एक दुर्गा जी का मदिर है। यहॉ से उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के कुछ टुकडे तथा लाल रग के आरम्भिक मध्यकालीन मृदभाण्ड के टुकडे प्राप्त हुए है।

85 मुॅजडीहा

यह पुरास्थल हाटा से लगभग 26 किमी0 उत्तर–पूर्व तथा बोदरवार रेलवे स्टेशन से 8 किमी0 उत्तर मे स्थित है । यह लगभग 3 हेक्टेअर के क्षेत्र मे फैला हुआ है। पुरास्थल के दक्षिण पश्चिम मे एक प्राचीन मदिर है। यहॉ से प्राप्त मृदभाण्डो मे उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र तथा रूक्ष लाल पात्र के टुकडे उल्लेखनीय है।

86 मगडीहा

यह पुरास्थल, हाटा से लगभग 13 किमी0 उत्तर–पश्चिम तथा बोदरवार रेलवे स्टेशन से लगभग 7 किमी0 दक्षिण–पश्चिम स्थित है। स्थल के समीप उत्तर–पश्चिम मे एक तालाब है। यह लगभग 0 50 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैला हुआ है। यहॉ से उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के कुछ टुकडे तथा आरम्भिक मध्यकालीन लाल रग के मृदभाण्ड के टुकडे प्राप्त हुये है, जिनमे हाडी, घडे, तस्तरी, ढक्कन, नॉद, बेसीन आदि शामिल है।

87 तुर्कडीहा यह पुरास्थल हाटा से लगभग 15 5 किमी0 उत्तर–पश्चिम तथा कप्तानगज से लगभग 12 5 किमी0 दक्षिण–पश्चिम मे स्थित है। इस स्थल से

मझना नाला, पश्चिम की ओर 1 किमी0 की दूरी पर बहती है । यह लगभग 1 5 हेक्टेअर क्षेत्र मे फैला हुआ है, जिसका अधिकाश भाग क्षतिग्रस्त हो चुका है तथा शेष हिस्से पर निर्माण कार्य हो रहा है । यहॉ से आरम्भिक मध्यकालीन लाल रग के मृदभाण्ड के टुकडे प्राप्त हुए है।

88 अमडीहा

यह स्थल कप्तानगज से लगभग 6 5 किमी0 पश्चिम तथा बोदरवार रेलवे स्टेशन से लगभग 3 5 किमी0 उत्तर–पूर्व मे स्थित है। यह लगभग 4 हेक्टेयर क्षेत्र मे फैला हुआ है। यहॉ से लाल रग के मृदभाण्ड के टुकडे प्राप्त हुए है। यहॉ से ऐसा कोई पात्र नही मिला है जिससे इनका समय निर्धारित किया जा सके।

89 पपउर

यह स्थल पडरौना रामकोला मार्ग पर, पडरौना से 12 किमी0 उत्तर–पश्चिम तथा रामकोला से 6 किमी0 उत्तर–पूर्व मे स्थित है। यह स्थल गॉव के पश्चिम मे लगभग 500 मीटर की दूरी पर है। स्थानीय लोग इसे देउरवा डीह के नाम से पुकारते है। यहॉ दो स्तूपाकार टीले आस–पास है, जिनमे एक बडा है और दूसरा छोटा है। छोटे टीले का अधिकाश भाग खेती मे बदल चुका है। ईटो के टुकडो का जो अवशेष बचा है वह जमीन से लगभग 2 5 मी0 ऊॅचा है तथा इसकी परिधि लगभग 41 मीटर है।

बडे टीले की ऊॅचाई लगभग 7 मीटर है तथा क्षेत्रफल लगभग 150×150 वर्गमीटर है (छायाचित्र स0–66)। वर्तमान मे सम्पूर्ण टीले पर कृषि कार्य हो रहा है। इसके ऊपरी सतह से ईंट के टुकडे, उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र के टुकडे तथा बाद के ठीकरे, चारो तरफ फैले हुए मिलते है।

दोनो टीलो के अतिरिक्त पुरानी आबादी के भरपूर चिह्न उत्तर व दक्षिण मे दूर तक दिखाई देते है। यद्यपि सब खेत मे बदल चुके है, फिर भी पुरानी आबादी के अनेक कुॅए और भग्नावशेष दिखाई देते है। यहॉ से प्राप्त लाल रग के मिट्टी के बर्तनो मे चौडे मुॅह वाले घडे, बेसीन तथा कटोरे की पेदी शामिल है।

अध्याय 5

उपसंहार

कुशीनगर जनपद उत्तर प्रदेश राज्य के उत्तर–पूर्व में $26^0 35'$ से $27^0 18'$ उत्तरी अक्षांश तथा $83^0 32'$ से $84^0 26'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य नेपाल की तराई में अवस्थित है।[1] गोरखपुर मण्डल से सम्बद्ध इस जिले का सम्पूर्ण भू–भाग प्रारम्भ में देवरिया जनपद के अन्तर्गत था । 13 मई सन् 1994 को इस जिले का सृजन किया गया तथा इसका नाम पड़रौना रखा गया। कालान्तर में 19 जून 1997 को प्रसिद्ध बौद्ध स्थल कुशीनगर के नाम पर इसका नामकरण कुशीनगर जिला कर दिया गया । पड़रौना, हाटा, तमकुहीराज तथा कसया तहसीलों में विभक्त इस जनपद का क्षेत्रफल 2873 वर्ग किमी0 है । क्षेत्रफल की दृष्टि से जिले का राज्य में 44वाँ स्थान है । पूर्व से पश्चिम इस जनपद की लम्बाई 80 किमी0 तथा उत्तर से दक्षिण 70 किमी0 है । इसके उत्तर में नेपाल दक्षिण में देवरिया पूर्व में बिहार राज्य का गोपालगंज जिला तथा पश्चिम में महराजगंज जिला स्थित है ।

मध्य गंगा घाटी में स्थित इस जनपद का सम्पूर्ण भू–भाग प्रायः समतल तथा उपजाऊ है । समुद्र तल से 128.6 मी0 की ऊँचाई पर स्थित इस जनपद का ढाल उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पूर्व की तरफ है। अपनी भौगोलिक स्थिति, उर्वर भूमि, तालाबों, झीलों और उनसे निकलने वाली नदियों तथा बड़ी गण्डक और छोटी गण्डक जैसी बड़ी नदियों ,वन्य जीवों और वनस्पतियों से सम्पन्न यह क्षेत्र प्रारम्भिक काल से ही मनुष्य के आकर्षण का केन्द्र रहा है ।

मध्य देश (कोशल) में विभिन्न संस्कृतियाँ विकसित हुई , जिन्होंने न केवल गंगा के मैदान के सांस्कृतिक स्वरूप का निर्माण किया , अपितु सम्पूर्ण उत्तर

---

[1] त्रिपाठी, आर0एस0, *हिस्ट्री ऑफ एंशियण्ट इण्डिया,* पृ0 41।

भारत को सास्कृतिक विरासत भी प्रदान की । विभिन्न ऐतिहासिक स्रोतो से कोशल महाजनपद (मध्य गगा घाटी) के इतिहास का जो पुनर्निर्माण किया गया है वह कुशीनगर जनपद पर भी लागू किया जा सकता है। यद्यपि पौराणिक इतिहास को अभी भी इतिहासकार सदेह की दृष्टि से देखते है। नन्द, मौर्य, शुग, कण्व कुषाण, गुप्त, परवर्ती गुप्त, मौखरि, बर्धन, भर, प्रतिहार, कलचुरि तथा गहडवाल आदि वशो ने क्रमश इस क्षेत्र पर शासन किया। इस तरह हम देखते है कि यहॉ के इतिहास मे अविच्छिन्नता दिखायी पडती है।

यद्यपि कुशीनगर जनपद मे इस समय मूल आदि जातियॉ[1] बहुत कम रह गयी है, और जो है, भी वे अन्य जातियो के सामाजिक रीति–रिवाजो और परम्पराओ से अत्यधिक प्रभावित होकर उनके साथ घुल मि्ल गयी है, लेकिन फिर भी उन्नीसवी और बीसवी शताब्दी मे की गयी जनगणन के अनुसार बहेलिया, वधिक मुसहर, कजड आदि जैसी कुछ आखेटक आदिम जातियॉ आज भी विद्यमान है। आदिम जातियो के सामाजिक नृतत्वीय अध्ययन से भी प्रागैतिहासिक सस्कृतियो के पुनर्निर्माण मे सहायता मिलती है।

मध्य गगाघाटी मे स्थित अन्य जनपदो – गोरखपुर, बनारस, जौनपुर, सुल्तानपुर तथा प्रतापगढ उत्तर प्रदेश मे स्थित जिले तथा सारन वैशाली, गया तथा रोहतास बिहार राज्य मे स्थित जिलो की भॉति इस जिले मे न तो आखेटक एव सग्रहक मध्य पाषाणिक सस्कृति, न तो कृषि और पशुपालन परक नव पाषाणिक सस्कृति और न ही ताम्र पाषाणिक सस्कृति फली–फूली दिखायी पडती है इस तरह हम देखते है कि पाषाणिक सस्कृतियो का अभ्युदय इस जनपद मे नही हो सका। यद्यपि कुशीनगर जनपद पुरात्तव कि दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है और इसका सम्बन्ध ऐतिहासिक काल की सस्कृतियो से है। जनपद से जुडी किवदन्तियो, पुरातात्विक अवशेषो–मूर्तियो, सिक्को, अभिलेखो और अधिकाधिक मात्रा मे प्राप्त ईटो तथा मदिरो, स्तूपो और

---

[1] नागर मालती और मिश्र वी0एन0, 1990, *द कन्जर्स–ए–हटिग गैदरिंग कम्युनिटी ऑफ द गगा वैली, उ0प्र0, मैन एण्ड इनवायरमेन्ट,* वाल्यूम 15, पृ0 71–78।

बौद्धमतो के अवशेष जनपद मे कई स्थानो पर पाये गये है। इसका आशय है कि जनपद मे विभिन्न ऐतिहासिक सस्कृतियो के पुरातात्विक अवशेष विद्यमान है।

कुशीनगर जनपद के पुरातत्व का श्री गणेश सर अलेक्जेण्डर कनिघम के द्वारा होता है। कनिघम ने सर्वप्रथम 1861 ई0 मे कुशीनगर क्षेत्र का पुरातात्विक सर्वेक्षण दो प्रयोजनो को ध्यान मे रख कर किया – पहला पुरासामग्रियो का सग्रह तथा दूसरा भगवान बुद्ध से सम्बन्धित् स्थलो की पहचान। इस सर्वेक्षण क्रम मे अनेक उपेक्षित एव अज्ञात पुरास्थल प्रकाश मे आये। कनिघम[1] द्वारा कसया के समीप स्थित टीलो के सीमित उत्खनन से कुशीनगर के पहचान का विवाद समाप्त हो गया।

कनिघम की रिपोर्ट के आधार पर ए0सी0एल0 कार्लाइल ने 1876 – 77 ई0 मे कुशीनगर स्थल का उत्खनन कराया और उन्हे महत्वपूर्ण सफलता हाथ लगी। इतना ही नही कनिघम एव कार्लाइल की दृष्टि मल्लो की दूसरी राजधानी पावा की ओर भी गयी लेकिन पावा की पहचान को लेकर दोनो विद्धानो मे मतैक्य नही हो सका। कनिघम ने पडरौना के निकट छावनी नामक टीले को पावा से समीकृत किया तो कार्लाइल ने सठियॉव डीह को, जो आधुनिक फाजिल नगर से लगभग एक किलोमीटर दक्षिण – पश्चिम दिशा मे स्थित है पावा होने की सभावना व्यक्त की। उल्लेखनीय है कि पावा की पहचान की समस्या अद्यावधि बरकरार है। कनिघम एव कार्लाइल ने जिले के कतिपय अन्य पुरातात्विक स्थलो का सर्वेक्षण किया कनिघम ने जनपद के पुरातात्विक स्थलो के साथ – साथ ऐतिहासिक भूगोल को भी ध्यान मे रखा जिसका विवरण उनकी पुस्तक इन्श्यिन्ट ज्याग्राफी मे दिया गया है कार्लाइल द्वारा सर्वेक्षित, जिले के अन्य स्थल इस प्रकार है सरया, कुकुर पट्टी, नदवॉ, धनहा, उस्मानपुर वनवीरा, मीरविहार, पथरवा, झारमठिया (धारमठिया) करमैनी और गागीटीकर।[2]

---

[1] कनिघम, ए0, *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट,* 1861, पृ0 77–83।

[2] कार्लाइल, ए0सी0एल0, *आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट, टूर्स इन गोरखपुर डिस्ट्रीक्ट,* 1875–76 एण्ड 1876–77, वाल्यूम 18, दिल्ली 1869, पृ0 102।

कार्लाइल के बाद फ्यूहरर ने 1896 ई0 मे कुशीनगर जनपद के पुराअवशेषो को प्रकाश मे लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। फ्यूहरर के बाद बनारस हिन्दू विश्वविद्यायल के प्रोफेसर ए0 के0 नारायण तथा पी0सी0 पन्त ने इस क्षेत्र का पुरातात्विक सर्वेक्षण किया एव कुछ पुरास्थलो की पहचान करने मे सफल रहे। उल्लेखनीय है कि अलेक्जेण्डर कनिघम द्वारा इस क्षेत्र मे प्रारम्भ किये गये कार्य व्यक्तिगत और सस्थागत दोनो माध्यमो द्वारा अद्यावधि जारी है। कनिधम के समय (1860–61) से लेकर अब तक किये गये सर्वेक्षणो एव उत्खननो से जो परिणाम सामने आये है उनसे कुछ हद तक तो इस क्षेत्र के पुरातत्व की समस्या का समाधान हो सका है लेकिन पूर्ण समाधान होना बाकी है। यद्यपि इस क्षेत्र मे किये गये कार्यो पर दृष्टि डाले तो देखते है कि इस क्षेत्र के ऊपर व्यक्तिगत एव सस्थागत दोनो तरह के प्रयास हुए है तथा इस क्षेत्र पर काम करने वालो की एक लम्बी सूची भी है। लेकिन दुर्भाग्य ही कहिये कि इन व्यक्तियो द्वारा किये गये कार्यो का पूर्ण एव समग्र विवरण प्रकाशित नही हो सका है।

जनपद मे स्थित दो प्रमुख स्थलो कुशीनगर और पावा को कमश बुद्ध और महावीर के निर्माण स्थल से जोडने के कारण इस क्षेत्र के इतिहास की ही नही अपितु भारतीय इतिहास की एक नयी समस्या उठ खडी हुई है। इन दोनो समस्याओ का समाधान पुरातत्व के माध्यम से करने का प्रयास किया गया। कुशीनगर की समस्या के समाधान के लिए सर अलेक्जेण्डर कनिघम ने सर्वप्रथम 1860 – 61 मे इस स्थल के आस – पास स्थित टीलो का सीमित पैमाने पर उत्खनन कराया तत्पश्चात् 1875 से 1877 तक कार्लाइल ने, 1904–1907 तक वोगेल और 1910–12 के बीच हीरानन्द शास्त्री ने भी इस स्थल पर स्थित विभिन्न टीलो का विस्तृत उत्खनन कराया।

कुशीनगर स्थल के उत्खनन से प्राप्त वस्तुओ मे बडी मात्रा मे पत्थर, मिट्टी और धातु की मूर्तियॉ, सिक्के, मुहरे, विभिन्न प्रकार के पात्र, चित्रित प्रस्तरखण्ड, काष्ट स्तम्भ, नक्काशीदार ईंटे प्रमुख है। यहॉ से प्राप्त मूर्तियो मे अधिकाश मिट्टी तथा पत्थर की बनी है। विभिन्न मूर्तियो मे बुद्ध तथा वोधिसत्व की प्रतिमाए प्रमुख है। एक मूर्ति माया देवी की और एक सारिपुत्र की है। इनके अतिरिक्त पौराणिक देवताओ,

महत्वपूर्ण बुद्ध की परिनिर्वाण प्रतिमा है। यहॉ से प्राप्त मूर्तियो मे कुछ लाल पत्थर की बनी है। सभवत ये मूर्तिया मथुरा से लाकर यहॉ स्थापित की गयी थी। यहॉ के उत्खनन से बडी सख्या मे मुहरे भी मिली है जिनमे अधिकाश मुहरे प्रमुख सघो से सम्बन्धित है। महापरिनिर्वाण तथा मुकुट बधन बिहारो की प्रारम्भिक मुद्राओ पर भिन्न–भिन्न लेख तथा चित्र अकित है। ये मुहरे विभिन्न कालो से सम्बन्धित है। मुहरो के अतिरिक्त कुषाण एव गुप्त कालीन शासको की कुछ स्वर्ण एव ताम्र मुद्राएँ भी उपलब्ध हुई है। सिक्को की अपेक्षा अभिलेख अधिक सख्या मे प्राप्त हुए है। उल्लेखनीय है कि ये सभी अभिलेख तिथि विहीन है लेकिन लिपि के भिन्नता के आधार पर इन्हे विभिन्न कालो से समीकृत किया गया है उपर्युक्त पुरावशेषो के आधार पर कुशीनगर स्थल की भगवान बुद्ध के महापरिनिर्माण स्थल के अभिधान का निदान हो गया लेकिन पावा की सही पहचान आज तक नही हो सकी है।

बौद्ध ग्रन्थ परिनिर्वाण सूत्र मे उल्लिखित 'पावा' जिसके बारे मे कहा जाता है कि भगवान बुद्ध निर्वाण प्राप्त करने के पूर्व वैशाली से कुशीनगर आते समय पावा मे चुन्द कुर्मार के पुत्र के यहॉ अन्तिम बार भोजन किया था तथा भगवान महावीर के परिनिर्वाण से सम्बन्धित 'पावा' दोनो एक है अथवा अलग–अलग। पावा की प्राचीनता, भौगोलिक स्थिति तथा महावीर के निर्माण भूमि आदि प्रश्नो के समाधान के लिए विभिन्न विद्वानो ने अनेक स्थलो का सर्वेक्षण एव उत्खनन करवाया। प्रमुख उत्खनित स्थलो मे सठियॉव फाजिल नगर, छावनीटीला पडरौना तथा उस्मानपुर (वीर–भारी) आदि है। उल्लेखनीय है कि सभी स्थलो से उत्खनन के दौरान मौर्य, कुषाण तथा गुप्त काल की बहुत सी पुरासामग्रियॉ प्राप्त हुई लेकिन ऐसा कोई साक्ष्य नही प्राप्त हो सका, जिसके द्वारा पावा की समस्या का समाधान निकाला जा सके।

कुशीनगर जनपद मे शोधार्थी द्वारा वर्तमान मे किये गये पुरातात्विक सर्वेक्षण के फलस्वरूप जो स्थल प्रकाश मे आये है उनमे अधिकाश स्थल ऐसे है जो कई सस्कृतियो के पुरावशेष अपने मे समेटे हुए है, लेकिन कुछ स्थल ऐसे है जो दो या

एक ही सस्कृति से सम्बन्धित है। उल्लेखनीय है कि प्रारम्भिक ऐतिहासिक युगीन सस्कृति (एन0बी0पी0) से सम्बन्धित स्थल नदियो या बडे तालाबो के किनारे स्थित है। परवर्ती एन0 बी0 पी0 और कुषाण काल के अधिकाश स्थल नदियो से दूर तालाबो, पोखरो आदि के किनारे स्थित दिखायी देते है। कुषाण काल के बाद के स्थल आन्तरिक क्षेत्रो मे प्राय स्थित दिखायी पडते है जो सभवत जनसख्या के दबाव के कारण हुआ है।

कौशाम्बी के समीपवर्ती क्षेत्रो मे हुए पुरातात्विक अनुसधानो से जार्ज एरडसी ने यह निष्कर्ष निकाला कि गगा के मैदान मे 700 ई0 पूर्व के पहले के स्थल प्राय ग्रामीण स्वरूप के है और नदियो के तट पर ही स्थित है लेकिन 700 ई0 पूर्व के बाद राजनीतिक सत्ता के केन्द्र स्वरूप नगर स्थल मिलने लगते है। द्वितीय शताब्दी ई0 पूर्व के आते – आते आवासो की स्थिति विकसित अवस्था का द्योतन करने लगती है।

बडे आकार का नगरीय केन्द्र और उसकी परिधि मे, सामरिक महत्व के क्षेत्रो मे, उससे छोटे आकार के केन्द्र ग्राम्य क्षेत्रो मे कुछ छोटे–छोटे ग्रामो के रूप मे आवास। यह आवास व्यवस्था मौर्य, शुग और कुषाण कालो मे लगभग एक जैसी रही। ऐतिहासिक और आरम्भिक ऐतिहासिक स्थलो की अधिकता से प्रमाणित होता है कि इस काल मे जनपद अधिक सघनता से आबाद रहा। अधिकाश वर्तमान गॉवो मे इस युग की पुरासम्पदाये बिखरी है। इनके सरक्षण, सम्यक विवेचन, अकन तथा प्रकाशन के लिए जन जागरण की आवश्यकता है।

सन्दर्भ–सूची

मौलिक ग्रन्थ

<u>सस्कृत</u>

अमरकोश	अमर सिह, भाषा टीका रामस्वरूप, वेकटेश्वर प्रेस बम्बई, 1905
अर्थशास्त्र	कौटिल्य,स0 आर0 शामशास्त्री, मैसूर, 1919
अपराजितपृच्छा	भुवनदेव, गायकवाड ओरिएण्टल, बडौदा,1950
अष्ठाध्यायी	पाणिनी, स0 वासुदेवशरण अग्रवाल, मोतीलाल, बनारसी दास, बनारस
दिव्यावदान	स0 पी0 एल0 वैध, मिथिला विद्यापीठ, दरभगा,1959
पद्म पुराण	गुरूमण्डल ग्रन्थमाला स0 18, कलकत्ता,1957–59
ब्रह्म पुराण	वेकटेश्वर प्रेस बाम्बे, शक स0 1857
बृहतसहिता	बराहमिहिर, सरस्वती प्रेस कलकत्ता, 1880
बुद्धचरित	अश्वघोष, टीका सूर्यनरायण चौधरी, 2 वाल्यूम, बनारस, 1942
मनुस्मृति	गोपाल शास्त्री नेने (स0), वाराणसी, 1935
महाभारत	गीता प्रेस, गोरखपुर, 1956
महाकाव्य	पतजलि, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई 1935
मत्स्य पुराण	वेकटेश्वर प्रेस बम्बई, 1895
भागवत पुराण	गीता प्रेस, गोरखपुर, वि0 स0 2010
रघुवश	सीताराम चतुर्वेदी, कालिदास ग्रन्थावली, काशी, वि0 स0 2001 (द्वि0 स0)
रामायण	वाल्मिकी, नारायण स्वामी (स0) मद्रास 1933
लिगपुराण	वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई।
वायु पुराण	खेमराज जी, कृष्णदास, वेकटेश्वर स्ट्रीट प्रेस, कल्याण, बम्बई, 1810
वराह पुराण	(अनु0) अभिभूषण भट्टाचार्य, रामनगर, वाराणसी, 1923

विष्णु धर्मोत्तर पुराण प्रियबल शाह (स0), बडौदा, 1958

शतपथ ब्राह्मण मोती लाल शर्मा एव अन्य, राजस्थान वैदिक तत्व शोध सस्थान, जयपुर, 1958

शिव पुराण वेकटेश्वर, प्रेस, बम्बई 1965 वि0 स0

सस्कृत–इग्लिश डिक्शनरी मोनियर विलियम्स, मोतीलाल, बनारसी दास, जवाहर नगर दिल्ली, 1973

हर्षचरित बम्बई सस्करण, बम्बई।

हरिवश पुराण चित्रशाला प्रेस, पूना, 1936

प्राकृत–

कल्पसूत्र भद्रबाहु, विजयसूर्योदय सूरि, बारसासूल प्रकाशक समिति, सूरत, गुजरात, 1980

तीर्थवन्दन सग्रह (सम्पा0) डा0 विद्याधर जोहरापुरकर , जैन सस्कृति रक्षक सघ,सोलापुर प्र0 स0 1965

विविध तीर्थकल्प जिनप्रभसूरि, मुनि जिनविजय, सिधी जैन ग्रन्थमाला, ग0 10, शान्ति निकेतन, पश्चिम बगाल, 1934

पालि–

अगुत्तर निकाय प्रकाशन (मूल) स0 भिक्षु जगदीश काश्यप, बिहार राजकीय पालि मण्डल, महाविहार नालन्दा, पटना, 1960

जातक अट्ठकथा आनन्द कौसल्यायन, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1946

दीघनिकाय बौद्ध (हि0 अ0) राहुल साकृत्यायन एव जगदीश काश्यप, भारतीय विहार परिषद्, लखनऊ, द्वि0 स0 1919

दीपवश ओल्डेन वर्ग सस्करण

महावश श्रीधर वासुदेव, नवनालन्दा महाविहार, नालन्दा, पटना, 1971

मिलिन्दपन्हो मूल व हिन्दी टीका, वाराणसी, 1979।

मज्झिम निकाय अनु0, राहुल साकृत्यायन, महाबोधि सभा, सारनाथ, वाराणसी, प्र0 स0 1922

विनयपिटक (हि0 अ0) राहुल साकृत्यायन, महाबोधि सभा, सारनाथ, वाराणसी, 1935

सुतनिपात भाग 1–2 (मूल एव हि0 अनु0), भिक्षु धर्मरत्न, महाबोधि सभा, सारनाथ, वाराणसी, 1951

सयुक्त निकाय भिक्षु जगदीश काश्यप, भिक्षु धर्मरक्षित, महाबोधि सभा, सारनाथ, वाराणसी, 1954

सुमगल विलासिनी (प्र0 भाग) टीका दीघनिकाय, अट्ठकथा, प्रो0 महेश तिवारी, नवनालन्दा महाविकार, नालन्दा, पटना, 1974

सुत्तनिपात परायणवग्ग (हि0), महाबोधि सभा, सारनाथ, वाराणसी, 1951

आधुनिक ग्रन्थ–

अग्रवाल, डी0 पी0, 1984 *द आर्क्यालाजी आफ इण्डिया,* नई दिल्ली

अग्रवाल, वासुदेव शरण, 1966 *भारतीय कला,* वाराणसी

अवस्थी, रामाश्रय, 1966 *खजुराहो की देव प्रतिमाए,* आगरा

आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया एनुअल रिपोर्ट 1904–05, 1905–06, 1906–07, 1910–11, 1911–12,

इण्डियन आर्क्योलाजी ए रिव्यू 1962–63, 1973–74, 1981–82, 1982–83, 1984–85

इण्डियन एण्टीक्वेरी, 1902 वाल्यूम xxxi स0 सर रिचार्ड कारनेक टेम्पुल,एजुकेशन, सोसायटी प्रेस बम्बई

उपाध्याय, भरतसिह, 1961 *बुद्ध कालीन भारतीय भूगोल,* हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग (प्रथम सस्करण)

उपाध्याय, वासुदेव, 1972 *मूर्ति विज्ञान,* वाराणसी

एलेक्जेण्डर, इ0 वी0, 1881 — *स्टैटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टारिकल एकाउण्ट आफ नार्थ वेस्ट प्राविन्सेज,* गोरखपुर

कनिघम, ए0, 1924 — *एन्सियण्ट ज्यॉग्राफी आफ इण्डिया,* कलकत्ता।

1972 — *आर्क्यालाजिकल सर्वे आफ इण्डिया,* एनुअल रिपोर्ट, भाग 1, 1862–63–64–65 भाग, 18, 1875–76, 1876–77 भाग 22, 1877–78–79–80 (पुनर्मुद्रित) वाराणसी

कुक, डब्ल्यू0, 1896 — *द ट्राइब्स एण्ड कास्टस आफ द नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज एण्ड अवध,* वाल्यूम 1–4, कलकत्ता

1950 — आर्कियोलाजी इन इण्डिया, उ0 प्र0, शिक्षा विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली

काला, सतीशचद्र, 1950 — *टेराकोटा फिगरीन्स फ्रॉम कौशाम्बी,* इलाहाबाद

केमरिश, स्टेला, 1981 — *इण्डियन स्कल्पचर,* दिल्ली

कुमार स्वामी , 1929 — *शिल्परत्न, त्रिवेन्द्रम* सस्कृत सिरीज, त्रिवेन्द्रम

कुमार स्वामी, ए0 के0 1913 — *आर्ट्स एण्ड काफ्टस आफ इण्डिया एण्ड सीलोन,* लदन।

कुशवाहा, रमाकान्त, 1993 — *देवरिया जनपद का प्रतीकात्मक अध्ययन,* शोध प्रबन्ध, इलाहाबाद विश्व विद्यालय।

खेतान, भगवती प्रसाद, 1992 — *महावीर निर्वाण भूमि पावा, एक विमर्श,*

वाराणसी गिरी, कपिलदेव, 1970 — *महावीर की निर्वाण भूमि पावा एक विमर्श,* वाराणसी।

ग्रोवर, बी0 एल0 एण्ड यशपाल, 1990 — *आधुनिक भारत का इतिहास,* एक नवीन मूल्याकन, नई दिल्ली।

गाइल्स, एच0 ए0 (तृ0 स0) 1959, — *ट्रेवेल्स आफ फाहयान, रटलेज एण्ड केगन वाल लिमिटेड,* लन्दन

घोष, ए0, 1989 — *एन इन्साइक्लोपीडिया आफ इण्डियन आर्क्यालाजी,* इण्डियन कौसिल आफ हिस्टारिकल रिसर्च, नई दिल्ली।

चौधरी, बी0 एन0, 1969 — *बुद्धिस्ट सेण्टर्स इन एन्सियन्ट इण्डिया,* कलकत्ता।

चतुर्वेदी, शैलनाथ, 1985 — एडवास आफ विन्ध्यन नियोलिथिक एण्ड चैल्कोलिथिक कल्चर्स टू द हिमालयन तराई इक्सकैवेश एण्ड इक्सप्लोरेशन इन द सरयूपार रीजन आफ उ0 प्र0, *मैन एण्ड इनवायरमेण्ट* ।

जैन, हीरालाल, 1962 — *भारतीय सस्कृति मे जैन धर्म का योगदान,* भोपाल।

जेम्स लेगे, 1972 — *द ट्रेवेल्स आफ फाहयान,* दिल्ली

जे0 तकाकुसू, 1896 — *ए रेकार्ड आफ द बुद्धिस्ट रिलिजन,* आक्सफोर्ड, लन्दन ।

जायसवाल के0 पी0, 1978 — *हिन्दू पालिटी,* भाग 1, बगलौर प्रिटिग प्रेस पब्लिकेशन कम्पनी लिमिटेड, बगलौर , पचम सस्करण।

सी0, वी0, लिब्ज, 1841 — *जनरल आफ एशियाटिक सोसायटी* वैपिस्ट मिशन आफ बगाल प्रेस, कलकत्ता

जोशी, एन0 पी0, 1989 — *ब्रह्मैनिकल स्कल्पचर्स इन स्टेट म्यूजियम* लखनऊ, भाग–2

टर्नर, जी0, 1838 — *बुद्धिस्ट एनल्स,* जनरल आफ एशियाटिक सोसायटी न019, कलकत्ता।

मित्रा, देवला, 1971 — *बुद्धिस्ट मानुमेण्ट्स,* कलकत्ता

दे, नन्दलाल, 1990 — *द ज्योग्राफिकल डिक्शनरी आफ एन्सियन्ट एण्ड मेडिवल इण्डिया* (द्वितीय सस्करण) बाम्बे।

त्रिपाठी, आर0 एस0, 1937 — *हिस्ट्री आफ कन्नौज,* वाराणसी

1942 — *हिस्ट्री आफ एन्सियन्ट इण्डिया,* वाराणसी

दत्त, एन0 एण्ड वाजपेयी, के0 डी0, 1956 — *डेवलपमेण्ट आफ बुद्धिज्म इन उत्तर प्रदेश,* पब्लिकेशन ब्यूरो, उ0 प्र0 शासन लखनऊ,

धर्मरक्षित, भिक्षु,(बुद्धाब्द) 2493 — *कुशीनगर का इतिहास,* कुशीनगर

नगराज, मुनि, 1969 — *महावीर एव बुद्ध की सामयिकता,* आत्माराय एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली

नाहर, पूर्णचद्र,1927 — *जैन लेख सग्रह* भाग 3, कलकत्ता।

नाहटा, भवरलाल,1973 — *महातीर्थ पावापुरी (एक विश्लेषण)* जैन श्वेताम्बर सेवा समिति, कलकत्ता

नियोगी, आर0, 1959 — *द हिस्ट्री आफ गहडवाल डायनेस्टी,* कलकत्ता

ागर, मालती, 1989 — हन्टर गैदरर्स इन ऐन अग्रेरियन सेटिग द नाइनटीन्थ सेन्चुरी सिचुएशन इन दी गगा प्लेन्स, *मैन एण्ड इनवायरमेण्ट,* वाल्यूम 131

नेविल एच0 आर0 — *गोरखपुर गजेटियर,* वाल्यूम XXXI, द डिस्ट्रीक्ट जेटियर्स आफ द यूनाइटेड प्राविन्सेज आफ आगरा एण्ड अवध , गवर्नमेण्ट प्रिटिग प्रेस, इलाहाबाद।

नेशफील्ड, 1983 — *ब्रीफ रिव्यू आफ द कास्ट सिस्टम आफ द नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज एण्ड अवध ,* कलकत्ता

पार्जिटर, एफ0 ई0 — *पुराण टैक्टस आफ द डायनेस्टीज आफ द कलिएज,* आक्सफोर्ड

पाण्डेय, राजबली, 1946 — *गोरखपुर जनपद और उसकी क्षत्रिय जातियो का इतिहास,* गोरखपुर

पाण्डेय, गोविन्दचद, 1963 — *बौद्ध धर्म का विकास,* लखनऊ

पाण्डेय, रामप्रसाद, 1942 — *गोरखपुर जिले का इतिहास,* प्रयाग

पाण्डेय, जे0 एन0, 1997 — *पुरातत्व विमर्श,* इलाहाबाद

पूर्वांचल की पुरासम्पदा, 1979 — पुरातत्व विभाग, उ0 प्र0 राज्य सगठन, लखनऊ

प्रेमी, नाथूराम, 1956 — *जैन साहित्य और इतिहास* (द्वि0 स0) बम्बई

पाण्डेय, हरिनन्दन, 1919 — *द मल्लाज आफ पावा,* जर्नल आफ बिहार एण्ड उडीसा रिसर्च सोसायटी, वाल्यूम, पटना

पाटिल, डी0 आर0, 1957 — *कुशीनगर,* दिल्ली (प्र0 स0)

पार्जिटर, एफ0 ई0, 1962 — *एन्सियण्ट इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडीशन*, दिल्ली

फ्लीट, जे0 एफ0, 1888 — *इन्स्क्रिप्सन आफ द अर्ली गुप्ता किंग्स एण्ड देयर सक्सेसर, कार्पस इन्स्क्रिप्सन इण्डिकारम*, कलकत्ता।

फारूकी–मोहम्मद, अब्दुल गफूर, 1901 — *सजर–ए–शदाब, गोरखपुर*।

फाजिलनगर–सठियाव उत्खनन (सक्षिप्त परिचय)1979 — प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

फ्यूहरर, ए0, 1891 — *द मानुमेण्टल एण्टीक्विटी एण्ड इस्क्रिप्सन इन द नार्थ वेस्ट प्राविन्सेज एण्ड अवध*, दिल्ली से 1969 मे पुनर्मुद्रित।

बी0 सुब्बाराव, 1958 — *द पर्सनालिटी आफ इण्डिया* (द्वि0 स0) बडौदा।

बुद्धमित्र, भिक्षु, 1999 — *भगवान बुद्ध के समकालीन अनुयायी तथा बौद्ध केन्द्र* गोरखपुर

बील, सैमुअल, 1906 — *बुद्धिस्ट रिकार्ड आफ वेस्टर्न वर्ल्ड*, लन्दन

भण्डारकर, डी0 आर0 — लिस्ट आफ इन्स्क्रिप्सन्स इन नार्दर्न इण्डिया इन ब्राह्मी एण्ड इट्स डेरीवेटिव स्क्रिप्ट्स फाम एबाउट 200 ए0 सी0, *एपिग्राफिका इण्डिका*, वाल्यूम 19–23 ।

मललसेकर, जी0 पी0, 1938 — *डिक्शनरी आफ पालि प्रापर नेम्स*, जानमुरे, अलमार्टा स्ट्रीट, डब्लू, लदन

माण्टगोमरी, मार्टिन, एम0 आर0, 1976 — *हिस्ट्री एण्टीक्विटीज टोपोग्राफी एण्ड स्टैटिस्टिक्स आफ इस्टर्न इण्डिया,* वाल्यूम II, भागलपुर, गोरखपुर कास्मो पब्लिकेशन, दरियागज, दिल्ली।

मेहता, मोहनलाल, 1970 — *प्राकृत प्रापर नेम्स,* दो भाग, एल0 डी0 इन्स्टीटयूट, अहमदाबाद।

मोतीचद्र, 1953 — *सार्थवाद,* बिहार राष्ट्र भाषा परिषद् पटना।

मुखर्जी, जे0 एन0, 1956 — *द डेवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइक्नोग्राफी* कलकत्ता

मिश्र, इन्दूमती, 1972 — प्रतिमा विज्ञान, भोपाल

मजूमदार, आर0 सी0, 1951 — *द हिस्ट्री एण्ड कल्चर आफ द इण्डियन पिपुल* वैदिक एज वाल्यूम 1, बम्बई।

1964 — *एन्सियण्ट इण्डिया,* दिल्ली

मिश्र, वी0 डी0, 1977 — *सम ऐस्पेक्ट्स आफ इण्डियन आर्क्यालाजी,* इलाहाबाद

मिश्र, आर0 जी0, 1919 — *कसिया रेलिक्स,* द जरनल आफ द यूनाइटेड प्राविन्सेज, हिस्टाारिकल सोसायटी, लखनऊ

मिश्र, अवनीश चद्र, 1993 — *द स्टडी आफ द आर्कियोलाजी ऑफ देवरिया डिस्ट्रिक्ट ।*

मैकडोनेल, ए0 एण्ड कीथ ए0 बी0, 1958 — *वैदिक इडेक्स, ऑफ नेम्स एण्ड सब्जेक्टस,* 2 वाल्यूम, वाराणसी

मैक्रिण्डल, 1960 — *एन्सियण्ट इण्डिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई मेगास्थानीज एण्ड एरियन,* कलकत्ता।

मिश्र, योगेन्द्र, 1973 — श्रमण भगवान महावीर की वास्तविक निर्वाण भूमि पावा, *प्राचीन पावा,* गोरखपुर

याकोबी, हरमन, 1844 — सैक्रेड बुक ऑफ द ईस्ट वाल्यूम XXXI, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, वेयर हाउस लदन,

राय, उदय नारायण, 1965 — *प्राचीन भारत मे नगर और नगर जीवन,* इलाहाबाद।

राय, चौधरी, एच0 सी0, 1953 — *पालिटिकल हिस्ट्री ऑफ एन्सियण्ट इण्डिया,* कलकत्ता।

रीज डेविडस्, टी 0 डब्ल्यू, 1950 — *बुद्धिस्ट इण्डिया,* प्रथम भारतीय सस्करण, कलकत्ता।

राव, गोपीनाथ, 1966 — *एलिमेण्ट्स ऑफ हिन्दू आइक्नोग्राफी* वाल्यूम 2, पार्ट 1,2, मद्रास

राय, कृष्णदास, 2009 (वि0 स0) — *भारतीय मूर्तिकला,* काशी

ला, वी0 सी0, 1932 — *ज्याग्रफी आफ अर्ली बुद्धिज्म* केगनपालट्रेन्च ट्रबुनर एण्ड कम्पनी, लदन

1943 — *ट्राइब्स इन एन्सियण्ट इण्डिया* , पूना।

1953 — *हिस्टारिकल ज्योग्राफी आफ* ऐन्सियण्ट इण्डिया , पूना

लारी, अहमर — *मुख्तसीर तारीख गोरखपुर,* गोरखपुर

लाल, अगने , 1968 — *सस्कृत बौद्ध साहित्य मे भारतीय जीवन* लखनऊ

विजयेन्द्र सूरि, 1960 — *तीर्थंकर महावीर,* बम्बई।

विटले पाल एव अन्य स0 1978	*द हिस्टारिकल एटलस आफ द साउथ एशिया,* यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, शिकागो एण्ड लदन।
मिश्र, वी0 एन0, 1990	द कन्जर्स–ए–हटिग गैदरिंग कम्युनिटी आफ द गगा वैली, उ0 प्र0 *मैन एण्ड इन्वायरमेण्ट,* वाल्यूम 15 न0 2।
वाटर्स, थामस, 1904–05	*आन युवानच्वाग्स इन इण्डिया,* सम्पादित द्वारा टी0 डब्लू रीज डेविडस और एस0 डब्ल्यू0 बुसेल, दो खण्ड, लदन।
वैशाली अभिनदन ग्रन्थ, 1985	वैशाली (बिहार)
वर्मा ठाकुर प्रसाद एव अन्य (स0) 1987	*युग–युगीन सरयू पार* (गोरखपुर परिक्षेत्र का इतिहास) इतिहास सकलन समिति, वाराणसी
विकास पुस्तिका, 2001–2002	कुशीनगर
विकास के नियोजित कदम, 1996–97	पडरौना, सूचना एव जनसम्पर्क विभाग
वरूण, डी0 पी0, 1988 (पुनर्मुद्रित)	गजेटियर आफ इण्डिया, उत्तर प्रदेश , डिस्ट्रिक्ट देवरिया, इलाहाबाद
श्रीवास्तव, बलराम, (स0) 2021 वि0 स0	रूपमण्डन, वाराणसी
श्रीवास्तव, ए0 के0, 1972	फाइण्ड स्पॉट आफ कुषाण क्वायस, लखनऊ
श्रीवास्तव, के0 सी0, 1996	प्राचीन भारत का इतिहास, इलाहाबाद
शर्मा, जी0 आर0, बी0 डी0 मिश्र, डी0 मण्डल और जे0 एन0 पाल, 1980	*हिस्ट्री एण्ड आर्कियोलाजी,* वाल्यूम 1 न0 1 –2, प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव

	पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय,इलाहाबाद।
शर्मा, ब्रह्मदेव, 1954	*हमारे क्षेत्र के दो सिद्धपीठ,* अशोक प्रिटिग प्रेस, पडरौना।
शुक्ल , द्विजेन्द्रनाथ, 1956	*प्रतिमा विज्ञान,* लखनऊ
शास्त्री, नेमिनाथ, 1974	*तीर्थकर महावीर और उनकी देशना* दिगम्बर जैन विद्वतपरिषद्, सागर, म0 प्र0।
शर्मा, चन्द्रिका प्रसाद, 1998	*कुशीनगर का भौगोलिक परिदृश्य,* गोरखपुर
शर्मा, रामशरण, 1968	आस्पेक्टस आफ पोलिटिकल आइडियाज एण्ड इस्टीटयूशन्स इन एन्सियन्ट इण्डिया, वाराणसी।
शर्मा, आर0 के0 ,1980	द कल्चर्स एण्ड देयर टाइम्स, दिल्ली
शापेन्टियर, जे0, 1914	द डेट ऑफ महावीर, इण्डियन एन्टीक्वरी, वाल्यूम XLIII, बाम्बे।
सिह, सतीशचन्द्र, 1973	*चेन्जेज इन द कोर्स ऑफ रीवर एण्ड इट्स इफेक्ट्स आन द अरबन सेटलमेट इन द मिडिल गैगेज प्लेन,* नेशलन ज्योग्राफिकल सोसायटी आफ इण्डिया, बी0एच0यू0,वाराणसी।
स्मारिका, 2000	बुद्ध स्मृति पर्व, कुशीनगर
सरकार, एच0	*स्टडीज इन अर्ली बुद्धिस्ट आर्किटेक्चर आफ इण्डिया*
स्मिथ, वी0ए0, 1930	*हिस्ट्री आफ फाइन आर्ट इन इण्डिया एण्ड सीलोन,* आक्सफोर्ड।

सिह, अजीत, 1991 — *खजुराहो की शैव एव शाक्त प्रतिमाएँ,* वाराणसी

सरकार, डी0सी0,1965 — *सेकेक्ट इन्स्क्रिप्शन्स वियरिंग आन इण्डियन हिस्ट्री एण्ड सिविलाइजेशन,* कलकत्ता।

सरावगी, कन्हैयालाल, 1972 — पावा समीक्षा, अशोक प्रकाशन, छपरा (बिहार)।

साकृत्यायन, राहुल, 1949 (द्वि0स0) — *साहित्य निबन्धावली,* इलाहाबाद

सामाजार्थिक समीक्षा, 2001–2002 — जनपद कुशीनगर

साख्यिकीय पत्रिका, 2001 — जनपद कुशीनगर

सिन्हा, बी0पी0 — *द कम्प्रेहेन्सिव हिस्ट्री आफ बिहार*

सिह, कृपाशकर — *लैड यूज एण्ड न्यूट्रिशन इन पडरौना तहसील,* देवरिया (अप्रकाशित)

स्मिथ, वी0ए0, 1924 — *अर्ली हिस्ट्री आफ इण्डिया,* लन्दन (चतुर्थ सस्करण)

स्मिथ, वी0ए0, 1896 — *द रिमेन्स नियर कसिया, इन द गोरखपुर डस्ट्रिक्ट,* इलाहाबाद

सिन्हा, के0के0, 1959 — *एक्सकेवेशन ऐट श्रावस्ती*

हल्टज, ई0, 1969 — *कार्पस इन्स्क्रिप्शनम् इडिकारम्,* वाल्यूम1, इण्डोलाजिकल बुक हाउस वाराणसी।

हैवेल, इ0बी0, 1972 — *ए हैण्डबुक आफ द इण्डियन आर्ट,* वाराणसी

हेग, डब्लू, 1958 — *कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया,* वाल्यूम, 3, दिल्ली।

छायाचित्र संख्याः– 1. मुख्य स्तूप, कुशीनगर।

छायाचित्र संख्याः– 2. बुद्ध का महापरिनिर्वाण मंदिर, कुशीनगर।

छायाचित्र संख्याः— 3. कुशीनगर के खण्डहर का विहंगम दृश्य।

छायाचित्र संख्याः— 4. बुद्ध की भूमि,स्पर्श मुद्रा में प्रतिमा, कुशीनगर।

छायाचित्र संख्याः– 5. रामाभार स्तूप, कुशीनगर।

छायाचित्र संख्याः– 6. तीन स्तूप युक्त मिट्टी की मुहर (राजकीय बौद्ध संग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः– 7. डिजाइनदार ठप्पा (राजकीय बौद्ध संग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः– 8. ध्यानावस्थित बुद्ध की मुहर (राजकीय बौद्ध संग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः– 9. तीन ईंटों से निर्मित ध्यानी उपासक (राजकीय बौद्ध संग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः– 10. काले पत्थर की सिररहित भूमि स्पर्श मुद्रा में बुद्ध की प्रतिम (राजकीय बौद्ध संग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः— 11. हस्ति एवं अश्व की मृण्मूर्ति (राजकीय बौद्ध संग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः— 12. हारीति की मृण्मूर्ति (राजकीय बौद्ध संग्रहालय कुशीनगर के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः– 13. महापरिनिर्वाण विहार अभिलिखित मुहर (सौजन्य से, बुद्धमित्र)।

छायाचित्र संख्याः– 14. मुकुटबन्धन विहार अभिलिखित मिट्टी की मुहर जिसमें शीर्ष पर बुद्ध की जलती हुई चिता तथा प्रार्थनारत महाकश्यप को दिखाया गया है। (सौजन्य से, बुद्धमित्र)।

छायाचित्र संख्याः— 15. देवी की सेवा करते हुए दासियों की मृण्मूर्ति (सौजन्य से, बुद्धमित्र)।

छायाचित्र संख्याः— 16. मिट्टी के फलक पर बुद्ध के जन्म का दृश्य (उत्तर प्रदेश राज्य संग्रहालय, लखनऊ के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः– 17. सठियाँव से प्राप्त नारी की मृण्मूर्ति (प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व, विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः— 18. फाजिल नगर से प्राप्त अलंकरित मृण्मूर्तिया मूर्ति (प्राचीन इतिहास,संस्कृति एवं पुरातत्व, विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः— 19. ब्राह्मी में श्रेष्ठिग्रामाग्रहारस्य अंकित मिट्टी की मुहर, गुप्तकालीन (प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व, विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः—20. गुप्तकालीन अलंकृत ईंटें उस्मानपुर (प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व, विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः—21. शक, कुषाण तथा पह्लव कालीन मृण्मूर्तिया (प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व, विभाग, गोरखपुर विश्वविद्यालय के सौजन्य से)।

छायाचित्र संख्याः— 22. गंगुआ टीले का विहंगम दृश्य।

छायाचित्र संख्याः—23. काले प्रस्तर की उमा—माहेश्वर की आलिंगन मुद्राआ में प्रतिमा।

छायाचित्र संख्याः— 24. नवग्रह की खण्डित प्रस्तर प्रतिमा, शिव सरेया।

छायाचित्र संख्याः— 25. काले प्रस्तर की वामन मूर्ति शिव सरेया।

छायाचित्र संख्याः— 26. चतुर्भुजी विष्णु की वैकुण्ठ प्रतिमा, सरेयाँ।

छायाचित्र संख्याः— 27. मातृ—शिशु की प्रतिमा—. सरेयाँ।

छायाचित्र संख्याः— 28. काले पत्थर की सूर्य प्रतिमा, सियरहा।

छायाचित्र संख्याः— 29. एकमुखी शिवलिंग, प्रतिमा, सियरहाँ।

छायाचित्र संख्याः– 30. नृत्यरत चतुर्भुजी गणेश, सियरहाँ।

छायाचित्र संख्याः– 31. माहेश्वर की आलिंगन मुद्रा में प्रतिमा, पुरैना कटैया।

छायाचित्र संख्याः— 32. शिशु को दूध पिलाती स्त्री की प्रतिमा, पुरैना कटेया।

छायाचित्र संख्याः— 33. देवरिया वृत के स्तूपाकार, ईट निर्मित टीले का विहंगम दृश्य।

छायाचित्र संख्याः– 34. धारमढियाँ टीले का विहंगम दृश्य।

छायाचित्र संख्याः– 35. बालुए पत्थर से निर्मित षोडसभुजी गणेश प्रतिमा, उजारनाथ।

छायाचित्र संख्याः– 36. मंदिर में स्थापित चतुर्भुजी पार्वती की प्रतिमा, उजारनाथ।

छायाचित्र संख्याः– 37. अष्टभुजी विष्णु की प्रतिमा, सपही खास।

छायाचित्र संख्याः– 38. बलुआ पत्थर से निर्मित गुप्तयुगीन सूर्य की प्रतिमा, तुर्कपट्टी ।

छायाचित्र संख्याः– 39. काले पत्थर से निर्मित पाल युगीन सूर्य की प्रतिमा, तुर्कपट्टी।

छायाचित्र संख्याः— 40. सपही टड़वॉ से प्राप्त अरबी लेखयुक्त ताम्रसिक्के।

छायाचित्र संख्याः— 41. फाजिलनगर के टीले का विहंगम दृश्य।

छायाचित्र संख्याः– 42. सठियाँव टीले का विहंगम दृश्य।

छायाचित्र संख्याः– 43. खाँचेदार मिट्टी का लोढ़ा, नदवाँ।

छायाचित्र संख्याः— 44. अलंकृत लटकन, नदवाँ।

छायाचित्र संख्याः— 45. अलंकृत, दो कलशे नदवाँ।

छायाचित्र संख्याः— 46—51 नारी एवं पुरुष की विविध खण्डित मृण्मूर्तियाँ, नदवाँ।

46

47

48

49

50

51 (I)

51 (ii)

छायाचित्र संख्याः– 52. मृण्मूर्तिया के खण्डित पैर, नदवाँ।

छायाचित्र संख्याः– 53. बलुये पत्थर से निर्मित चामुण्डा देवी की प्रतिमा, बेईली।

छायाचित्र संख्याः– 54. अष्टपदीय वृत्ताकार स्तूप, धनहाँ।

छायाचित्र संख्याः– 55. काले पत्थर की ब्रह्म की मूर्ति, बकुलहर ।

छायाचित्र संख्याः– 56. उस्मानपुर (वीरभारी) के टीले का विहंगम दृश्य ।

छायाचित्र संख्याः— 57. ईंट निर्मित वर्गाकार स्तूप, सुमही बुजुर्ग।

छायाचित्र संख्याः— 58. सूर्य प्रतिमा, छहूँ ।

छायाचित्र संख्याः– 59. छः शिशुओं के साथ माँ वारा की प्रतिमा, छहूँ ।

छायाचित्र संख्याः–60. महापरिनिर्वाण स्तूप, कुशीनगर।

छायाचित्र संख्या.– 61. हत्थायुक्त कड़ाही, खिलौना गाड़ी, स्पिन्कलर पहियाँ, रस्सीछाप घड़े का टुकड़ा, बलडीह।

छायाचित्र संख्याः– 62. रस्सी के छाप युक्त मृद्‌भाण्ड, बलडीहा।

छायाचित्र संख्याः— 63. कैरिनेटेड हाड़ी, वड़गाँव ।

छायाचित्र संख्याः— 64. स्तूपाकार टीला, देवरहा।

छायाचित्र संख्याः– 65. वनमोर्चा से प्राप्त ईंटों से निर्मित चौड़ी दीवारें ।

छायाचित्र संख्याः– 66. पपउर टीले का विहंगम दृश्य ।